संजीवनी सीरीज

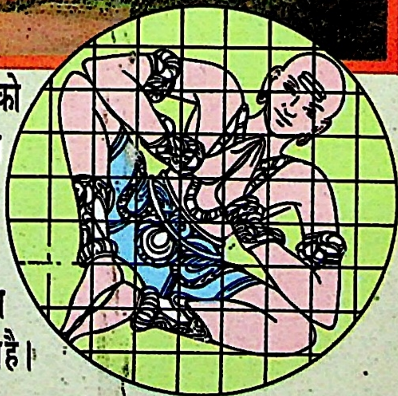
पं. शशि मोहन बहल

वास्तुशास्त्र

दोष कारण निवारण



भवन फैक्ट्री और दुकान को आरामदायक और दोष रहित बनाने की दिशा में एक प्रयास है—यह पुस्तक जिसमें वास्तु दोष निवारण की विधि सम्मिलित है।





वास्तु शास्त्र

दोष—कारण—निवारण

लेखक:
शशि मोहन बहल

भूमि-भवन के दोषों का ज्ञान कराने एवं उन्हें दूर करने के उपायों को बताने वाली अनमोल पुस्तक।

प्रकाशक
राधा पॉकेट बुक्स
मेरठ-250002

एकदन्तं महाकायं लम्बोदरगजानम्।
विघ्ननाशकरं देवं हेरम्बं प्रणमाम्यहम्।।



प्रथमम् वक्रतुण्डम् च एकदन्तम् द्वितीयकम्।
तृत्यम् कृष्ण पिंगाक्षम् च गज्रवृक्तम् चतुर्थकम्।
लम्बोदरम् पंचमम् च षष्टम् विकटमेव च।
सप्तमम् विघ्नराजम् च धूम्रवर्णम् च अष्टमम्।
नवमम् भालचन्द्रम् च दशमम् तु विनायकम्।
एकादशम् गणपतिम् द्वादशम् तु गजाननम्।

राधा पॉकेट बुक्स द्वारा प्रकाशित

वास्तुशास्त्र की पुस्तकें

- सम्पूर्ण वास्तुशास्त्र
- चाइनीज वास्तु विज्ञान फेंगशुई
- भारतीय वास्तुशास्त्र के सूत्र एवं सिद्धान्त
- आधुनिक युग में पौराणिक वास्तुशास्त्र
- फेंगशुई और भारतीय वास्तुशास्त्र
- वास्तुदर्पण एवं आंतरिक सज्जा
- भारतीय आवासीय एवं व्यावसायिक वास्तुशास्त्र
- वास्तुशास्त्र दोष, कारण, निवारण
- भारतीय वास्तु एवं भवन निर्माण
- वास्तुदोष और वास्तु शांति विधि
- गृह निर्माण और नींव भरने का विधान
- चाइनीज वास्तु और आप (रंगीन चित्र)
- 101 वास्तु टिप्स
- 101 वास्तुदोष निवारण टिप्स

- *पुस्तक :* वास्तु शास्त्र (दोष-कारण-निवारण)
- *प्रस्तुति :* शशि मोहन बहल
- *प्रकाशक :* राधा पॉकेट बुक्स,

  ए-152, देवलोक कॉलोनी, (स्पोर्ट्स कॉम्पलैक्स)

  दिल्ली रोड, मेरठ-250 002 (यू०पी०)

  फोन : (0121) 2518734, 2525386
- *कम्प्यूटरीकृत पृष्ठसज्जा :* सैन्ट्रो ग्राफिक्स, मेरठ।
- *मुद्रक :* न्यू रिषभ ऑफसैट प्रिन्टर्स, मेरठ।

लेखक के डेस्क से.......

प्रिय पाठकों! आज के परिवेश में जहां व्यक्तियों की आकांक्षायें दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं वहीं अपनी पुरानी संस्कृति, आचार संहिता दूर होती जा रही है। इधर कुछ समय से लोगों को वास्तु शास्त्र की ओर बढ़ते देखकर लगता है लोगों को अपनी संस्कृति का स्मरण हो आया है। अपने ऋर्षियों, महर्षियों द्वारा बतलाये गये सिद्धान्त कितने प्रभावशाली हैं आज इसे सिद्ध करने की कोई आवश्यकता नहीं है। आप स्वयं देखें ज्योतिष जिसे केवल शास्त्र माना जाता रहा है आज विज्ञान की श्रेणी प्राप्त कर चुका है। प्रायः कुछ तार्किक व्यक्तियों को प्रश्न पूछते पाया जाता है कि वास्तु शास्त्र आज से पहले कहां था? जब यह पहले नहीं था, तो फिर आया कहां से? वास्तु शास्त्र का ज्ञान और विकास इन्सान की सभ्यता के साथ ही प्रारम्भ हुआ। हमारे यहां आदिग्रन्थ वेदों को माना जाता है और वास्तु के विषय में अथर्ववेद में इसका उल्लेख मिलता है इसके अतिरिक्त अग्निपुराण, नारद संहिता, महाभारत और रामायण तक में इसका विवरण देखने को मिलता है। वास्तु शास्त्र पर अनेक ग्रन्थ उपलब्ध है इसलिए हम यह नहीं कह सकते कि वास्तु शास्त्र का चलन आज से है, बल्कि यह वैदिक काल से ही चला आ रहा है। अन्तर केवल इतना रहा कि इस विज्ञान का प्रचार-प्रसार राजा-महाराजाओं, सामन्तों अथवा बुद्धिजीवियों तक ही रहा या रखा गया इसे साधारण लोगों तक नहीं लाया गया। इसका कारण शिक्षा, धन आदि का अभाव कह सकते हैं जो यह जनसाधारण तक उपलब्ध नहीं था। पुराने समय के बने किले, दुर्गों, महलों एवं मन्दिरों आदि में वास्तु शास्त्र का उपयोग किया गया था।

प्रत्येक व्यक्ति के विचार विविधता-पसन्द होते हैं तथा नये-नये तथ्यों एवं प्रयोगों की तरफ आकर्षित होते रहते हैं। अतः अपनी पसन्द के अनुरूप नये-नये भवन नये-नये प्रकार से वह बनाता रहता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में एक भव्य भवन की इच्छा रखता है। अपनी इस इच्छा को पूरी करने के लिये अपने घोर परिश्रम की कमाई को भवन-निर्माण एवं उसके रख-रखाव पर व्यय करता है। यह कहना भी अतिश्योक्ति नहीं होगी कि अपने जीवन की कमाई का बहुत बड़ा भाग व्यक्ति अपने भवन-निर्माण पर व्यय करता है। अपनी सन्तानों के समान प्यार अपने स्वयं के द्वारा निर्मित भवन से करने लगता है। कई बार तो ऐसा भी अनुभव में आता है कि वृद्ध माता-पिता अपनी सन्तान के पास अन्यत्र शहर में रहना स्वीकार नहीं करते वह अपने स्वयं निर्मित भवन में ही रहना अधिक पसन्द करते हैं। अतः हम यह भी कह सकते हैं कि मनुष्य ईंट-पत्थर सीमेन्ट से निर्मित निर्जीव वस्तु को पुत्रवत् प्यार करते हैं। आखिर इस निर्जीव वस्तु से इतना लगाव क्यों होता है? क्या केवल इसलिये कि उसमें उसकी खून-पसीने की

कमाई लगी हुई है? नहीं केवल यही कारण नहीं हो सकता। मेरे निजी विचार में इसका प्रमुख कारण है इससे जुड़ी स्मृतियाँ। स्मृतियाँ मनुष्य का कभी पीछा नहीं छोड़ती हैं। सुखद् स्मृतियों को मनुष्य सदैव याद रखना चाहता है, दु:खद स्मृतियों को वह भूलना चाहता है। भावना मनुष्य की अनेक स्मृतियों का खजाना है। भवन क्या कुछ नहीं देता जो उसका पुत्र देता है। कभी सुख देता है, कभी दु:ख भी देता है। सर्दी-गर्मी से बचाता है, तो कभी आय का भी स्रोत बनता है।

यह सत्य है प्राचीन वास्तु शास्त्र का महत्व आधुनिक युग में और अधिक बढ़ा है, क्योंकि आज भी यह सटीक है। जब-जब हमने वास्तु शास्त्र के सिद्धान्तों की अवहेलना की है तब-तब जीवन में दु:ख और अशान्ति का सामना करना पड़ा है। वर्तमान समय में प्राचीन शास्त्रों का लुप्त होना और इसकी विस्तृत जानकारी का न होना अशांति का एक बड़ा कारण है। किसी भी भवन का निर्माण करने से पहले वास्तु शास्त्र के नियमों को ध्यान में रखकर ही भवन का निर्माण करें। उदाहरण के लिए जिस स्थान पर भवन बनाना हो, वहां कोहनी से कनिष्ठका अंगुली तक के बराबर लम्बाई x चौड़ाई x और गहराई का एक गड्ढा खोद लें। फिर उस खोदी हुई मिट्टी को उसी गड्ढे से भर दें। अगर गड्ढ़ा भरने से मिट्टी शेष बच जाए तो उस स्थान पर भवन बनाकर रहने पर सम्पत्ति की वृद्धि होती है और अगर मिट्टी कम हो जाए तो वहां रहने से धन की हानि होती है। यदि सारी मिट्टी भर जाए, न कम हो न शेष बचे तो फल साधारण समझना चाहिए।

वास्तु शास्त्र के पीछे एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण छिपा है। इसमें सूर्य की किरणों, पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र तथा भौगोलिक स्थिति का ध्यान किसी भी निर्माण कार्य से पूर्व रखा जाता है। निर्माण चाहे झोंपड़ी का हो या फिर किसी शानदार भवन का, उद्देश्य यही होता है कि विभिन्न दुष्प्रभाव पैदा करने वाली शक्तियों को कैसे दूर किया जाए, जिससे कि व्यक्ति पर दैहिक सु:प्रभाव अधिकाधिक हो। अगर निर्माण कार्य होना है तो यही परामर्श दिया जाएगा कि वह वास्तु शास्त्र के नियमों के अनुकूल हो, परन्तु अगर निर्माण कार्य सम्पन्न हो चुका है तो उसके वास्तुदोष निवारण हेतु यथासम्भव उपाय अवश्य कर लेने चाहिएं, अन्यथा और कुछ नहीं तो कम से कम चित्त की शान्ति तो कभी नहीं मिल पाएगी।

इसी प्रकार व्यावसायिक स्थल के चयन में वास्तु शास्त्र की एक निश्चित भूमिका है। अगर व्यावसायिक स्थान की भूमि, दिशा तथा अन्य वातावरण वास्तु शास्त्र के नियमों के अनुकूल है तो लगातार सफलता मिलती जाती है अथवा यूं कहें कि अधिक परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। लेकिन वास्तु शास्त्र के अनुकूल स्थान उपलब्ध होना आज कोई सरल बात नहीं है। महानगरों की तो बात ही क्या, छोटे नगरों तक में उपयुक्त स्थल की खोज करना मुश्किल है। अगर आपको भाग्य से ऐसा

स्थल मिल भी जाता है और वह आवादी से कुछ हटकर है तो यह क्या गारन्टी है कि वहां तक ग्राहक पहुंच भी सकेगा? परन्तु यह सोचकर न तो वास्तु शास्त्र के नियमों से इन्कार किया जा सकता है और न ही उनका ठीक से पालन किया जा सकता है। फिर भी समझौते की प्रक्रिया को अपनाते हुए जितना भी सम्भव हो सके वास्तु शास्त्र के नियमों का अधिकतम पालन किया जाना चाहिए। मल्टी स्टोरी भवन अथवा व्यावसायिक कॉम्पलैक्स मे यह परेशानी सर्वाधिक देखने को मिलेगी।

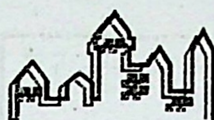
मैं शोधकर्त्ता हूं। ज्योतिष, तंत्र-मंत्र, वास्तु शास्त्र आदि विद्याओं का आकलन इसीलिए वैज्ञानिक परिवेश में ही करता हूं। जो पाठक मुझे नियमित पढ़ रहे हैं, यह अवश्य स्वीकारेंगे कि मेरे कथ्य प्रामाणिक हैं और समय-समय पर पूर्णतया प्रयोगानुकूल सिद्ध हुए हैं।

प्रिय पाठकों! अंत में मकान-दुकान फैक्टरी आदि में सूक्ष्म रूप से विद्यमान वास्तु देवता की अनुकूलता प्राप्त करने और प्रतिकूलता दूर करने के लिए वास्तुपुरुष की ऋग्वेद की ऋचा के माध्यम से वन्दना करके मैं लेखकीय को सम्पन्न करता हूं।

ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीहि अस्मान्,
स्वावेशो अनमीवो भवा नः।
यत्त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व,
शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे।

तान्त्रिक बहल
"तंत्र सबके लिए मिशन"
डी-4, राधापुरी, कृष्ण नगर,
(जमुनापार), देहली-110051.

अनुक्रमणिका



वास्तु शास्त्र

आवास प्रत्येक जीवधारी की मूल आवश्यकता है। हर इन्सान का सपना होता है कि उसका भी एक सुन्दर-सा घर हो, जिसमें वह दिन भर की दौड़-धूप, परिश्रम आदि से निवृत्त होकर शाम को वापस आकर आश्रय ले सकें, आराम कर सके।

प्रकृति की समस्त जीवधारियों में मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है, अत: उसकी श्रेष्ठता को देखते हुए उसके रहने का स्थान भी श्रेष्ठ होना आवश्यक है।

कोई भी मनुष्य नहीं चाहता होगा कि उसका अपना घर निम्नकोटि का हो। मनुष्य चाहे जिस वर्ग का हो, उसकी मनोकामना यही रहती है कि वह अच्छे-से-अच्छा मकान बनाकर रहे, जिससे उसकी समाज में इज्जत हो।

अपनी आवश्यकता के अनुरूप कुछ लोग जमीन खरीदकर मकान बनाते हैं, तो कुछ लोग बना-बनाया मकान खरीदना पसन्द करते हैं, ताकि उसके निर्माण-कार्य में लगने वाला समय बच जाये।

लेकिन जो भवन हम अपनी इच्छा के अनुरूप बनवाना चाहते हैं, उसके लिए आवश्यक है कि सर्वप्रथम शास्त्र-सम्मत विधि से भूमि-परिक्षण कराकर जमीन खरीदें तथा शास्त्रीय विधि के अनुसार ही उस पर भवन खड़ा करें। भवन बनाते समय हमें 'वास्तु शास्त्र' के नियमों का पालन करना चाहिए।

वास्तु शास्त्र का अर्थ :

वास्तु शब्द 'वस्तु' से बना है। वस्तु का अर्थ 'जो है' होता है, अर्थात् जिसकी सत्ता है, वही वस्तु है। वस्तु से सम्बन्धित शास्त्र ही वास्तु शास्त्र कहलाता है।

वास्तु शास्त्र कोई आधुनिक विषय नहीं बल्कि इसका महत्व युगों-युगों से चला आ रहा है। वास्तु शास्त्र के अन्तर्गत भूमि का आकार-प्रकार, बनने वाले भवन की दिशा, भूमि की जाँच तथा शोधन जैसी बहुत-सी बातें आती हैं। कहा जाता है कि सतयुग में एक विशाल देहधारी प्राणी ने जन्म लिया। देवलोक के सभी देवता व देवराज इन्द्र इस प्राणी के विषय में विशेष रूप से चिन्तित थे, क्योंकि उसका आकार निरन्तर बढ़ता ही जा रहा था। उसका आकार इतना बढ़ चुका था कि उसे देवलोक में रखना एक गम्भीर समस्या बन चुकी थी।

उपरोक्त समस्या को ध्यान में रखते हुए उन्होंने उसे पकड़ा तथा उसका सिर

पृथ्वी की ओर लाते हुए भूमि पर गाड़ लिया। उस समय इसका सिर उत्तर-पूर्व (ईशान) दिशा में तथा पैर दक्षिण-पश्चिम (नैर्ऋत्य) दिशा में थे। ब्रह्माजी ने इस विशाल देहधारी को 'वास्तु-पुरुष' के नाम से सम्बोधित किया। प्रस्तुत कथा से निश्चयात्मक रूप से यह आशय निकाला जा सकता है कि जैसे-जैसे इस पृथ्वी पर मनुष्य की जनसंख्या में वृद्धि होती जायेगी वैसे-वैसे ही इस वास्तु-पुरुष का रूप भी बढ़ता चला जाएगा। उसका इस पृथ्वी पर कोई आदि व अन्त नहीं है। आज पूरे संसार में गगनचुम्बी इमारतों की होड़ बढ़ती जा रही है फिर भी लोगों के लिए

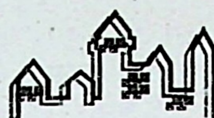


वास्तु-पुरुष

आवास की समस्या बनी हुई है। लाखों मकान प्रतिदिन बनते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि 'वास्तु-पुरुष' का आकार बढ़ता ही जा रहा है।

उपरोक्त समस्याओं की पूर्ति को ध्यान में रखते हुए ही भगवान विश्वकर्मा ने सर्वप्रथम भवन के चित्रांकन व निर्माण विधि की जानकारी दी, इसी विद्या को वास्तु शास्त्र अथवा वास्तुकला की संज्ञा प्रदान की गयी।





भूखण्डों के आकार

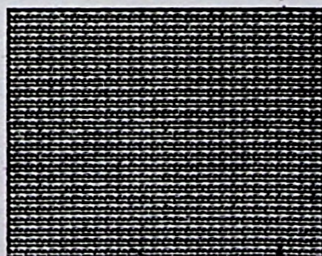
शुभ-अशुभ फल विचार

बढ़ती मँहगाई के जमाने में, जबकि इन्सान की आवश्यकताएँ बढ़ती जा रही हैं, मकान बनाना एक बड़ी समस्या हो गयी है। अपना मकान हो, यह सपना हर इन्सान का होता है। इन्सान गरीब हो या अमीर अपने-अपने ढंग से मकान का सपना देखता है। वह सतत् प्रयत्नों के बाद अपनी हैसियत के अनुसार मकान के लिए जमीन खरीद पाता है। जमीन खरीद लेना ही एकमात्र मकान बनाने का विकल्प नहीं होता बल्कि उस जमीन के मामले में यह देखना भी आवश्यक होता है कि उसका आकार-प्रकार उसके लिए शुभ और फलदायक होगा या नहीं। लोगों को कहते सुना जाता है कि उसे जमीन फल नहीं रही है, जिसका सीधा-सादा अर्थ होता है कि वह उसके लिए शुभ नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि वह दलालों के माध्यम से बिना किसी शास्त्रीय परीक्षण के भूमि खरीद लेता है। इसलिये प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह भूमि खरीदने तथा गृह-निर्माण से पूर्व किसी विद्वान् वास्तु शास्त्री से सम्पर्क करे तथा ठीक प्रकार से यह पता लगाये कि वह भूमि उसके तथा उसके परिवार के लिये शुभ है अथवा अशुभ

प्रत्येक भूस्वामी को अपनी आवश्यकता के अनुसार छोटे-बड़े तथा विभिन्न आकारों वाले भूखण्डों की आवश्यकता होती है। मकान बनवाने के लिये विभिन्न प्रकार के भूखण्ड हैं, जो निम्न प्रकार से हैं—

(1) आयताकार भूखण्ड :

इस प्रकार के भूखण्ड की लम्बाई की दोनों भुजायें समान होती हैं तथा चौड़ाई की दोनों भुजायें लम्बाई से छोटी होती हैं, किन्तु दोनों भुजायें आमने-सामने से समान होती हैं। इसके चारों कोण समान होते हैं।



आयताकार भूखण्ड

ऐसा माना जाता है कि इस प्रकार के भूखण्ड पर रहने वाले व्यक्तियों का सम्पूर्ण जीवन सुख तथा शान्ति से व्यतीत

होता है। इस प्रकार के भूखण्ड पर बनने वाले मकान सुन्दर तथा सुविधायुक्त बन सकते हैं। सामने वाले भाग में छोटा-सा बगीचा अथवा किचन गार्डन बनाये जा सकते हैं तथा पीछे के भाग में पशुशाला अथवा सर्वेन्ट क्वार्ट्र्स बनाये जा सकते हैं। ऐसे भूखण्ड पर सभी कार्य व्यक्ति के लिये फ़लदायक होते हैं।

(2) नलाकार भूखण्ड :

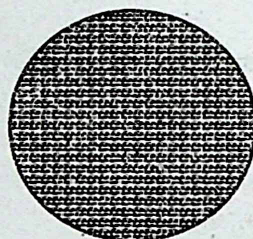
ऐसे भूखण्ड जिसके चारों कोण समकोण हों तथा भूखण्ड की लम्बाई-चौड़ाई के दोगुने से भी अधिक हो, नलाकार भूखण्ड के नाम से जाने जाते हैं।



नलाकार भूखण्ड

(3) वृत्ताकार भूखण्ड :

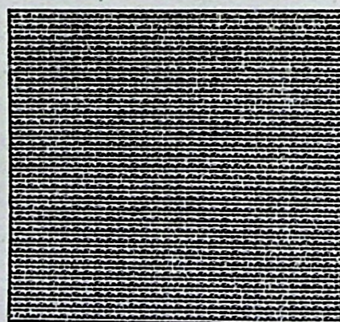
जिस भूखण्ड का आकार गोल होता है उसे वृत्ताकार भूखण्ड कहते हैं। यह भूमि चारों ओर से धन-सम्पदा तथा सुख-वैभव को अपनी ओर खींचती है। यह इस भूमि की सबसे बड़ी विशेषता होती है। इस प्रकार के भूखण्ड में रहने से धन-धान्य तथा सुख-सम्पदा में वृद्धि होती है। आमदनी के साधन विकसित होते हैं। चारों ओर फुलवारी तथा बाग-बगीचे बनाने के लिये पर्याप्त स्थान मिल जाता है।



वृत्ताकार भूखण्ड

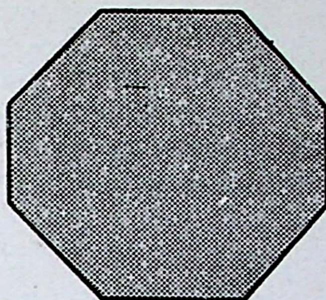
(4) वर्गाकार भूखण्ड :

जिस भूखण्ड के चारों कोण तथा लम्बाई-चौड़ाई समान हो उसे वर्गाकार भूखण्ड कहा जाता है। इस भूमि पर बहुत सुन्दर मकान बन सकता है। यह भूमि भवन-निर्माण के लिये काफी शुभ होती है। ऐसी भूमि पर मकान बनवाने से दु:ख-दरिद्रता का नाश होता है क्योंकि इस पर लक्ष्मी का सदैव वास होता है। रोजगार की दृष्टि से भी यह भूखण्ड काफी उन्नति देने वाला माना जाता है।



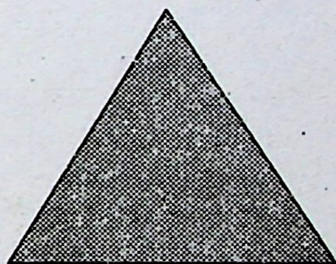
वर्गाकार भूखण्ड

(5) चक्राकार भूखण्ड :


चक्राकार भूखण्ड

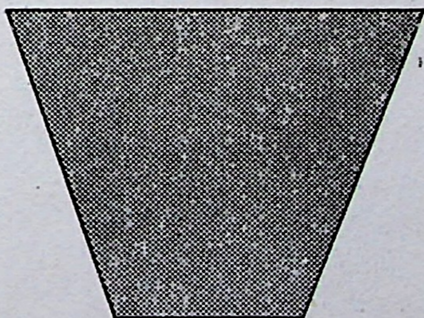
यह भूमि चक्र के आकार की होती है। इसलिये इसे चक्राकार भूखण्ड कहा जाता है। यह भूमि गृह-स्वामी तथा भूखण्ड-स्वामी के लिये पूर्णत: अशुभ मानी जाती है तथा अनिष्टकारी होती है। इसमें रहने से दु:ख तथा दरिद्रता का साम्राज्य बढ़ता है। रोग तथा विकार बने रहते हैं, पास का धन चला जाता है। ऐसी भूमि पर भवन बनवाने में चक्र के कोनों की बहुत सारी जमीन बेकार चली जाती है। इसलिये ऐसे भूखण्ड पर भवन बनवाने का विचार त्याग देना चाहिये।

(6) त्रिकोणाकार भूखण्ड :


त्रिकोणाकार भूखण्ड

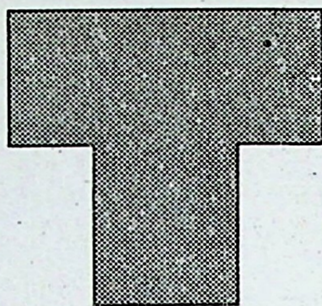
ऐसा भूखण्ड त्रिभुजाकार अथवा त्रिकोणाकार होता है इसलिये इसे त्रिकोणाकार भूखण्ड कहा जाता है। इस प्रकार की भूमि पर वास करना भूस्वामी अथवा गृह-स्वामी के लिये अशुभ होता है। गृह-स्वामी को अनेक संकटों का सामना करना पड़ सकता है; जैसे राजभय तथा कानूनी संकट। इस प्रकार के भूखण्ड की एक ओर की भूमि प्राय: नक्शों के माफिक नहीं बैठती। यहाँ पर शौचालय, बाहरी स्टोर, पानी की टंकी आदि के लिये प्रयोग हो सकता है। जहाँ तक सम्भव हो सके, इस तरह के भूखण्ड पर भवन बनाने या खरीदने का विचार छोड़ देना ही ठीक होता है।

(7) तबलाकार भूखण्ड :


तबलाकार भूखण्ड

इस प्रकार के भूखण्ड आगे से खुले पीछे से संकरे होते हैं। इस तरह की भूमि पर बने भवन में रहने वाले लोगों की दशा दिखावटी तौर पर तो सम्पन्न होती है किन्तु अन्दर से वह खोखली रहती है। ऐसे भूखण्ड का योग अशुभकारी होता है। वक्त-जरूरत भूखण्ड-स्वामी को कर्ज लेना पड़ता है। इस प्रकार का भूखण्ड सर्वथा त्याज्य होता है।

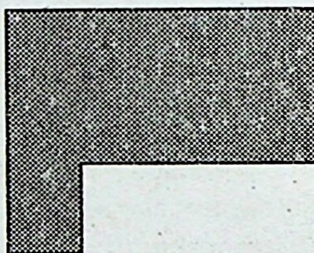
(8) टी-शेप भूखण्ड :



टी-शेप भूखण्ड

अंग्रेजी वर्णमाला के अक्षर "T" का आभास कराने वाले भूखण्ड इस श्रेणी में आते हैं। इसके सामने का भाग चौड़ा तथा भीतरी भाग संकरा पाया जाता है। इस कारण यह भूखण्ड किसी भी प्रकार से फलदायक सिद्ध नहीं हो सकता। इस प्रकार के आकार के भूखण्ड पर बनने वाले भवन का स्वामी कभी भी स्वस्थ नहीं रह सकता। वह हर समय किसी न किसी कष्ट से पीड़ित रहता है। वास्तु शास्त्र के नियम के अनुसार ऐसे भूखण्ड को कभी भी नहीं खरीदना चाहिये। ऐसे भूखण्ड सदैव अशुभ होते हैं।

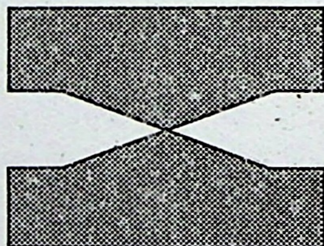
(9) काकमुखी भूखण्ड :



काकमुखी भूखण्ड

इस प्रकार का भूखण्ड कौए के मुख के समान होता है; इसलिये इसे काकमुखी भूखण्ड कहा जाता है। ऐसा भूखण्ड आगे की ओर संकरा तथा पार्श्व भाग में चौड़ा रहता है। इस प्रकार के भूखण्ड में निवास करने वाला प्राणी सुखी तथा सम्पन्न रहता है। यह अत्यन्त शुभ तथा लाभप्रद माना जाता है।

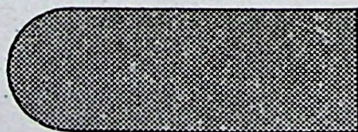
(10) दोहरा रथाकार भूखण्ड :



दोहरा रथाकार भूखण्ड

भवन-निर्माण की दृष्टि से इस प्रकार का भूखण्ड अच्छा नहीं माना जाता। वास्तु शास्त्र के नियमानुसार ऐसा भूखण्ड गृह-स्वामी को इधर-उधर दौड़ाने वाला होता है। उसे एक स्थान पर स्थायी सुख नहीं मिल पाता। यह अशुभ सूचक होता है। इस प्रकार का भूखण्ड कभी भी नहीं खरीदना चाहिये।

(11) मूसलाकार भूखण्ड :



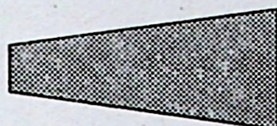
मूसलाकार भूखण्ड

मूसल के आकार वाले भूखण्ड को मूसलाकार भूखण्ड कहते हैं। इस प्रकार का भूखण्ड एक ओर से आधे गोले की भाँति होकर फिर आगे से लम्बवत् होता है। इस प्रकार के भूखण्ड में रहने वाले का आधा योग अर्द्धचन्द्राकार की भाँति रहता

है। इसलिये सिवाय कष्ट के कभी सम्पन्नता नहीं आती।

इस तरह के भूखण्ड पर बने भवन में रहने वाले लोगों के यहाँ धन तथा जन दोनों की हानि होती रहती है। अगर व्यक्ति पहले से सम्पन्न है, तो भी इस भूखण्ड में रहने से उसकी सम्पन्नता नष्ट हो जाती है। भवन-निर्माण शास्त्रियों के अनुसार इस प्रकार के भूखण्ड गृह-स्वामी के लिये सदैव त्याज्य हैं।

(12) चिमटाकार भूखण्ड :



चिमटाकार भूखण्ड

ऐसा भूखण्ड जो एक ओर से छोटा तथा दूसरी ओर से बड़ा हो, यानी की चिमटे के आकार का हो चिमटाकार भूखण्ड कहलाता है। इस पर भवन बनवाना कभी भी शुभकारी नहीं हो सकता। इसका योग पूर्ण रूप से अनिष्टकारी होता है। वास्तु शास्त्र के नियमानुसार ऐसा भूखण्ड सर्वथा त्याज्य होता है।

(13) कुम्भाकार भूखण्ड :



कुम्भाकार भूखण्ड

ऐसे भूखण्ड का आकार घड़े की आधी आकृति जैसा पाया जाता है। ऐसे भूखण्ड का आकार आगे से काफी संकरा तथा पीछे से काफी फैला तथा दायीं और बायीं तरफ से धनुषाकार होता है। ऐसे भूखण्ड पर निर्मित भवनों में रहने वाले चर्म तथा कुष्ठ रोग के शिकार होते देखे गये हैं। अत: ऐसे भूखण्ड भी वास्तु शास्त्र के नियमानुसार ठीक नहीं हैं।

(14) सिंह-मुखाकार भूखण्ड :



सिंह-मुखाकार भूखण्ड

ऐसे भूखण्ड का आकार शेर के मुख की भाँति होता है। इस प्रकार के भूखण्ड की चौड़ाई सामने से अधिक तथा पीछे से कम होती है। इस प्रकार के भूखण्ड बहुत ही उत्तम तथा शुभ होते हैं। विशेष रूप से व्यापार भी निर्बाध गति से आगे बढ़ता है। मनचाहा फल प्राप्त होता है।

(15) अर्द्धचन्द्राकार भूखण्ड :



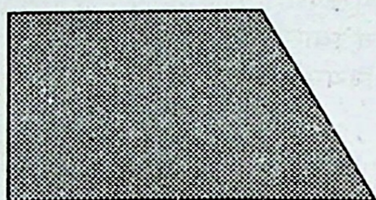
अर्द्धचन्द्राकार भूखण्ड

जिस भूखण्ड का आकार आधे गोले के समान होता है उसे अर्द्धचन्द्राकार भूखण्ड कहा जाता है। अर्द्धचन्द्राकार भूखण्ड इसलिये रहने योग्य नहीं है कि उसका आधा प्रभाव तो वृत्ताकार भूमि जैसा होता है, लेकिन आधा गोला गायब

होने के कारण जो कुछ उपलब्धि होती है वह बलपूर्वक छीन ली जाती है। इस प्रकार की भूमि पर बने मकान में जान-मान की हानि की सदैव आशंका बनी रहती है। अतः ऐसे भूखण्ड पर मकान नहीं बनवाना चाहिये।

(16) विषमबाहु भूखण्ड :

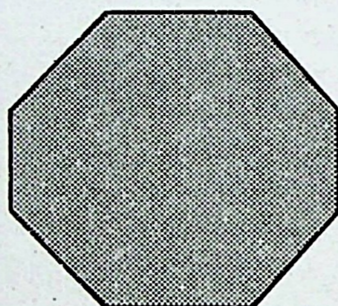
भूमि का ऐसा टुकड़ा, जिसकी एक भुजा टेढ़ी होती है विषमबाहु भूखण्ड कहलाता है। ऐसी भूमि पर निर्मित भवन में वास करने से मन को न तो शान्ति मिलती है तथा न ही स्वास्थ्य ठीक रहता है। दुःख-दरिद्रता का हर समय साम्राज्य बना रहता है।



विषमबाहु भूखण्ड

(17) अष्टकोण भूखण्ड :

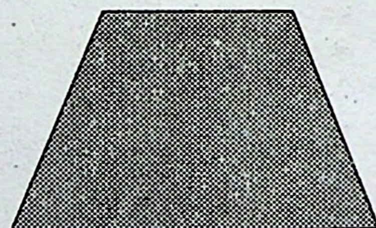
ऐसा भूखण्ड जो आठ कोणों से घिरा हो अष्टकोण भूखण्ड कहलाता है। ऐसे भूखण्ड पर निर्मित भवन में वास करने से मन में सुख-शान्ति की उपलब्धि होती है। इस भूखण्ड के गुण षट्कोणाकार भूखण्ड के गुणों से कुछ अधिक बढ़कर होते हैं।



अष्टकोण भूखण्ड

(18) गोमुखाकार भूखण्ड :

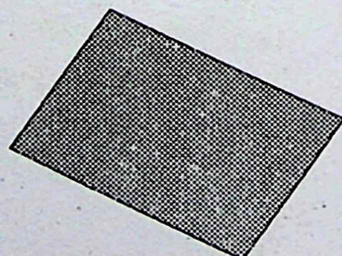
गाय के मुख के समान आकार वाला भूखण्ड गोमुखाकार भूखण्ड के नाम से जाना जाता है। ऐसा भूखण्ड सामने से कम चौड़ा तथा पीछे से अधिक चौड़ा होता है। ऐसी भूमि पर भवन का निर्माण रहने के लिये तो मंगलमय, लेकिन व्यावसायिक दृष्टि से हानिकारक सिद्ध होता है। चूँकि गाय घर के लिये शुभ जीव है इसलिये निवास हेतु शुभ होता है जबकि उसी भूमि पर व्यापार करने पर अमंगल होता है।



गोमुखाकार भूखण्ड

(19) चतुष्कोण भूखण्ड :

ऐसा भूखण्ड जिसके आमने-सामने के कोण समान हों चतुष्कोण भूखण्ड कहलाता है। ऐसी भूमि पर रहने से गृह-कलह का भय नहीं रहता, सुख एवं शान्ति मिलती है। लोगों का जीवन आनन्दमय गुजरता है तथा मुकदमों की उलझनें नहीं होतीं।



चतुष्कोणाकार भूखण्ड

(20) अण्डाकार भूखण्ड :

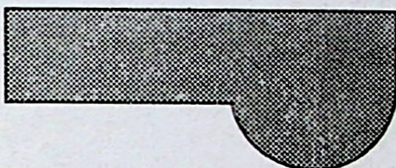
ऐसा भूखण्ड जो कि अण्डे जैसी आकृति का आभास कराये अण्डाकार भूखण्ड कहलाता है। यह आर्थिक स्थिति व स्वास्थ्य हो हानि देता है। वास्तु शास्त्र के नियमानुसार यह भूमि अशुभ होती है।



अण्डाकार भूखण्ड

(21) पंखाकार भूखण्ड :

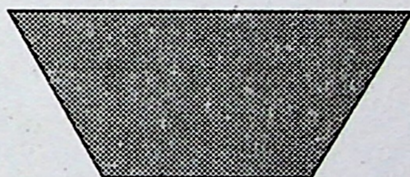
इस प्रकार के भूखण्ड का आकार हाथ के पंखे के समान होता है; इसलिये इसे पंखाकार भूखण्ड कहा जाता है। ऐसी भूमि पर बनाया गया भवन धन एवं पालतू पशुओं के लिये हानिकारक सिद्ध होता है। भवन-निर्माण शास्त्रियों के अनुसार इस प्रकार के भूखण्ड का त्याग कर देना चाहिये।



पंखाकार भूखण्ड

(22) सूपाकार भूखण्ड :

सूप अथवा छाजले की आकृति वाले भूखण्ड को सूपाकार भूखण्ड कहते हैं। ऐसी भूमि पर निर्मित भवन में निवास करने से धन-सम्पदा की हानि होती है। इस प्रकार के भूखण्ड का आगे का हिस्सा चौड़ा होता है तथा साइड के दोनों भाग अंदर की ओर धँसते हुए पीछे से कम हो जाते हैं। जिस प्रकार सूप फटकने पर चीजों को हवा में उड़ा देता है ठीक उसी प्रकार इस भूमि पर रहने वाले के घर-गृहस्थी की चीजें नहीं जुड़ पाती हैं। बस गृह-स्वामी किसी प्रकार पेट भर लेता है। इस प्रकार यह भूखण्ड भी त्याज्य है।

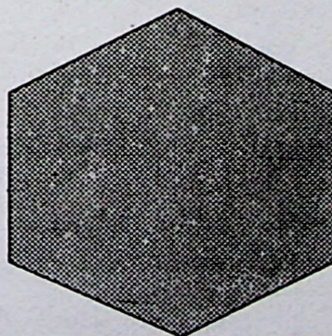


सूपाकार भूखण्ड

(23) षट्कोणाकार भूखण्ड :

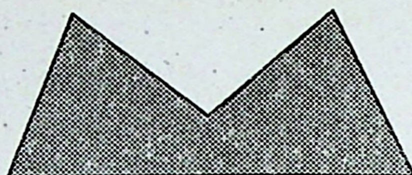
जिस भूखण्ड की छः भुजायें होती हैं, षट्कोणाकार भूखण्ड कहलाता है। ऐसी भूमि पर बने भवन में वास करने से प्रगति एवं पद की उन्नति होती है।

इस प्रकार के भूखण्ड भूस्वामी के लिये सर्वथा उपयोगी है।



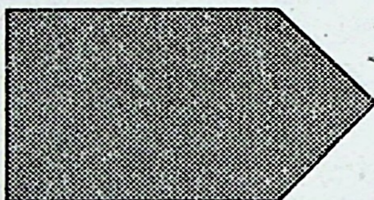
षट्कोणाकार भूखण्ड

(24) धनुषाकार भूखण्ड :


धनुषाकार भूखण्ड

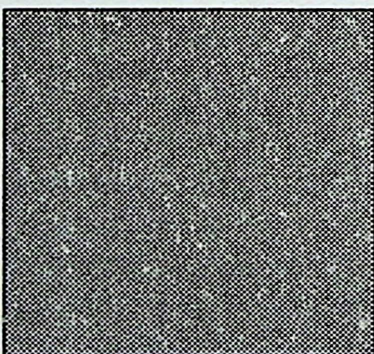
जो भूखण्ड धनुष के आकार वाला हो, उसे धनुषाकार भूखण्ड कहते हैं। इसकी भूमि पीछे से लम्बी तथा आगे से कटावदार अंदर को धँसी हुई होती है। जबकि धनुष का काम शत्रुओं का नाश करना है, किन्तु यह भूमि इस पर रहने वालों को ही अपने गुणों से प्रभावित करती है। यह भूमि शास्त्रीय दृष्टि से त्याज्य है।

(25) शकटाकार भूखण्ड :


शकटाकार भूखण्ड

शकट अर्थात् बैंलगाड़ी की आकृति जैसा लगने वाले भूखण्ड को शकटाकार भूखण्ड कहते हैं। इसका एक हिस्सा त्रिभुजाकार होता है, इस कारण त्रिभुजाकार भूखण्ड का जो अशुभ योग होता है वही इसका होता है। इस भूखण्ड में निवास करने वाले के पास जो भी धन आता है वह रोग तथा झगड़ों में लग जाता है। गृह-स्वामी सदैव परेशान दिखायी देता है।

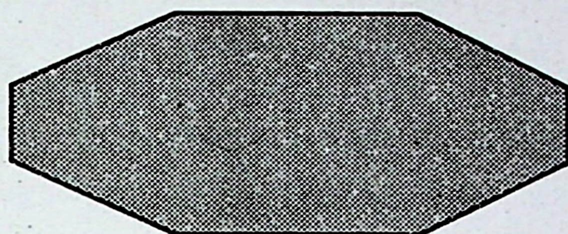
(26) भद्रासन भूखण्ड :


भद्रासन भूखण्ड

इस प्रकार के भूखण्ड की लम्बाई तथा चौड़ाई समान होती है तथा बीच का हिस्सा समतल होता है। ऐसे भूखण्ड पर वास करने वाले को सुख-समृद्धि तथा शान्ति मिलती है, क्योंकि यह भूखण्ड समतल होता है इसलिये ऐसा माना जाता है कि इस पर वास करने वाले व्यक्ति का जीवन भी सामान्य होता है। उसे रोग तथा असमय मृत्यु का भय नहीं रहता। सारे कार्य ठीक समय पर सम्पन्न होते हैं। आय-व्यय के स्रोत बनें रहते हैं।

(27) मृदंगाकार भूखण्ड :

ढोलक अथवा मृदंग के आकार वाली भूमि को मृदंगाकार भूखण्ड कहते हैं। नारियों के लिये इस प्रकार की भूमि पर बना भवन विशेष रूप से अनिष्टकारी तथा अशुभ होता है। इसके गृह-स्वामी की अकारण तथा असमय मृत्यु हो जाती है। इस प्रकार की भूमि अनुचित है।



मृदंगाकार भूखण्ड

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सभी प्रकार के भूखण्ड न तो केवल शुभ कहे जा सकते हैं और न अशुभ। हमें अपनी आवश्यकता, स्वभाव तथा व्यवसाय के अनुसार ही उपयोगी भूखण्ड का चुनाव करना चाहिये।





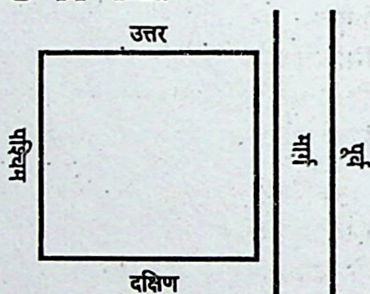
मार्ग के अनुसार भूखण्ड का शुभाशुभ फल विचार

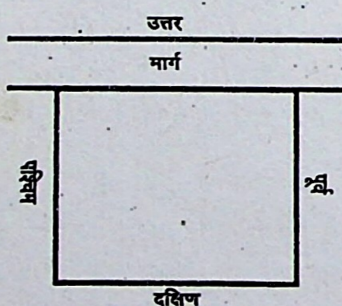
भूखण्ड तक पहुँचने का मार्ग कैसा हो, भूखण्ड खरीदते समय खरीदार को इस बात की विशेष चिन्ता रहती है। भूखण्ड के मार्ग का भूखण्ड की स्थिति पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है।

प्रत्येक भूखण्ड में कम से कम एक ओर रास्ता जरूर होता है। बहुत कम भूखण्डों में चारों तरफ रास्ता होता है। रास्तों की स्थिति से भूखण्ड की शुभाशुभ दशा प्रभावित होती है। भूखण्ड के रास्ते की स्थिति के बारे में वास्तु शास्त्र के नियमानुसार निम्नलिखित प्रकार से बताया जा रहा है—

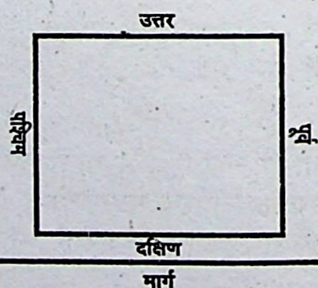
(अ) एक-तरफ मार्ग वाले भूखण्ड का फल :

(1) वह भूखण्ड जिसके सिर्फ एक ओर अर्थात् पूर्व की ओर मार्ग हो तथा शेष तीनों दिशायें यानी उत्तर, पश्चिम व दक्षिण की ओर से बंद हो, तो ऐसा भूखण्ड गृह-स्वामी के लिये शुभ फलदायक होता है। इस प्रकार के भवन में रहने से सुख-समृद्धि प्राप्त होती है।



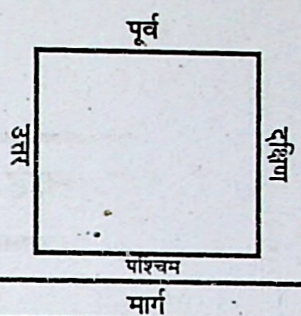


(2) इस प्रकार का भूखण्ड जिसके सिर्फ एक ओर अर्थात् उत्तर दिशा में मार्ग हो, शेष तीनों दिशायें यानी पश्चिम, दक्षिण तथा पूर्व बंद हों तो ऐसा भूखण्ड गृह-स्वामी के लिये शुभ फलदायक माना जाता है। वास्तु शास्त्र की दृष्टि से ऐसे भूखण्ड बड़े उपयोगी होते हैं।



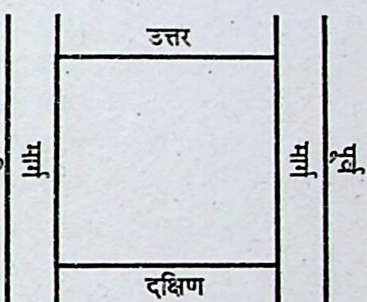
(3) जिस भूखण्ड की दक्षिण दिशा में मार्ग हो तथा शेष तीनों दिशायें अर्थात् पश्चिम, उत्तर व पूर्व बंद हों, इस प्रकार का भूखण्ड भी गृह-

स्वामी के लिये शुभ फल देने वाला होता है। वास्तु शास्त्र में ऐसे भूखण्डों को काफी गुणकारी व शुभ माना जाता है।



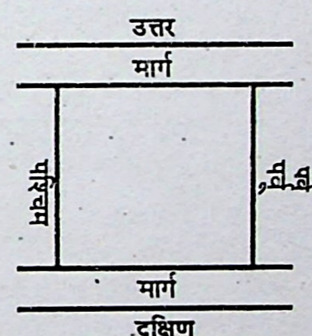
(4) ऐसा भूखण्ड जिसके सिर्फ पश्चिम दिशा में मार्ग हो तथा शेष तीनों दिशायें यानी उत्तर, पूर्व व दक्षिण बंद हो तो गृह-स्वामी के लिये शुभ फलदायी माना जाता है।

(ब) दो तरफ मार्ग वाले भू-भाग का शुभाशुभ फल :



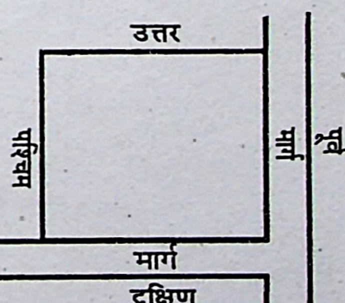
(1) ऐसा भूखण्ड जिसके दोनों ओर से यानी उत्तर, दक्षिण बंद हो तथा पूर्व-पश्चिम मार्ग हो, तो ऐसा भूखण्ड भू-स्वामी या गृह-स्वामी के लिये मिला-जुला फल देने वाला होगा। वास्तु शास्त्र के विद्वानों का ऐसा मत है।

(2) जिस भूखण्ड के उत्तर-दक्षिण में मार्ग होता है तथा पूर्व-पश्चिम बंद होता है ऐसा भूखण्ड भी मिश्रित फल को देने वाला माना जाता है। इस प्रकार के भूखण्ड में रहने वाले प्राणी अधिक प्रगृति नहीं कर पाते, अक्सर परेशान ही रहते हैं।

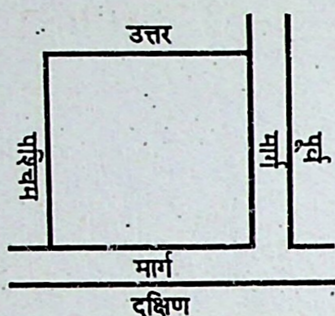


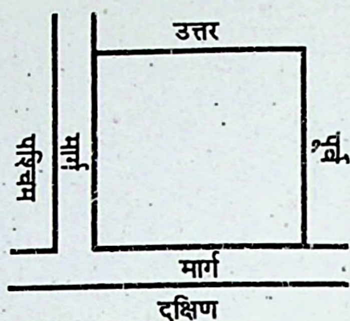
(3) जिस भूखण्ड के दक्षिण-पूर्व में मार्ग हों तथा उत्तर-पश्चिम बंद हो, इस प्रकार का भूखण्ड अपने स्वामी के लिये गरीबी व दु:ख का सूचक होता है। वास्तुशास्त्रियों का मत है कि ऐसे भूखण्ड पर कदापि भवन-निर्माण नहीं करना चाहिये। यह सर्वथा अनिष्टकारी तथा त्याज्य होता है।

(4) जिस भूखण्ड के उत्तर-पश्चिम मार्ग बंद हों तथा दक्षिण-पूर्व में मार्ग हों, सदैव अमंगलकारी होता है। इसमें वास करने वाले दु:खी तथा दरिद्र रहते हैं। ऐसे भूखण्ड सदैव त्याज्य माने जाते हैं।



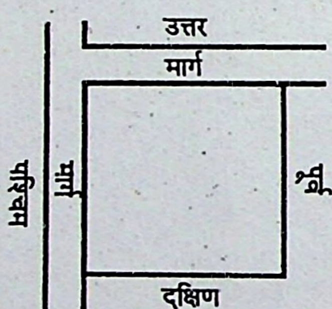
(5) ऐसा भूखण्ड जिसके दक्षिण-पश्चिम मार्ग हों तथा शेष दोनों ओर यानी उत्तर-पूर्व बंद हो, सामान्य फलदायक माना जाता है। ऐसे भूखण्ड पर रहने वाले लोग मध्य स्तर का जीवन गुजारते हैं।

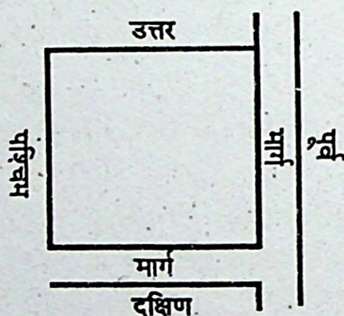




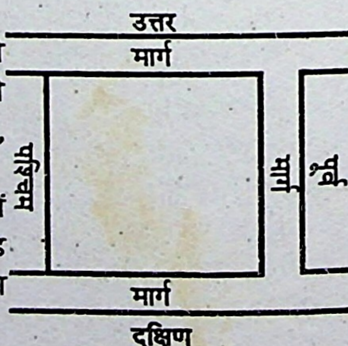
(6) उत्तर-पश्चिम मार्ग वाले भूखण्ड सामान्य फलदायक माने जाते हैं। इसके दक्षिण-पूर्व मार्ग बंद होते हैं। ऐसे भूखण्ड में रहने वाला स्वामी सदैव मध्य स्तर का जीवन गुजारता है।

(7) जिस भूखण्ड के दक्षिण-पश्चिमी मार्ग बंद हों तथा उत्तर-पूर्व में मार्ग हो, उसमें निर्मित भवन में रहने वाला गृह-स्वामी सदैव सुखी-सम्पन्न एवं समृद्धिशाली होता है।



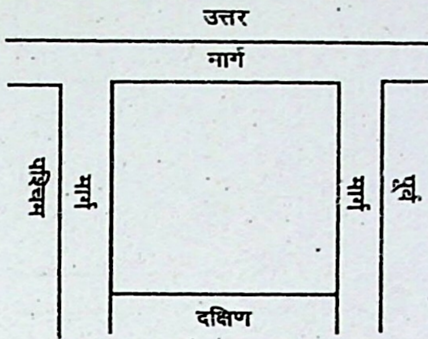


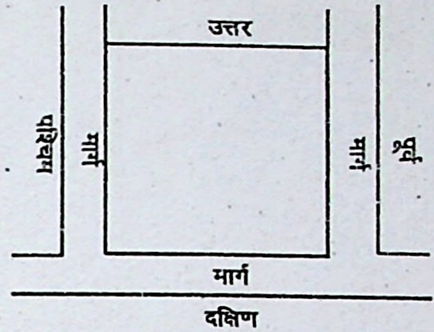
(स) तीन तरफ मार्ग वाले भू-भाग का शुभाशुभ फल :



(1) वह भू-भाग जिसकी दक्षिणी दिशा बंद हो तथा तीनों ओर यानी पूर्व, उत्तर तथा पश्चिमी दिशाओं में मार्ग हों, तो ऐसे भूखण्ड पर बना भवन, गृह-स्वामी के लिये अमंगलकारी होता है।

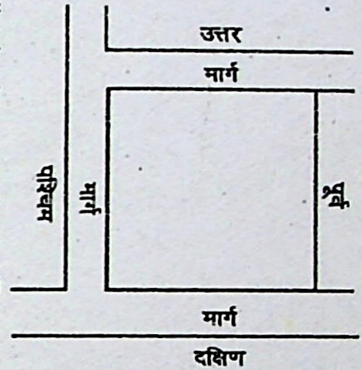
(2) जिस भूखण्ड के उत्तर, पूर्व तथा दक्षिणं में मार्ग हों तथा पश्चिम दिशा में बंद हो, तो ऐसा भूखण्ड गृह-स्वामी के लिये लाभप्रद होता है। ऐसा वास्तुशास्त्रियों का मत है।





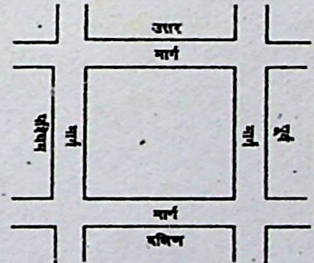
(3) पूर्व-पश्चिम तथा दक्षिण दिशा में मार्ग वाले भूखण्ड अपने भू-स्वामी के लिये अनिष्टकारी होते हैं। ऐसे भूखण्डों में उत्तर दिशा का मार्ग बंद रहता है। ऐसे भूखण्ड सर्वथा त्याज्य हैं।

(4) ऐसा भूखण्ड जिसके तीन ओर यानी उत्तर,पश्चिम व दक्षिण दिशा में मार्ग है और पूर्व दिशा में बंद हो, अपने गृह-स्वामी के लिये सदैव शुभ रहता है। सदैव सुख-समृद्धि प्राप्त होती है। ऐसे भूखण्ड सौभाग्य सूचक माने जाते हैं।



(द) चारों ओर मार्ग वाले भूखण्ड :

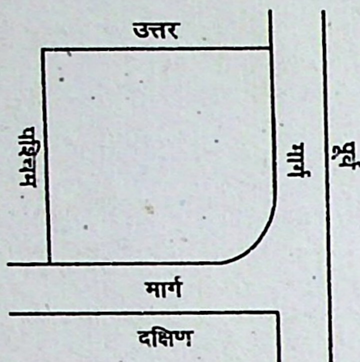
जिस भूखण्ड के चारों ओर मार्ग हों, अर्थात् जिसकी प्रत्येक दिशा खुली हो उस पर बना हुआ भवन अत्यन्त शुभफलदायक होता है। उसमें रहने वाला सदा सुख-सम्पन्न तथा धन-धान्य से परिपूर्ण रहता है।

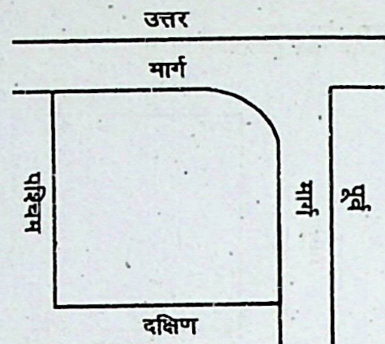


कुछ अन्य प्रकार के भूखण्ड :

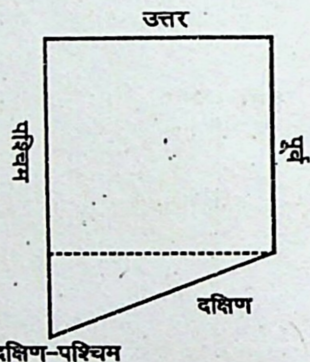
(1) जिस भू-भाग के पूर्व दिशा से दक्षिण दिशा की ओर आग्नेय कोण पर गोलाई हो, ऐसे भू-भाग की स्थिति सामान्य समझी जाती है। वास्तु शास्त्र के नियमानुसार ऐसे भूखण्ड को उत्तम नहीं माना जाता है।

(2) जिस भू-भाग के उत्तर दिशा से पूर्व दिशा की ओर ईशान कोण गोलाई में हो, ऐसे भूखण्ड भी सामान्य स्थिति के माने जाते हैं। इस पर रहने वाले लोग मध्य स्तर का जीवन गुजारते हैं।





भूखण्डों का कोणों के आधार पर शुभाशुभ फल :

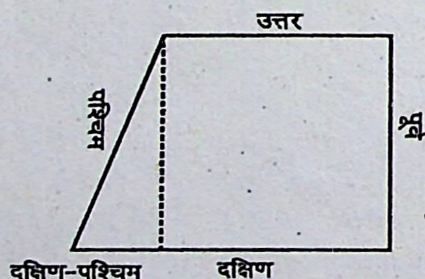


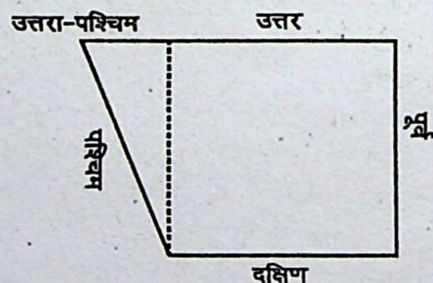
इसमें कोई सन्देह नहीं है कि चाहे भूखण्ड वर्गाकार हों अथवा आयताकार—शुभ होते हैं, किन्तु यदि उनका कोई कोण बढ़ या घट जाये तो उनके फल की दशा बदल जाती है। इसका विवरण निम्नवत् है—

ऐसा भू–भाग जिसके आग्नेय कोण में दक्षिण तथा पश्चिमी दोनों दिशाओं में विस्तार हो, नुकसानदायक तथा दुःखदायक होता है। ऐसा भूखण्ड त्याज्य है।

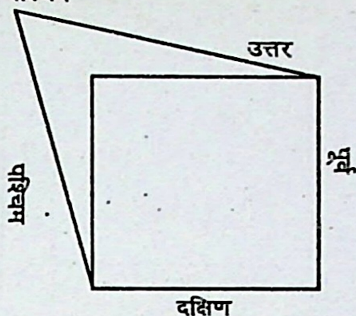
जिस भूखण्ड में नैर्ऋत्य कोण में दक्षिण व पश्चिमी दोनों दिशाओं की ओर विस्तार हो अनिष्टकारी होता है। यह भी पूर्णतः त्याज्य है।

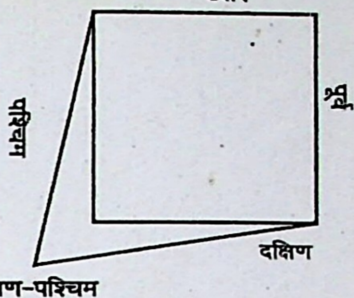
जिस भू–भाग के वायव्य कोण में पश्चिम व उत्तर दोनों दिशाओं की ओर विस्तार हो अनिष्टकारी होता है। ऐसा भूखण्ड भी भवन–निर्माण के लिये सर्वथा त्याज्य है।



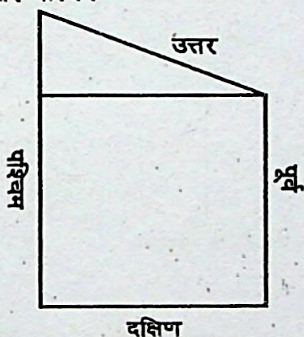


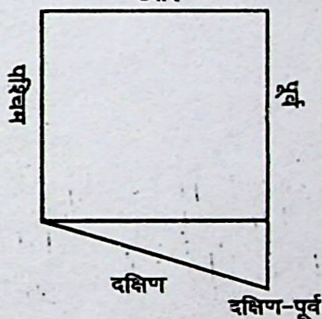
यदि किसी भूखण्ड के उत्तर–पश्चिम कोण में बढ़ोत्तरी हो, तो ऐसा भू–भाग दुश्मनी, मानसिक अशान्ति, अधिक हानि तथा परिवार हेतु हानिकारक सिद्ध होता है। ऐसी भूमि भवन–निर्माण हेतु ठीक नहीं है।





अगर किसी भूखण्ड की दक्षिण-पश्चिम दिशा के कोण में बढ़ोत्तरी हो, तो ऐसा भू-भाग गृह-स्वामी के लिये कष्टकारी तथा हानिकारक होता है। ऐसा भू-भाग वास्तु शास्त्र के नियमानुसार सर्वथा त्याज्य है।



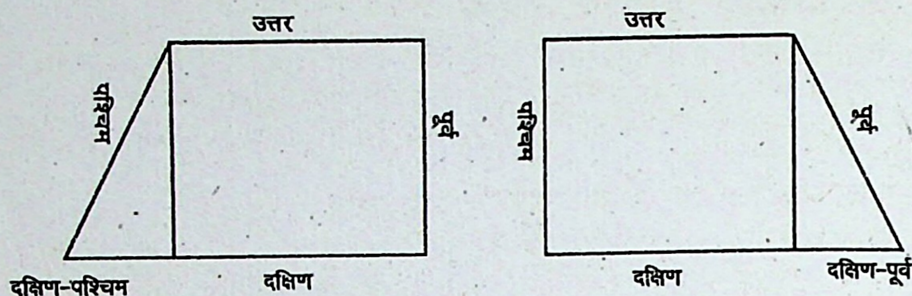


यदि किसी भूखण्ड के उत्तर-पश्चिम कोण में वृद्धि हो, तो ऐसा भू-भाग स्वामी की मानसिक अशान्ति, आर्थिक हानि तथा परिवार के लिये दुःखदायी होता है। वास्तुशास्त्रियों का मत है कि ऐसे भूखण्ड पर निर्मित भवन में नहीं रहना चाहिये।

यदि किसी भूखण्ड की पूर्व से दक्षिण की ओर के कोण में बढ़ोत्तरी हो, तो ऐसा भू-भाग हानिप्रद होता है। ऐसे भू-भाग पर कोई भी भवन-निर्माण कष्टकारी होता है। इस पर कभी भी भवन-निर्माण नहीं करना चाहिये।

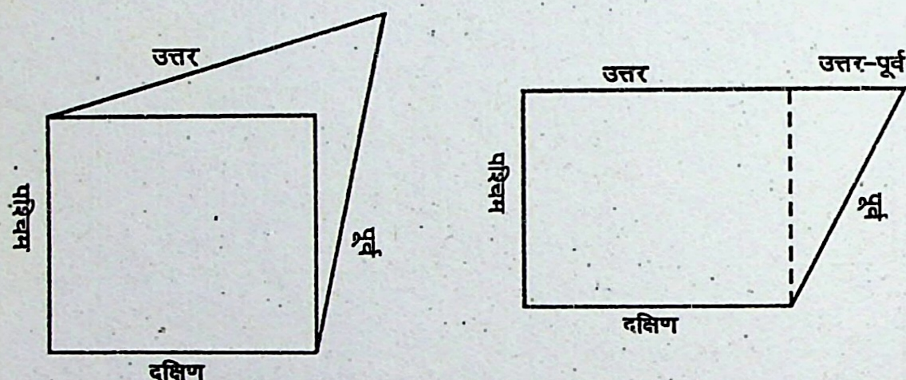
जिस भू-भाग की दक्षिण-पश्चिम दिशा के कोण में वृद्धि हो, तो ऐसा भू-भाग हानिप्रद होता है। ऐसे भू-भाग पर कोई भी भवन-निर्माण कष्टकारी होता है। इस पर कभी भी भवन-निर्माण नहीं करना चाहिए।

अगर किसी भूखण्ड के दक्षिण से पूर्व दिशा की ओर वृद्धि हो, तो ऐसे भूखण्ड में रहने वाले मनुष्यों को राजभय रहता है। उन्हें कोई न कोई परेशानी अवश्य घेरे

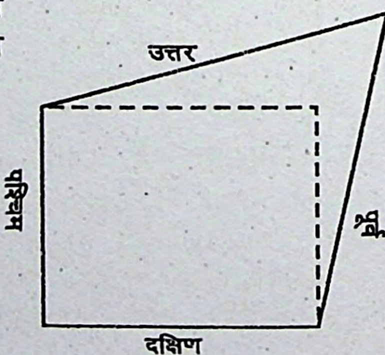


रहती है। ऐसे गृह-स्वामी को चाहिये की वह अपनी परेशानी से सतर्क रहे।

यदि किसी भू-भाग के उत्तर-पूर्व दिशाओं में ईशान कोण के क्षेत्र में बढ़ोत्तरी हो, तो ऐसा भू-भाग भवन-निर्माण की दृष्टि से सर्वथा उत्तम होता है। ऐसे भूखण्ड पर निर्मित भवन या दुकान, मालिक को सुसम्पन्न एवं सुखी बनाए रखते हैं।



जिस भूखण्ड के उत्तर-पूर्व दिशा के कोण में बढोत्तरी होती है, तो ऐसे भू-भाग भी उत्तम तथा श्रेष्ठ माने जाते हैं। इस पर रहने वाले प्राणियों का जीवन बिना किसी कष्ट या परेशानी के निर्बाध गति से चलता रहता है।



यदि किसी भू-भाग के उत्तर-पूर्व के कोण में बढ़ोत्तरी हो, तो ऐसा भू-भाग शुभ व उत्तम होता है। इस भूखण्ड में रहने वाले प्राणियों को सुख-समृद्धि का आभास उनके भवन-निर्माण के समय से ही होना शुरू हो जाता है।

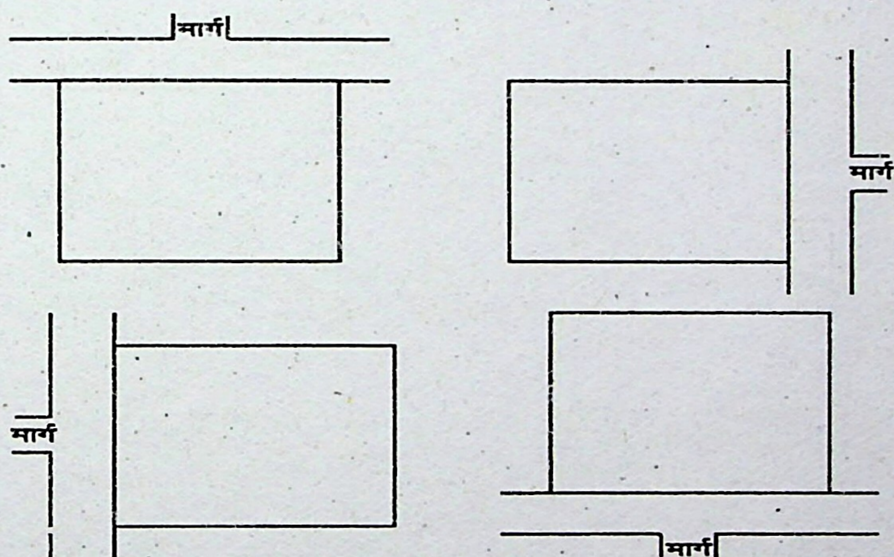
भू-स्वामी को चाहिये कि किसी विद्वान् वास्तुशास्त्री की देखरेख में विचार करके शुभ फलदायक भू-भाग पर ही भवन-निर्माण कराये, ताकि गृह-स्वामी तथा उसके परिवार का समुचित कल्याण हो सके तथा सुख-समृद्धि बढ़े।

वेध दोषयुक्त भूखण्ड क्या है ?

बहुत-से भूखण्डों के पास मन्दिर, देवालय, नाला, स्तम्भ आदि स्थापित होने से वेध दोष होता है। कई बार दो मार्गों के मिलने के स्थान पर भू-भाग होने पर भी उनमें अनेक प्रकार के वेध दोष हो सकते हैं। वेध दोष के कारण उत्तम भूखण्ड भी दोषयुक्त हो जाता है।

एक ही दिशा में वेधयुक्त भूखण्ड :

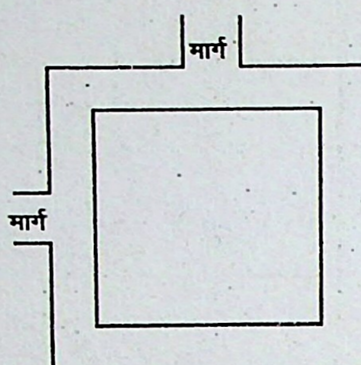
भू-भाग के उत्तर दिशा में मार्ग है और इसमें उत्तर दिशा की ओर से मार्ग वेध है। ऐसे भूखण्ड को दोषपूर्ण नहीं माना गया है। इसी भाँति पूर्व दिशा की ओर के मार्ग पर स्थित भू-भाग पर पूर्व दिशा की ओर से वेध दोष हो, तो ऐसे भूखण्ड को भी दोषयुक्त नहीं माना जाता है। लेकिन यदि दक्षिण दिशा या पश्चिम दिशा की ओर मार्ग होने पर और दक्षिण-पश्चिम दिशा पर भी मार्ग वेध होने से भू-भाग दोषयुक्त माना जाता है। अतः ऐसे भू-भाग भी वास्तु शास्त्र के नियमानुसार सर्वथा भूखण्ड है। चित्र में चारों तरफ से वेधयुक्त भूखण्ड दर्शाये गये हैं।

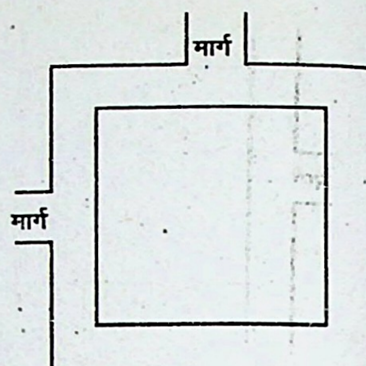


दो दिशाओं में वेधयुक्त भूखण्ड :

जिस भू-भाग के दो ओर पश्चिम तथा उत्तर दिशा की ओर मार्ग हों और उस पर पश्चिम तथा उत्तर दिशा की तरफ से मार्ग वेध हो, तो ऐसा भूखण्ड दोषपूर्ण होता है। वास्तुशास्त्रियों के मतानुसार, ऐसा भू-भाग भी सर्वथा त्याज्य है। ऐसा भूखण्ड उसमें रहने वाले प्रत्येक सदस्य के लिये अनिष्टकारी एवं दुःखदायी सिद्ध होगा।

अगर ऐसे भूखण्ड के दोनों ओर यानी पश्चिम तथा दक्षिण की दिशा में मार्ग हो तथा उस पर पश्चिम व दक्षिण दिशा की ओर से मार्ग वेध हो, तो ऐसा भू-भाग

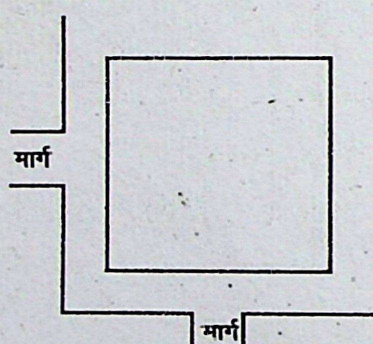


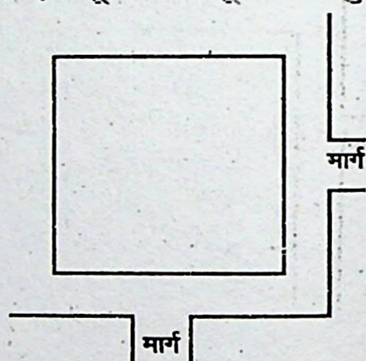


दोषयुक्त माना जाता है। वास्तु शास्त्र के नियमानुसार ऐसा भू-भाग भी सर्वथा त्याज्य है।

अगर भू-भाग के दोनों ओर यानी पूर्व तथा दक्षिण दिशा में मार्ग हों तथा उस पर पूर्व और दक्षिण की तरफ से मार्ग वेध हो, तो ऐसा भूखण्ड दोषपूर्ण होता है। ऐसे भूखण्ड का त्याग करना ही उचित है। ऐसा वास्तुशास्त्रियों का मत है।

यदि भू-भाग के दोनों ओर यानी उत्तर एवं पूर्व दिशा में मार्ग हों तथा उस पर उत्तर तथा पूर्व दिशा की तरफ से मार्ग वेध हो, तो ऐसा भू-भाग भी पूर्णत: दोषयुक्त



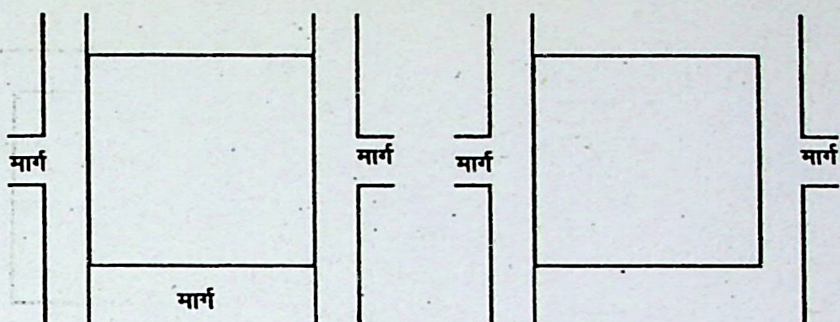


होता है। ऐसे भूखण्ड में रहने वाले सदैव कष्टों से जुझते रहते हैं। ऐसे भूखण्ड भी त्याज्य होते हैं।

दो विपरीत दिशाओं में वेधयुक्त भूखण्ड :

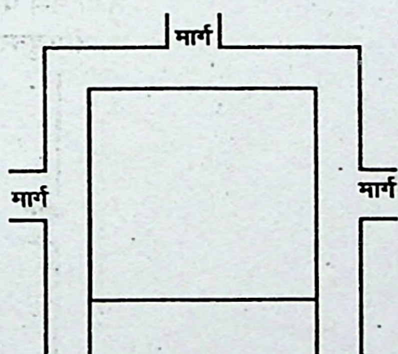
अगर भू-भाग के दोनों ओर अर्थात् उत्तर तथा दक्षिण दिशा की ओर मार्ग हो तथा उस पर उत्तर व दक्षिण दिशा की ओर से मार्ग वेध हो, तो ऐसा भूखण्ड दोषपूर्ण होता है। ऐसा भूखण्ड भी त्याज्य होता है।

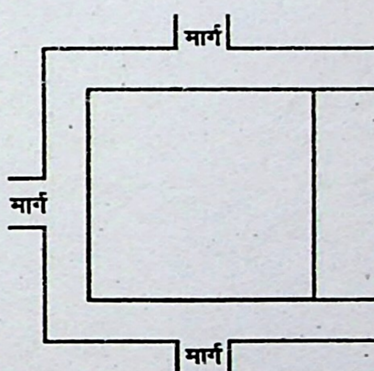
अगर किसी भू-भाग के पूर्व व पश्चिम दिशा की ओर मार्ग हो तथा उस पर पूर्व व पश्चिम दिशा की ओर से मार्ग वेध हो, तो ऐसा भू-भाग दोषयुक्त माना जाता है। ऐसा भूखण्ड भी सर्वथा त्याज्य होता है।

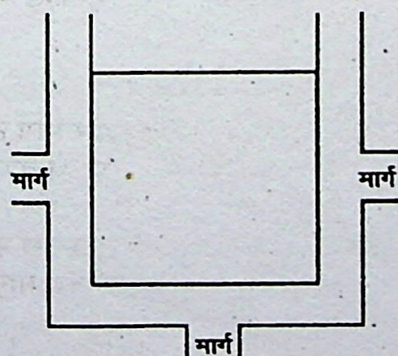


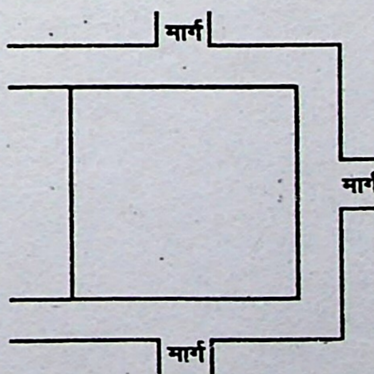
तीन दिशाओं में वेधयुक्त भू-भाग :

अगर भू-भाग के पश्चिम, उत्तर तथा पूर्व दिशा की तरफ मार्ग हो तथा उस पर पश्चिम, उत्तर तथा पूर्व की तरफ से मार्ग वेध हो, तो उसे दोषयुक्त समझा जाता है। वास्तु शास्त्र के अनुसार ऐसा भूखण्ड भी त्याज्य है।







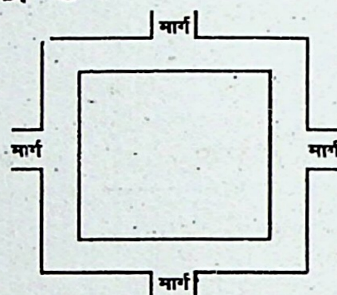


अगर भू-भाग दक्षिण, पश्चिम व उत्तर दिशा की ओर मार्ग हों तथा उस पर दक्षिण, पश्चिम व उत्तर की ओर में मार्ग वेध है, तो उसे दोषयुक्त माना जाता है। वास्तुशास्त्रियों के अनुसार ऐसा भूखण्ड भी त्यागने योग्य है।

यदि भू-भाग के तीनों ओर यानी पूर्व, दक्षिण व पश्चिम दिशा की ओर मार्ग हो, तथा उस पर पूर्व, दक्षिण, पश्चिम की ओर से मार्ग वेध हो, तो उसे दोषयुक्त माना जाता है। ऐसे भूखण्ड का त्याग करना ही उचित है।

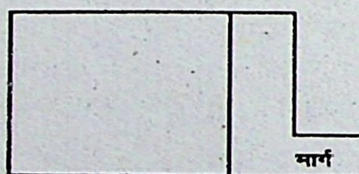
अगर किसी भू-भाग के उत्तर, पूर्व तथा दक्षिण दिशा की ओर मार्ग हो और उस पर उत्तर, पूर्व एवं दक्षिण की ओर से मार्ग वेध हो, तो उसे दोषयुक्त समझा जाता है। ऐसे भू-भाग को भी छोड़ देना उचित होता है।

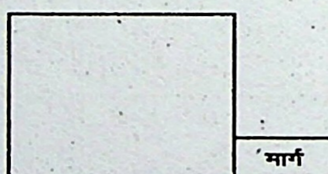
चारों दिशाओं में वेधयुक्त भूखण्ड :



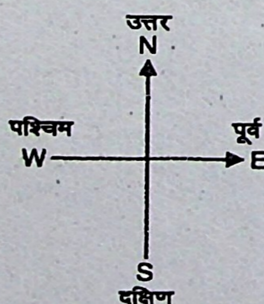
अगर भूखण्ड के चारों तरफ यानी उत्तर पूर्व, दक्षिण व पश्चिम दिशाओं की तरफ रास्ते हों तथा उस पर चारों दिशाओं यानी उत्तर, पूर्व, दक्षिण व पश्चिम की ओर से मार्ग वेध हो, तो ऐसे भूखण्ड भी दोषपूर्ण होते हैं। इनका परित्याग करना ही उचित होता है।

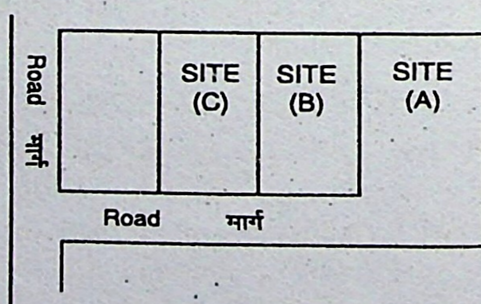
चित्र के अनुसार मार्ग के आखिरी सिरे पर जहाँ रास्ता बंद हो जाता है वहां स्थित भूखण्ड भी वास्तु शास्त्र के अनुसार दोषपूर्ण ही माना जायेगा। शास्त्रीय दृष्टि से ऐसे भूखण्ड का परित्याग करना सर्वथा उचित है।





भूखण्ड मार्ग पर समाप्ति-दोष :

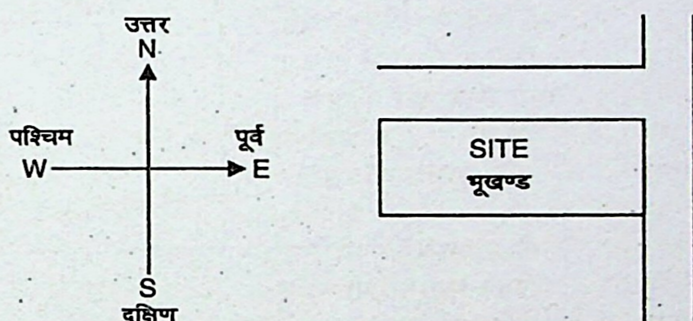




फलश्रुति :

यदि कोई भू-भाग चित्र में प्रदर्शित स्थिति की भाँति दक्षिण की तरफ द्वार वाला हो, यानी सड़क दक्षिण की ओर हो और अन्य सभी दिशायें बन्द हों, तो इस प्रकार का भूखण्ड अनिष्टकारी तथा अशुभ होता है। यदि चित्र में प्रदर्शित (A) के आगे का मार्ग बंद हो जाता है, तो (A) भूखण्ड के मालिक की अकाल मृत्यु होती है। ऐसा भूखण्ड काफी अनिष्टकारी फलदायक होता है। वास्तु शास्त्र की दृष्टि से ऐसा भूखण्ड त्याज्य होता है।

(अ) यदि किसी भू-भाग के पूर्व एवं उत्तर दोनों तरफ मार्ग हो, तो मुख्य प्रवेश मार्ग पूर्व की दीवार में रहना चाहिये, भले ही वह मार्ग छोटा रहे।



(ब) यदि किसी भू-भाग के उत्तर, पश्चिम दोनों तरफ के मार्ग खुले हों, तो मुख्य प्रवेश उनमें से जो छोटा मार्ग हो उसी तरफ से होना चाहिये।

(स) हमेशा याद रखना चाहिये कि भू-भाग की गहराई कभी चौड़ाई से अधिक न हो। अगर पश्चिम तथा दक्षिण के मार्ग खुले हैं, तो प्रवेश पश्चिम से ही किया जाना चाहिये।

(द) यदि पूर्व तथा दक्षिण के मार्ग खुले हों, तो प्रवेश पूर्व से ही किया जाये।

(य) यदि पूर्व तथा पश्चिम दोनों ओर से मार्ग खुले हों, तो प्रवेश द्वार सदैव पूर्व में ही रखा जाये।

(र) यदि उत्तर तथा दक्षिण दोनों तरफ के मार्ग खुले हों, तो प्रवेश द्वार उत्तर दिशा की ओर रखना चाहिये।

कुछ अन्य प्रकार के वेध-दोष :

किसी भी भू-भाग की शुभ-अशुभ स्थिति मार्ग वेध के अतिरिक्त अन्य प्रकार के वेधों; जैसे भू-भाग के पास वृक्ष, मन्दिर, स्तम्भ, नाला आदि स्थित होने से भी प्रभावित होती है। कुछ विशेष प्रकार के वेध निम्नलिखित हैं-

(1) वृक्ष :

भू-भाग अथवा भवन के निकट प्रात:कालीन सूर्य की किरणों के

प्रवेश में बाधा पहुँचाने वाले घने वृक्ष नहीं होने चाहियें। मुख्यद्वार के सामने अथवा पूर्व या उत्तर की ओर तो कभी नहीं होने चाहियें।

(2) नदी, तालाब तथा जलाशय :

भूखण्ड या भवन के पास दक्षिण अथवा पश्चिम दिशा के सामने नहर, नदी, नाला, जलाशय अथवा पानी की टंकी नहीं होनी चाहिये। इस प्रकार की स्थिति वास्तु शास्त्र के अनुसार दोषयुक्त मानी गयी है। यदि भवन के उत्तर या पूर्व दिशा में कोई नदी अथवा नहर है और उसका बहाव पश्चिम से पूर्व की ओर या दक्षिण से उत्तर की ओर है, तो कोई हानि नहीं है। लेकिन यह ध्यान रखें कि नदी अथवा नहर या नाले के जल का बहाव भवन अथवा भूखण्ड के निकट ईशान एवं उत्तर के अतिरिक्त अन्य दिशाओं में जलाशय, ट्यूबवैल, हैंडपम्प आदि नहीं होने चाहियें।

(3) मन्दिर :

साधारणतया लोग मन्दिर या देवालय के निकट भवन का होना शुभ फलदायी मानते हैं, लेकिन वास्तु शास्त्र के अनुसार सार्वजनिक मन्दिर अथवा देवालय के निकट होने पर इन मन्दिरों की छाया आदि के कारण निम्नलिखित स्थितियाँ वेध दोषपूर्ण मानी जाती हैं—

(अ) भवन के निकट दुर्गा तथा चंडी का मन्दिर नहीं होना चाहिये।

(ब) जैन मन्दिर की छाया भवन पर नहीं पड़नी चाहिये।

(स) किसी भी भवन के मुख्यद्वार के सामने सूर्य, ब्रह्मा, विष्णु अथवा शिव का मन्दिर नहीं होना चाहिये।

(द) यदि किसी भी भवन के सामने मन्दिर है, तो उसकी छाया, मध्याह्न काल तक भूखण्ड अथवा भवन पर नहीं पड़नी चाहिये।

(य) निर्मित भवन की ऊँचाई से दोगुनी दूरी तक भूखण्ड के पास या सामने मन्दिर अथवा देवालय नहीं होना चाहिये।

(4) पत्थर एवं स्तम्भ :

पूर्व, उत्तर तथा ईशान कोण में बड़ी चट्टान का पत्थर या कोई स्तम्भ यानी खम्भा नहीं होना चाहिये।

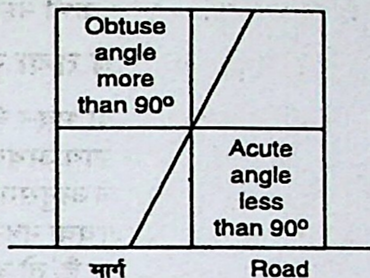
(5) कीचड़—

भवन के पास या मुख्य द्वार के सामने कीचड़ नहीं होनी चाहिये।

(6) द्वार :

भू-भाग या निर्मित भवन के मुख्य द्वार के सामने किसी प्रकार की बाधा नहीं होनी चाहिये। भवन के मुख्य द्वार के सम्मुख पेड़, दीवार, कोना, खम्भा, खाई, कीचड़, कुआँ, मन्दिर अथवा मन्दिर की छाया, कोई कब्र, लम्बी गली अथवा अन्य कोई बाधा नहीं होनी चाहिये। यदि इस प्रकार की कोई बाधा उत्पन्न होती है, तो वह भू-भाग अथवा उस पर बना भवन सर्वथा अशुभ एवं त्याज्य है।

भूखण्ड में चुम्बकीय-ध्रुव की स्थिति :



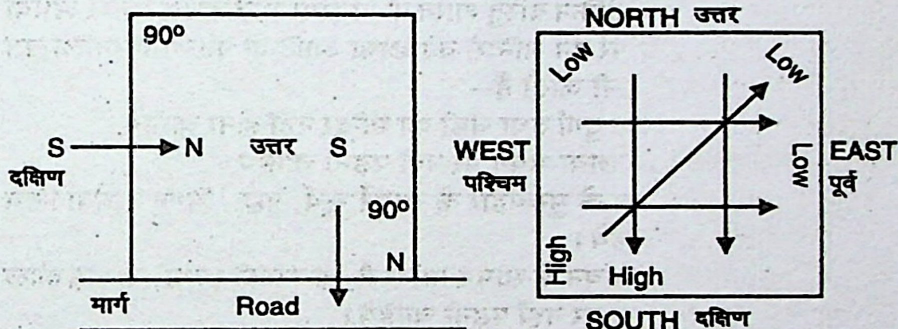
भू-भाग का उत्तर-दक्षिण चुम्बकीय ध्रुव 90° अंश से अधिक नहीं रहना चाहिये।

फलश्रुति :

ऐसे भू-भाग में सोने वाले को ठीक प्रकार से नींद नहीं आएगी। सवेरे उठने पर थकान महसूस होती रहेगी।

भू-भाग में उत्तर-दक्षिण चुम्बकीय ध्रुव की स्थिति :

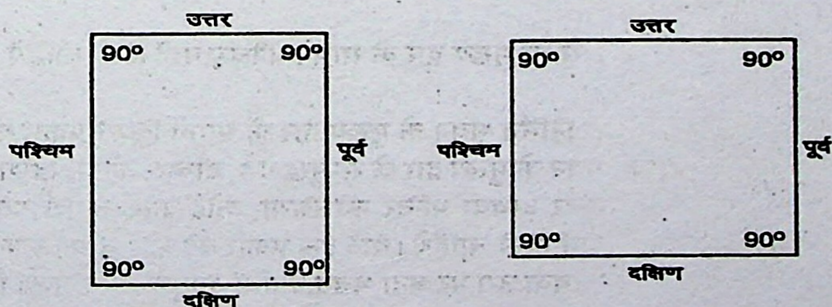
उत्तर-दक्षिण चुम्बकीय ध्रुव की स्थिति भूखण्ड के सामने की दीवार या मार्ग से समानान्तर या लम्बवत् ही होनी चाहिये। जैसा निम्न चित्र में बताया गया है वैसी ही होनी चाहिये, इधर-उधर नहीं।



फलश्रुति :

ऐसे भू-भाग में रहने से निद्रा ठीक से आती है।

भूखण्ड का ढलान :



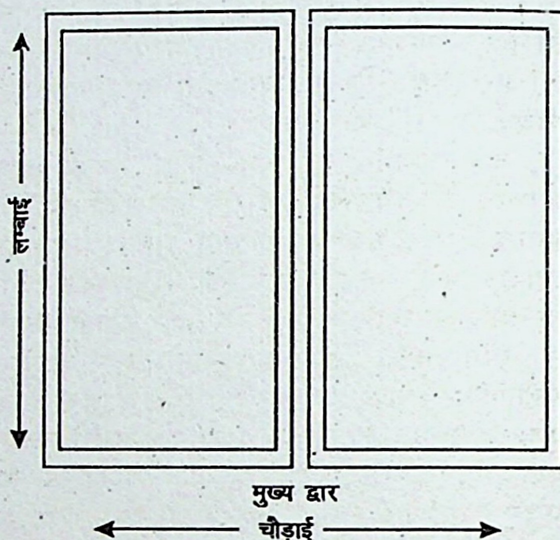
(अ) भूखण्ड का पश्चिमी भाग पूर्वी भाग से कुछ ऊपर उठा हुआ होना चाहिये।
(ब) भूखण्ड का दक्षिणी भाग उत्तर से ऊपर उठा हुआ रहना चाहिये।
(स) भूखण्ड का मध्य भाग निम्न अथवा गहरा नहीं होना चाहिये।
(द) भूखण्ड का नैर्ऋत्य भाग ईशान भाग से कुछ ऊपर उठा हुआ रहना चाहिये।

भूखण्ड की माप :

(अ) भूखण्ड का मध्य मार्ग (लम्बाई), चौड़ाई से कुछ अधिक होना चाहिये।

(ब) भू-भाग चारों तरफ समचौरस (चतुष्कोणात्मक) तथा 90° अंशों के कोण में हो, तो सर्वोत्तम व श्रेष्ठ फलदायक रहता है।

(स) यदि भू-भाग समकोणात्मक हो, तो इसकी लम्बाई-चौड़ाई ड्योढ़ी या दोगुनी तक हो, तब तक अतिउत्तम है, लेकिन इससे अधिक लम्बाई अधिक अच्छी नहीं मानी जाती।



यानी सर्वोत्तम प्लाट 20×40, 20×45, 30×90, 20×60, 60×120, 40×90, 30×60 वाले प्लाट मध्य श्रेणी के माने जाते है। 25×90, 15×60 वाले भू-भाग बिल्कुल निम्न श्रेणी के माने जाते हैं।

भवन का द्वार बनाने के नियम :

(1) मुख्यद्वार सदैव लम्बवत् ही रहना चाहिये।
(2) द्वार की ऊँचाई साधारणत: चौड़ाई से दुगनी होनी चाहिये। द्वार की ऊँचाई न तो ज्यादा लम्बी होनी चाहिये न ही अधिक छोटी तथा अधिक चौड़ी अथवा संकरी भी नहीं होनी चाहिये।
(3) मुख्यद्वार सदैव दो फाटकों से मजबूत, टिकाऊ तथा दूसरे द्वारों की अपेक्षा अधिक आकर्षक तथा सुन्दर होना चाहिये।

मकान बनवाते समय ध्यान रखने योग्य कुछ आवश्यक व उपयोगी निर्देश :

प्रत्येक मनुष्य का जीवन का एक सपना होता है कि उसका भी अपना सुन्दर-सा एक घर हो जिसे वह अपनी इच्छा एवं रुचियों के अनुरूप सजा-सँवार सके। एक

ऐसा घर जिसमें वह अपने परिवार के साथ सुरक्षा एवं सन्तुष्टि का अनुभव कर सके। ऐसा घर जिसमें वह अपने अतिथि के सत्कार के लिये आवश्यक साधन जुटा सके। वह एक ऐसा घर बना सके, जिसमें वह अपने धर्म के अनुसार अपने आराध्य देवी-देवताओं की प्रतिमा को स्थापित करके उसकी पूजा-अर्चना कर सके।

अपने भवन-निर्माण के इस सपने को साकार करने का समय जीवन में रोज-रोज तो नहीं आता। यह सौभाग्य भी किसी-किसी को ही बड़े संघर्ष के बाद मिल पाता है। अत: इस कार्य में जल्दबाजी या उतावलापन न दिखाकर पूर्ण संयम तथा विवेक से काम लेना चाहिये।

जब कभी भी हम कोई दुकान, मकान, कार्यालय देवालय, औद्योगिक संस्थान के लिये भवन-निर्माण कराये तो हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि क्या हमारा अभीष्ट भवन सही दिशा, सही भूखण्ड अथवा सही कोण पर बनाया जा रहा है अथवा नहीं। यदि हम ऐसा देखभाल कर अपना भवन-निर्माण नहीं कराते, तो हमें अवश्य ही कोई न कोई हानि उठानी पड़ेगी।

हमारा कर्त्तव्य है कि हम अपना भवन वास्तु शास्त्र-सम्मत विधि के अनुसार सही दिशा व सही कोण पर तथा शुभ मुहूर्त में ही बनवायें। नीचे भवन-निर्माण की कुछ आवश्यक तथा उपयोगी जानकारियाँ दी जा रही हैं जिनको उपयोग में लाकर एक मजबूत, टिकाऊ, आकर्षक भवन का निर्माण कराया जा सकता है। भवन-निर्माण से पूर्व इन जानकारियों पर नजर डालना उपयोगी सिद्ध होगा—

(1) वर्गाकार भूमि आकार की दृष्टि में सर्वोत्तम मानी जाती है। आयताकार भूमि श्रेष्ठ तथा वृत्ताकार भूमि शुभ मानी जाती है।

(2) काकमुखी, भद्रासन, सिंहमुखाकार, गोमुखाकार, अष्टकोणाकार, षट्कोणाकार तथा चतुष्कोणाकार भूमि भवन-निर्माण की दृष्टि से शुभ मानी जाती है।

(3) त्रिकोणाकार, चक्राकार, शंक्वाकार, विषमबाहु तथा अर्द्धवृत्ताकार भूमि भवन-निर्माण की दृष्टि से अशुभ मानी जाती है। ऐसे भू-भाग पर भूलकर भी भवन नहीं बनाना चाहिये।

(4) दो विशाल भू-भाग के बीच एक छोटा अथवा संकरा भू-भाग भी उत्तम नहीं रहता। ऐसे भू-भाग पर निर्मित भवन से काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है।

(5) उत्तर से दक्षिण दिशा में खाली जगह अधिक हो. तो चाहे वह भवन हो अथवा कार्यशाला या मन्दिर हो या झोंपड़ी अवश्य ही हानिकारक एवं पतन का कारण होता है। पश्चिमी दिशा की अपेक्षा पूर्व दिशा में अधिक स्थान रिक्त रहना उत्तम तथा शुभ होता है।

(6) विशाल स्थल सदैव ऐश्वर्यप्रदायक माना जाता है, लेकिन वह किसी भी दशा में कटा-फटा नहीं होना चाहिये।

(7) सोते समय सिर पूर्व अथवा दक्षिण दिशा में रखकर ही सोना उत्तम है। कभी भी पैर दक्षिण अथवा पूर्व दिशा में नहीं होने चाहियें।

(8) भवन में स्थायी रूप में रखा सामान अथवा भारी सामान दक्षिण नैर्ऋत्य अथवा पश्चिमी-नैर्ऋत्य दिशा में रखना उचित होता है।

(9) भारी सामान दक्षिण एवं नैर्ऋत्य दिशा वाले कमरों में रखने से गृहस्थ जीवन सुखी तथा सम्पन्न रहता है।

(10) वृक्ष आदि पश्चिमी दिशा में लगाना उचित होता है। भवन की पूर्व दिशा में ऊँचे वृक्ष अथवा ऊँचे भवन नहीं होने चाहियें। इससे सूर्य का प्रकाश तथा धूप भवन तक नहीं पहुँच पाते।

(11) हल्का अथवा भारहीन सामान उत्तर, ईशान तथा वायव्य दिशाओं में रखने से गृहस्थ जीवन सुखमय होगा।

(12) भवन का मुख्यद्वार एक ही रखना चाहिये इसे मांगलिक चिन्हों से युक्त करना शुभ रहता है।

(13) पूर्व से उत्तर की ओर समान रेखाओं के मार्ग वाले स्थल का चयन भवन-निर्माण की दृष्टि से उत्तम होता है।

(14) घर के सभी खिड़की, दरवाजों की ऊँचाई एकसमान सूत्र में होनी चाहिए।

(15) छत पर रखी पानी की टंकियाँ आदि दक्षिण-पश्चिम दिशा में ही रखनी शुभ होती हैं। उत्तर या ईशान कोण में इन्हें कभी नहीं रखना चाहिये।

(16) द्वार के ऊपर द्वार का निर्माण कभी नहीं कराना चाहिये। वैसे यह सूत्र बहुमन्जिलें भवनों पर लागू नहीं होता है। ऊपर का द्वार सदैव नीचे के द्वार से छोटा ही रखना चाहिये।

(17) पूजास्थल का निर्माण ईशान कोण में करना उत्तम रहता है। विशेष परिस्थितियों में पूर्व ईशान कोण के समीप भी पूजा स्थल बनवाया जा सकता है।

(18) भवन-निर्माण के समय भवन के चारों ओर का स्थान खुला रहना चाहिये।

(19) अग्नि कोण में ही रसोई का निर्माण करना श्रेष्ठ एवं शुभ होता है। आवश्यकता पड़ने पर पूर्व अग्नि कोण के निकट अथवा दक्षिण कोण के निकट किया जा सकता है।

भूखण्ड का विस्तार

भूखण्ड के किसी एक कोण में विस्तार के वास्तु शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में कहे गए फलों के अनुसार इनका प्रभाव इन भूखण्ड पर निवास अथवा कार्य करने वालों पर निम्नानुसार प्रभाव पड़ता है—

(1) ईशान कोण में विस्तार :

जिस भूखण्ड में ईशान कोण—पूर्व दिशा में, उत्तर दिशा में अथवा दोनों दिशाओं में बढ़ा हुआ होता है, शुभफल प्रदान करता है।

(2) आग्नेय कोण में विस्तार :

जिस भूखण्ड में आग्नेय कोण—पूर्व दिशा में, दक्षिण दिशा में अथवा दोनों दिशाओं में बढ़ा हुआ होता है, अशुभफल प्रदान करता है।

(3) नैऋंत्य कोण में विस्तार :

जिस भूखण्ड में नैऋंत्य कोण—दक्षिण दिशा में, पश्चिम दिशा में अथवा दोनों दिशाओं में बढ़ा हुआ होता है, अशुभफल प्रदान करता है।

(4) वायव्य कोण में विस्तार :

जिस भूखण्ड में वायव्य कोण—उत्तर दिशा में, पश्चिम दिशा में अथवा दोनों दिशाओं में बढ़ा हुआ होता है, अशुभफल प्रदान करता है।

अर्थात् ईशान कोण में भूखण्ड का विस्तार शुभफलदायक होता है।

भूखण्ड का ह्रास

भूखण्ड के किसी एक कोण में ह्रास के वास्तु शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में कहे गए फलों के अनुसार इनका प्रभाव इन भूखण्ड पर निवास अथवा कार्य करने वालों पर निम्नानुसार प्रभाव पड़ता है—

(1) ईशान कोण में ह्रास :

जो भूखण्ड में ईशान कोण में पूर्व दिशा से, उत्तर दिशा से अथवा दोनों दिशाओं से घटा हुआ होता है, वह अशुभफल प्रदान करता है।

(2) आग्नेय कोण में ह्रास :

जो भूखण्ड में आग्नेय कोण में पूर्व दिशा से, दक्षिण दिशा से अथवा दोनों दिशाओं से घटा हुआ होता है, वह शुभफल प्रदान करता है।

(3) नैऋंत्य कोण में ह्रास :

जो भूखण्ड में नैऋंत्य कोण में पश्चिम दिशा से, दक्षिण दिशा से अथवा दोनों दिशाओं से घटा हुआ होता है, वह अशुभफल प्रदान करता है।

(4) वायव्य कोण में ह्रास :

जो भूखण्ड में वायव्य कोण में पश्चिम दिशा से, उत्तर दिशा से अथवा दोनों दिशाओं से घटा हुआ होता है, वह अशुभफल प्रदान करता है।

अर्थात् आग्नेय कोण में भूखण्ड का ह्रास शुभफलदायक होता है।





कक्ष-निर्माण कला

वास्तु शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में भवन में बनाए जाने वाले विभिन्न कक्षों हेतु निश्चित दिशाएँ एवं स्थान निर्धारित किए गए हैं।

भवन-निर्माण करते समय वास्तु के नियमानुसार किस कक्ष का निर्माण किस दिशा में किया जाए, यदि इसका ध्यान नहीं रखा जायेगा, तो भवन वास्तु सिद्धान्तों के विपरीत बन सकता है; जिससे भवन-स्वामी को अनेक प्रकार के कष्टों को भोगना पड़ सकता है। भवन में निर्मित किये जाने वाले कक्षों की माप और दिशा आदि का विवरण तथा निर्माण योग क्षेत्र पूर्व में रेखांकन चित्र स्वयं अथवा आर्किटेक्ट से तैयार कराना उचित होता है और साइट प्लान को आधार मानकर भवन-निर्माण करना चाहिए।

भवन में सबसे पहले दीवारों की ओर ध्यान देना चाहिए। दीवारें सीधी और एक आकृति वाली होनी चाहिएँ, कहीं से मोटी और कहीं से पतली एवं टेढ़ी-मेढ़ी दीवार होने पर वह गृह-स्वामी के लिए कष्टकारक होती है, परन्तु भवन की दक्षिणी एवं पश्चिमी दीवारें उत्तरी एवं पूर्वी दीवारों से अधिक मोटी होनी चाहिएँ। मिट्टी की दीवारें अन्दर से तथा पत्थर एवं ईंट की दीवारें बाहर की ओर से अन्दर लगानी चाहिएँ।

	वायव्य		उत्तर		ईशान	
	अन्न भण्डारण	अतिथि कक्ष	कोषागार	अध्ययन कक्ष	पूजा घर	
	पुत्री का शयनकक्ष				प्रवेशद्वार	
पश्चिम	भोजन कक्ष		मध्य भाग (आंगन)		स्वागत कक्ष	पूर्व
	पुत्र का कक्ष				स्नान घर	
	शस्त्रागार जनरेटर	शौचालय	शयन कक्ष	भण्डार गृह	रसोई गृह	
	नैर्ऋत्य		दक्षिण		आग्नेय	

भवन में कक्षों के अन्तर्गत रोशनी और हवा क़ा ध्यान रखते हुए खिड़कियों का तथा सामान आदि के लिए आलमारी आदि का निर्माण करना चाहिए। दक्षिण-पश्चिम भाग में आलमारी आदि के निर्माण के पश्चात् सामान रखने पर यह दिशा भारी रहेगी, पूर्व एवं उत्तर दिशा में खिड़कियाँ अथवा रोशनदान रखने पर इस दिशा में हल्कापन रहना चाहिए।

वास्तु शास्त्र में प्रत्येक कक्ष हेतु एक निश्चित दिशा एवं स्थान बताया गया है। यद्यपि वास्तु शास्त्र के अनुसार, 16 खण्डों में कक्षों आदि का विभाजन कर प्रत्येक कार्य के लिए पृथक्-पृथक् दिशाओं का उल्लेख किया गया है, किन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इन विभागों पर विचार करने से ज्ञात होता है कि ये कक्ष तात्कालिक दृष्टि पर आधारित हैं और आज इनके कतिपय कक्षों की उपादेयता दृष्टिगोचर नहीं होती। इसलिए यह आवश्यक है कि जिन कक्षों का निर्धारण आज भी आवश्यक है उनका निर्धारण उसी दिशाक्रम में करना चाहिए जैसे अग्नि का आग्नेय कोण में; पूजा का कक्ष ईशान कोण में; शयनकक्ष, अध्ययनकक्ष, वायव्य कोण में अन्नादि का भण्डारण आदि इसी क्रम से निर्धारित करना आवश्यक है और रोदन एवं रति कक्षों के स्थान पर मनोरंजन तथा अविवाहित सन्तान हेतु कक्ष निर्धारित कर वास्तु शास्त्र के अनुसार निर्मित करने पर वह भवन समस्त प्रकार की अभ्युन्नति तथा प्राकृतिक आपदाओं से रहित स्त्री-पुत्र, धन-धान्य और मानसिक शांतिकारक प्रदाता होता है। वरना इच्छानुकूल दिशाओं में निर्माण स्वेच्छाचारिता होगा, जिसकी हानियों की सम्भावनाओं को ध्यान में रखना आवश्यक है।

अन्न भण्डार सैप्टिक टैंक बालकक्ष शौचालय स्नानघर	विश्राम कक्ष स्वागत कक्ष अध्ययनकक्ष धनागार	पूजा स्थल स्वाध्यायकक्ष अध्ययनकक्ष
बालकक्ष भोजनकक्ष	आंगन लॉबी	अतिथिकक्ष बरामदा स्नानघर
गृहस्वामी का शयनकक्ष सीढ़िया	शयनकक्ष भण्डारगृह	रसोईघर बिजली का मीटर

वर्तमान में सामान्यजन इतने बड़े भूखण्ड नहीं क्रय कर पाता कि वह वास्तु समेत 16 कक्षों के सिद्धान्तानुसार भवन-निर्माण कर सके। वास्तु अनुसार भूखण्ड को विभिन्न दिशाओं और विदिशाओं में विभक्त करके पिछले पृष्ठ पर दिये गए

वास्तु के अष्टचक्र के अनुसार भवन में कक्षों का निर्माण किया जा सकता है।

आइए, अब भवन में बनाए जा सकने वाले विभिन्न कक्षों की भवन में वास्तु अनुसार स्थिति एवं कक्ष में व्यवहार में लाए जाने वाले आवश्यक अनुपम वास्तु-नियमों की चर्चा करें।

रसोईघर का स्थान :

रसोईघर में किया जाने वाला प्रमुख कार्य अग्नि से सम्बन्धित है अत: रसोईघर के लिए भवन में दक्षिण-पूर्व अर्थात् आग्नेय कोण निश्चित किया गया है।

यदि आग्नेय कोण में रसोईघर बना पाना सम्भव न हो, तो रसोईघर भवन के पूर्वी आग्नेय कोण अथवा पश्चिम में भी बनाया जा सकता है।

रसोईघर को आठ दिशाओं एवं विदिशाओं में विभाजित करके ऐसी व्यवस्था अवश्य करनी चाहिए कि चूल्हा रसोईघर के आग्नेय कोण में रहे।

ईशान कोण में चूल्हा रखा जाना वर्जित है, ऐसा करने से अर्थहानि होती है एवं वंश वृद्धि रुक जाती है।

यदि निर्मित भवन में चूल्हा ईशान कोण में ही रखा है, तो इसका स्थान परिवर्तन करके आग्नेय कोण में विस्थापित कर दें।

स्थान-परिवर्तन सम्भव नहीं है एवं चूल्हा स्लैब पर रखा है, तो स्लैब के नीचे ताँबे का बड़ा जल से भरा जलपात्र सदैव रखें एवं प्रतिदिन सुबह-शाम इसका जल बदलते रहें। भोजन पकाने के तुरन्त बाद इस स्थान को साफ कर दें। आग्नेय कोण में एक बल्ब जलाकर रखें, जिस पर लाल रंग की पन्नी चढ़ी हो। यदि चूल्हा फर्श पर रखा है, तो जलपात्र चूल्हे के निकट रखा जाना चाहिए शेष नियम वही रहेंगे।

रसोईघर में टांड आदि दक्षिणी एवं पश्चिमी दीवार पर ही बनाए जाने चाहिएँ, परन्तु आवश्यकतानुसार चारों दीवारों पर भी बनाए जा सकते हैं।

अन्न आदि के डिब्बे उत्तर-पश्चिम अर्थात् वायव्य कोण में रखे जाने चाहिएँ। वायव्य कोण में अन्नादि रखने से घर में इनका अभाव नहीं रहता। प्रथम तो डिब्बे खाली नहीं होंगे, परन्तु परिस्थितिवश यदि ऐसा हो भी जाता है, तो डिब्बों में कुछ-न-कुछ भले ही चार दाने हों, अवश्य रखें। यह वास्तु शास्त्र में तो वर्णित है, साथ ही लेखक का यह स्वयं का भी अनुभव है।

रसोईघर में भारी सामान बर्तन आदि दक्षिणी दीवार की ओर रखें।

रसोईघर में पीने का पानी ईशान कोण में अथवा उत्तर दिशा में रखा जाना चाहिए।

रसोईघर में गैस बर्नर, चूल्हा, स्टोव अथवा हीटर आदि दीवार से लगभग तीन इंच हटकर रखा होना चाहिए। खाना बनाते समय गृहिणी अथवा खाना बनाने वाले का मुख पूर्व दिशा की ओर होना चाहिए, यह भवन के निवासियों के लिए स्वास्थ्यवर्धक होता है।

द्वार से चूल्हा, गैस बर्नर आदि नहीं दिखाई देना चाहिए, इससे परिवार के

संकटग्रस्त होने की सम्भावना होती है। रसोईघर में माइक्रो ओवन, मिक्सर, ग्राइन्डर आदि दक्षिण दीवार के निकट रखे जाने चाहिएँ।

यदि रसोई में रेफ्रीजरेटर भी रखा जाना है, तो इसके लिए आग्नेय, दक्षिण, पश्चिम अथवा उत्तरी दिशा में रखा जाना उचित होगा। इसे नैर्ऋत्य काणे में कदापि न रखें अन्यथा यह बहुधा खराब ही रहेगा।

रसोईघर में खाली एवं अतिरिक्त गैस सिलिण्डर आदि नैर्ऋत्य कोण में रखे जाने चाहिएँ।

यदि भोजन करने की व्यवस्था भी रसोईघर में ही की जानी है, तो यह रसोईघर में पश्चिम की ओर होनी चाहिए।

भोजनकक्ष स्थल :

भोजनकक्ष भवन की पश्चिम दिशा में बनाया जाना चाहिए। पश्चिम दिशा में भोजनकक्ष होने से भोजन करने में असीम सुख, शान्ति एवं सन्तोष प्राप्त होता है।

भोजनकक्ष को रसोईघर की पश्चिम दिशा में भी बनाया जा सकता है।

रसोईघर के अन्दर ही भोजन करने की व्यवस्था होने पर यह रसोईवर में पश्चिम की ओर होनी चाहिए।

यदि भोजनकक्ष पश्चिम दिशा के अतिरिक्त किसी अन्य दिशा में बना हुआ है, तो उस कक्ष में पश्चिम की ओर बैठकर भोजन किया जाना चाहिए।

पूजाकक्ष स्थल :

पूजाकक्ष कभी भी शयनकक्ष में नहीं बनवाना चाहिए। यदि परिस्थितिवश ऐसा करना ही पड़े, तो वह शयनकक्ष अविवाहितों के लिए होना चाहिए। यदि परिस्थितिवश विवाहितों को भी उसी शयनकक्ष में सोना है, तो पूजास्थल पर सभी ओर से पर्दा डालकर रखें और रात को सोने से पूर्व पूजास्थल का पर्दा ढक दें, परन्तु यह व्यवस्था केवल स्थानाभाव के कारण ही होनी चाहिए। यदि आपके पास स्थान है, तो पूजास्थल शयनकक्ष से हटकर बनाया गया होना चाहिए।
यह व्यवस्था केवल स्थानाभाव के कारण ही होनी चाहिए। यदि आपके पास स्थान है, तो पूजास्थल शयनकक्ष से हटकर बनाया गया होना चाहिए।

पूजाकक्ष को सदैव शुद्ध, स्वच्छ एवं पवित्र रखें। इसमें कोई भी अपवित्र वस्तु न रखें।

पूजाकक्ष के निकट एवं भवन के ईशान कोण में झाड़ू एवं कूड़ेदान आदि नहीं रखने चाहिएँ।

सम्भव हो तो पूजाकक्ष को साफ करने का झाड़ू-पोंछा भवन के अन्य कक्षों को साफ करने के झाड़ू-पोंछे से अलग रखें।

धन-प्राप्ति हेतु पूजा, पूजाकक्ष में उत्तर की ओर मुख करके करनी चाहिए एवं ज्ञान-प्राप्ति के लिए पूर्व की ओर मुख करके।

पूजाकक्ष में किसी स्थिर प्रतिमा की स्थापना नहीं करनी चाहिए।

पूजाकक्ष में किसी प्राचीन मन्दिर से लाई गई प्रतिमा भी नहीं स्थापित करनी चाहिए।

पूजाकक्ष में यदि हवनादि की व्यवस्था की गई है, तो यह पूजाकक्ष के आग्नेय कोण में होनी चाहिए।

पूजाकक्ष में प्रतिमाएँ कभी भी प्रवेशद्वार के समक्ष नहीं होनी चाहिएँ।

पूजाकक्ष में कभी भी धन एवं बहुमूल्य वस्तुएँ नहीं छिपानी चाहिएँ।

पूजाकक्ष का फर्श सफेद अथवा हल्के पीले रंग का होना चाहिए।

पूजाकक्ष की दीवारों का रंग सफेद, हल्का पीला अथवा हल्का नीला होना चाहिए।

पूजाकक्ष में देवचित्र :

पूजाकक्ष में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, सूर्य एवं कार्तिकेय का मुख सदैव पूर्व अथवा पश्चिम की ओर होना चाहिए। गणेश, कुबेर एवं दुर्गा का मुख सदैव दक्षिण की ओर होना चाहिए।

हनुमानजी का मुख नैर्ऋत्य कोण में होना चाहिएँ।

पूजागृह में देवचित्र एक-दूसरे के सम्मुख नहीं रखने चाहिएँ।

देवी-देवताओं के चित्र उत्तरी और दक्षिणी दीवार के निकट कदापि नहीं होने चाहिएँ।

पूजाकक्ष में महाभारत के चित्र, पशु-पक्षी के चित्र एवं वास्तुपुरुष का कोई प्रतिचित्र नहीं रखा जाना चाहिए।

स्वागतकक्ष स्थान :

स्वागतकक्ष भवन में वायव्य कोण अथवा पूर्व एवं ईशान कोण के मध्य बनाना चाहिए।

स्वागतकक्ष को उत्तरी एवं पूर्वी दीवार की ओर फर्नीचर नहीं रखना चाहिए, इसका उद्देश्य यही है कि इन दिशाओं में भारी सामान न रखा जाए।

स्वागतकक्ष का ईशान कोण रिक्त रहना चाहिये।

स्वागतकक्ष के ईशान कोण की दीवार में पूजास्थल बनाया जा सकता है अथवा कोई धार्मिक चित्र अथवा झरने आदि का चित्र अवश्य लगाएँ।

कक्ष में पशु-पक्षियों के चित्र, स्त्रियों के चित्र, रोते हुए बच्चो का चित्र एवं युद्ध के चित्र नहीं लगाने चाहिएँ।

स्वागतकक्ष का दरवाजा स्वागतकक्ष के ईशान कोण में है, तो वह सर्व प्रकार से शुभ फलदायक है।

स्वागतकक्ष में बैठने की व्यवस्था इस प्रकार होनी चाहिए कि परिवार के मुखिया का मुख पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर हो एवं आगन्तुक का मुख पश्चिम अथवा दक्षिण दिशा की ओर।

स्वागतकक्ष में झाड़-फानूस आदि कक्ष के केन्द्र से पश्चिम की ओर हटाकर लगाना चाहिए।

कक्ष में रखा जाने वाला फर्नीचर वर्गाकार अथवा आयताकार होना चाहिए, किसी अन्य आकार का नहीं। कक्ष में फर्नीचर आदि पश्चिम अथवा दक्षिण दिशा में रखा जाना चाहिए। स्थानाभाव के कारण यदि फर्नीचर पूर्व अथवा उत्तर दिशा में रखा जाना है, तो यह फर्नीचर हल्का और पोला होना चाहिए। साथ ही फर्श पर लकड़ी के गुटके रखकर उस पर फर्नीचर रखना चाहिए अर्थात् फर्नीचर का फर्श से सीधा सम्पर्क न हो।

स्वागतकक्ष में यदि दीवान रखा जाना है, तो वह पश्चिमी अथवा दक्षिणी दीवार को छूता हुआ रखना जाना चाहिये एवं दीवान पर लेटते समय सिर दक्षिण अथवा पश्चिम में होना उचित है।

स्वागतकक्ष में यदि भूसा भरे जानवर को रखा जाना है, तो ये वायव्य कोण में रखे जाने चाहिएँ।

यदि स्वागतकक्ष का एक भाग भोजनकक्ष की भाँति प्रयोग किया जाना है, तो यह स्वागतकक्ष में पश्चिम दिशा की ओर होना चाहिए।

स्वागतकक्ष में भारी आलमारी, किताबों की शेल्फ, भारी मूर्तियाँ आदि भारी सामान पश्चिम या दक्षिण दिशा में रखा जाना चाहिए।

स्वागतकक्ष में एयर-कण्डीशनर एवं रूम-हीटर आदि विद्युत उपकरण कक्ष के आग्नेय कोण की ओर रखे जाने चाहिएँ।

स्वागतकक्ष में यदि अध्ययन करने की मेज लगाई जानी है, तो यह कक्ष के पूर्वी ईशान, उत्तर अथवा उत्तरी वायव्य कोण में लगाई जानी चाहिए। इस मेज पर रखा जाने वाला टेबललैम्प मेज के आग्नेय कोण की ओर होना चाहिए।

स्वागतकक्ष के प्रवेशद्वार के ऊपर अन्दर की ओर से किसी देवी-देवता का चित्र नहीं लगाना चाहिए, परन्तु स्वागतकक्ष के प्रवेश-द्वार के ऊपर बाहर की ओर गणेशजी की टाइल अथवा चित्र लगाया जा सकता है। स्वागतकक्ष में कूलर को पश्चिम दिशा में रखा जाना चाहिए। कूलर आग्नेय कोण में कदापि न रखें, ऐसा करने पर कूलर बहुधा खराब रहेगा।

स्वागतकक्ष में टी०वी० एवं वी०सी०आर० आदि मनोरंजन के उपकरण पश्चिम दिशा, वायव्य अथवा आग्नेय कोण में रखे जाने चाहिएँ।

स्वागतकक्ष में म्यूजिक सिस्टम एवं स्पीकर अर्थात् ध्वनि से सम्बन्धित उपकरण को वायव्य कोण अथवा पश्चिम दिशा में रखा जा सकता है।

टेलीफोन भी वायव्य एवं पश्चिम दिशा में रखा जाना उचित होगा। कुछ विद्रजन् टेलीफोन को आग्नेय कोण में रखा जाना आवश्यक मानते हैं, क्योंकि इसमें विद्युत का प्रवाह रहता है, परन्तु लेखक का अपना अनुभव है कि टेलीफोन में विद्युत की अपेक्षा ध्वनि का अधिक महत्व एवं प्रयोग है, अतः इसके लिए वायु स्थान अर्थात् वायव्य कोण अथवा पश्चिम दिशा अधिक उचित एवं तर्कसंगत प्रतीत होता है।

स्वागतकक्ष में घड़ी पूर्वी, उत्तरी अथवा पश्चिमी दीवार पर लगाई जानी चाहिए।

दक्षिण दिशा में समय बताने वाला उपकरण कदापि नहीं लगाना चाहिये।

स्नानघर का स्थान :

स्नानघर के लिए सर्वाधिक उपयुक्त दिशा पूर्व होती है। स्नानघर दक्षिणी अथवा पश्चिमी नैर्ऋत्य कोण में भी बनाया जा सकता है।

यदि भवन का मुख्यद्वार पश्चिम दिशा की ओर है, तो स्नानघर पश्चिमी नैर्ऋत्य में बनाना चाहिए।

यदि भवन का मुख्यद्वार पूर्व दिशा की ओर है, तो स्नानघर पूर्वी–आग्नेय में बनाना चाहिए।

यदि भवन का मुख्यद्वार उत्तर दिशा की ओर है, तो भी स्नानघर पूर्व अथवा पूर्वी–आग्नेय में बनाना चाहिए।

स्नानघर का द्वार पूर्व अथवा उत्तर में होना चाहिए।

स्नानघर से सटा हुआ, रसोई के पास एक कपड़े एवं बर्तन धोने का स्थान होना सुविधाजनक है।

स्नानघर के फर्श का ढाल पूर्व अथवा उत्तर दिशा में होना चाहिए।

स्नानघर की दीवारों का रंग हल्का और मनभावन; जैसे—सफेद, हल्का नीला, आसमानी आदि होना चाहिए।

स्नानघर में शॉवर ईशान कोण, उत्तर अथवा पूर्व दिशा में होना चाहिए।

यूँ तो शौचालय स्नानघर में बनाना नहीं चाहिए, परन्तु यदि बनाना आवश्यक ही है, तो यह स्नानघर में पश्चिम अथवा वायव्य कोण की ओर बनाया जाना चाहिए।

यदि स्नानघर बड़ा है और उसी में वाशिंग मशीन भी रखी जानी है, तो मशीन को दक्षिण अथवा आग्नेय कोण में रखा जा सकता है।

स्नानघर में बाथटब पूर्व, उत्तर अथवा ईशान कोण में रखा जाना चाहिए।

स्नानघर में गीजर, हीटर एवं अन्य विद्युत उपकरण दक्षिण–पूर्व (आग्नेय) कोण में रखे जाने चाहिएँ।

स्नानघर रसोईघर के सम्मुख नहीं होना चाहिए।

शौचालय का स्थान :

भवन में शौचालय पश्चिम, वायव्य कोण में हटकर उत्तर की ओर अथवा दक्षिण में होना चाहिए।

शौचालय का दरवाजा पूर्व अथवा आग्नेय की तरफ खुलने वाला होना चाहिए।

शौचालय का फर्श भवन के फर्श से एक अथवा दो फीट ऊँचा होना चाहिए।

शौचालय का निर्माण इस प्रकार होना चाहिए कि शौचालय में बैठते समय मुँह उत्तर एवं पूर्व दिशा की ओर कदापि न हो। शौचालय में सीट इस प्रकार लगी होनी चाहिए कि बैठते समय आपका मुँह दक्षिण अथवा पश्चिम दिशा की ओर रहे।

शौचालय में पानी की टौंटी पूर्व अथवा उत्तर दिशा में होनी चाहिए।

शौचालय में संगमरमर की टाइल्स का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

शौचालय में एक खिड़की उत्तर, पश्चिम अथवा पूर्व दिशा में होनी चाहिए।



जिन भूखण्डोंकेपूर्व अथवा उत्तर मेंमार्ग हो, उन पर निर्मित मकानों में ईशान में शौचालय निर्माण करवाना अत्यन्त घातक होता है। मानसिक व पारिवारिक अशान्ति, असाध्य रोग, अनैतिक कामों से पतन होता है।

यदि आपके निर्मित भवन में त्रुटि अथवा अज्ञानवश ईशान कोण में शौचालय का निर्माण हो गया है तो इसके बाहर एक बड़ा आईना इस प्रकार लगाना चाहिए कि नैर्ऋत्य कोण से देखने पर आइना बिल्कुल सामने दिखाई दे। अथवा यहाँ पर शिकार करते हुए शेर अथवा मुँह फाड़े हुए शेर का बड़ा चित्र भी लगाया जा सकता है। साथ ही इस स्थान पर संलग्न चित्र के अनुसार बने मिट्टी के पात्र जिन पर कटावदार आलेखन हो, आकार बड़ा एवं पात्र की आकृति कैसी भी हो सकती है, रखे जाने चाहिएँ।

शौचालय रसोईघर के सम्मुख नहीं होना चाहिए।

संयुक्त स्नानघर एवं शौचालय :

संयुक्त स्नानघर एवं शौचालय पश्चिमी वायव्य या पूर्वी आग्नेय दिशा में बनाना चाहिए।

संयुक्त स्नानघर एवं शौचालय का दरवाजा मध्यपूर्व में रखा जा सकता है।

संयुक्त स्नानघर एवं शौचालय में शॉवर एवं नल ईशान कोण में होने चाहिएँ। कमोड आग्नेय अथवा वायव्य में लगाया जा सकता है।

यदि संयुक्त स्नानघर एवं शौचालय का दरवाजा वायव्य कोण में है, तो भी शॉवर ईशान कोण में ही रखना उचित है।

संयुक्त स्नानघर एवं शौचालय को कक्ष में पश्चिम अथवा वायव्य कोण की ओर बनाया जाना चाहिए।

संयुक्त स्नानघर एवं शौचालय में वाश-बेसिन पश्चिम की तरफ की दीवार में भी लगाया जा सकता है।

संयुक्त स्नानघर एवं शौचालय रसोईघर के सम्मुख नहीं होना चाहिए।

सैप्टिक टैंक स्थल :

सैप्टिक टैंक भवन के वायव्य कोण एवं उत्तर दिशा के मध्य में होना चाहिए।

सैप्टिक टैंक दक्षिण या पश्चिम की ओर नहीं बनाना चाहिए।

सैप्टिक टैंक वायव्य कोण और पश्चिम दिशा के मध्य, पश्चिम दिशा से वायव्य कोण की अपेक्षा अधिक हटता हुआ भी बनाया जा सकता है।

ईशान कोण में बनाया गया सैप्टिक टैंक आजीविका हेतु हानिकारक है।

उत्तर दिशा में बनाया गया **सैप्टिक टैंक** धन की हानि कराता है।

पूर्व दिशा में बनाया गया **सैप्टिक टैंक** मान-सम्मान का ह्रास कराता है।

आग्नेय कोण में बनाया गया **सैप्टिक टैंक** स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद होता है।

दक्षिण दिशा में बनाया गया **सैप्टिक टैंक** भवन-स्वामी के जीवन-साथी के जीवन के लिए हानिप्रद है।

नैर्ऋत्य कोण में बनाया गया **सैप्टिक टैंक** भवन-स्वामी के जीवन के लिए कुप्रभावी होता है।

पश्चिम दिशा में बनाया गया **सैप्टिक टैंक** मानसिक अशांति लाता है।

सैप्टिक टैंक भूमि-तल से नीचा होना चाहिए।

सैप्टिक टैंक सदैव दीवार से एक अथवा दो फीट हटाकर बनाना चाहिए।

सैप्टिक टैंक की लम्बाई पूर्व-पश्चिम दिशा में एवं चौड़ाई उत्तर-दक्षिण दिशा में होनी चाहिए।

सैप्टिक टैंक का तीन-चौथाई भाग जिसमें कि जल होता है, पूर्व दिशा में होना चाहिए एवं मल आदि के लिए स्थान उत्तर दिशा में होना चाहिए।

शयनकक्ष स्थान :

गृह-स्वामी का शयनकक्ष दक्षिण-पश्चिम कोण में अथवा पश्चिम दिशा में होना चाहिए। दक्षिण-पश्चिम अर्थात् नैर्ऋत्य कोण पृथ्वी तत्व अर्थात् स्थिरता का प्रतीक है। अत: इस स्थान पर शयनकक्ष होने से भवन में दीर्घकाल तक निवास होता है, परन्तु यदि गृह-स्वामी का कार्य ऐसा है जिसमें कि उसे बहुधा दूर पर अर्थात् घर से बाहर ही रहना पड़ता है, तो शयनकक्ष वायव्य कोण में बनाना श्रेयष्कर होगा।

शयनकक्ष में ही यदि पूजास्थल हो, तो वह शयनकक्ष के ईशान कोण की तरफ बनाना चाहिये। ऐसी स्थिति में पलंग पर सोते समय सिर पूर्व की तरफ किया जा सकता है ताकि पाँव पूजास्थल की ओर न रहें।

बच्चों, अविवाहितों अथवा मेहमानों के लिए पश्चिम दिशा में शयनकक्ष होना चाहिए, परन्तु इस कक्ष में नवविवाहित जोड़े को नहीं ठहराना चाहिए अर्थात् इस कक्ष में सम्भोग नहीं होना चाहिए।

शयनकक्ष में बेड अथवा पलंग इस प्रकार से हो कि उस पर सोने से सिर पश्चिम अथवा दक्षिण दिशा की ओर रहे। इस तरह सोने से प्रात: उठने पर मुख पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर होगा। पूर्व दिशा सूर्योदय की दिशा है, यह जीवनदाता और शुभ है। उत्तर दिशा धनपति कुबेर की मानी गयी है, अत: प्रात: उठते ही उस तरफ मुँह होना भी शुभ है।

यदि सोते समय सिर पश्चिम दिशा की ओर रखना हो, तो पलंग का एक सिरा पश्चिम की दीवार को छूता रहे। यदि सोते समय सिर दक्षिण दिशा की ओर रखना हो, तो पलंग का एक हिस्सा दक्षिण की दीवार को छूता रहे। उत्तर दिशा की ओर सिर करके नहीं सोना चाहिये। उत्तर दिशा में सिर करके सोने से नींद नहीं आती और आती है तो बुरे स्वप्न अधिक आते हैं।

सोते समय पैर मुख्यद्वार की ओर नहीं होने चाहिएँ, मृत्यु होने पर श्मशान ले जाने से पूर्व शरीर को मुख्यद्वार की ओर पैर करके रखा जाता है।

यदि भवन में एक से अधिक मंजिलें हैं, तो गृह-स्वामी का शयनकक्ष ऊपरी मंजिल पर होना चाहिए।

दक्षिण-पश्चिम अथवा दक्षिण में स्थित शयनकक्ष वयस्क विवाहित बच्चों के लिए भी उपयुक्त है।

शयनकक्ष में पलंग के दायीं ओर छोटी टेबिल आवश्यक वस्तु या दूध, पानी रखने के लिए स्थापित कर सकते हैं। शयनकक्ष में प्रकाश व्यवस्था करते समय पलंग पर मुख के सम्मुख प्रकाश नहीं पड़ना चाहिए अर्थात् लेटते समय आँखों पर विद्युत प्रकाश नहीं पड़ना चाहिए। प्रकाश सदैव पार्श्व या बायीं ओर से आना चाहिए।

पलंग शयनकक्ष के द्वार के पास स्थापित नहीं करना चाहिए, यदि ऐसा करेंगे तो चित्त में अशान्ति व व्याकुलता बनी रहेगी।

पलंग के सम्मुख दीवार पर प्रेरक व रमणीय चित्र लगाने चाहिएँ। आदर्शवादी चित्र आत्मबल को बढ़ाते हैं और दाम्पत्य जीवन भी आनन्दमय व विश्वस्त बना रहता है। शयनकक्ष का द्वार एक पल्ले का होना चाहिए।

विद्यार्थियों के लिए पश्चिम में सिरहाना उपयुक्त है। पूर्व की ओर सिरहाना वृद्धजनों के लिए उपयुक्त होता है। यह आध्यात्मिक चिंतन, ध्यान-साधना व अच्छी निद्रा के लिए उपयुक्त है।

ईशान में आग्नेय दिशा वाले कक्षों में छोटे बच्चों के लिए शयनकक्ष का प्रबन्ध कर सकते हैं। बड़ों के लिए यह वर्जित है।

पूर्वी व उत्तरी दिशा वाले कमरे का शयनकक्ष स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद होता है।

बायीं ओर करवट करके लेटने की आदत डालना अत्यन्त हितकारी है।

उत्तर दिशा में सिरहाना कदापि न करें।

शयनकक्ष में पलंग के ठीक ऊपर छत में कोई शहतीर (बीम) नहीं होना चाहिये।

पलंग को शयनकक्ष की दीवारों से थोड़ा हटाकर रखना चाहिए।

शयनकक्ष की आलमारियों का मुँह नैर्ऋत्य कोण अथवा दक्षिण दिशा की ओर नहीं खुलना चाहिये। यह नियम मात्र उन आलमारियों के लिये है जिनमें चेकबुक, बैंक या व्यापार सम्बन्धी कागजात, रुपये-पैसे तथा अन्य कीमती सामान रखा जाता है अर्थात् तिजौरी आदि। ऐसी आलमारियों में रखा धन धीरे-धीरे घटता जाता है। इन आलमारियों का मुँह दक्षिण दिशा को छोड़कर अन्य दिशाओं में रखा जाना चाहिये। जहाँ तक सम्भव हो, तिजौरी शयनकक्ष में न रखें।

कपड़े रखने की आलमारी वायव्य कोण अथवा नैर्ऋत्य कोण अथवा दक्षिण में होनी चाहिए।

ड्रैसिंग टेबिल उत्तर दिशा में पूर्व की ओर रखी जानी चाहिए।

शयनकक्ष में अध्ययन करने के लिए टेबल, लाईब्रेरी, पुस्तकों की आलमारी आदि बेडरूम के पश्चिम अथवा नैर्ऋत्य में होनी चाहिएँ। मेज-कुर्सी इस प्रकार रखी हों कि मुँह पूर्व की ओर या उत्तर की ओर रहे। इस तरह से अध्ययन करने वाला व्यक्ति प्रतिभा-सम्पन्न और प्रज्ञावान बनता है।

टेलीविजन, हीटर एवं अन्य विद्युत उपकरण कक्ष के आग्नेय कोण में होने चाहिएँ।

घड़ी पूर्व या पश्चिम की दीवार पर लगायें। उत्तर की दीवार भी अच्छी मानी जाती है।

शयनकक्ष में टांड आदि पश्चिमी अथवा दक्षिणी दीवार पर बनाना चाहिए, परन्तु उसके नीचे सोने का पलंग नहीं रखना चाहिये।

अन्न-भण्डारगृह :

अन्न-भण्डारगृह भवन में उत्तर दिशा अथवा वायव्य कोण में बनाना चाहिए।

अन्न-भण्डारगृह का द्वार नैर्ऋत्य कोण के अतिरिक्त किसी दिशा अथवा विदिशा में बनाया जा सकता है। वायव्य कोण में बनाये गये अन्न-भण्डारगृह में अन्नादि की कमी नहीं होगी।

अन्न-भण्डारगृह में रखे किसी डिब्बे, कनस्तर आदि को खाली नहीं रहने दें। अन्नादि के प्रयोग से इनके खाली होने की दशा में उनमें कुछ अन्नादि अवश्य शेष रहना चाहिए।

अन्न-भण्डारगृह में सामान रखने के लिए स्लैब आदि दक्षिणी अथवा पश्चिमी दीवार पर बनानी चाहिएँ, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर इन्हें चारों दीवारों पर बनाया जा सकता है, परन्तु पूर्वी एवं उत्तरी दीवार पर बनाई स्लैब की चौड़ाई दक्षिणी एवं पश्चिमी दीवार पर बनाई गई स्लैब से कम होनी चाहिए एवं इन पर अपेक्षाकृत हल्का सामान रखा जाना चाहिए।

नित्य प्रयोग में किए जाने वाले अन्नादि को कक्ष के उत्तर-पश्चिमी भाग में रखा जाना चाहिए।

अन्नादि का वार्षिक संग्रह दक्षिणी अथवा पश्चिमी दीवार के समीप होना चाहिए।

अन्न-भण्डारगृह के तेल, घी, मक्खन, मिट्टी का तेल एवं गैस सिलिण्डर आदि इसके आग्नेय कोण में रखा जाना चाहिए।

अन्न-भण्डारगृह में, स्थानाभाव की दशा में, डायनिंग टेबिल रखी जा सकती है।

अन्न-भण्डारगृह में पूर्वी दीवार पर लक्ष्मी-नारायण का चित्र लगाना चाहिए।

अन्न-भण्डारगृह के ईशान कोण में शुद्ध एवं पवित्र जल से भरा हुआ मिट्टी अथवा ताँबे का एक पात्र रखा जाना चाहिए। ध्यान रखें, यह पात्र कभी खाली न हो।

यदि अन्न-भण्डारगृह में अन्नादि के अतिरिक्त अन्य अल्प उपयोगी भारी

सामान अथवा बक्से आदि भी रखे जाने हैं, तो ये सभी वस्तुएँ दक्षिणी दीवार के साथ रखें।

भण्डारगृह :

भण्डारगृह भवन के अन्दर दक्षिणी अथवा पश्चिमी भाग में बनाया जाना चाहिए।

इस भण्डारगृह में अन्नादि का संग्रहण न करें। यदि स्थानाभाव में करना ही पड़े, तो दैनिक प्रयोग का अन्नादि रसोईघर में वायव्य कोण में रखें एवं अतिरिक्त अन्नादि इस भण्डारगृह में पश्चिमी दीवार के निकट उत्तर दिशा की ओर रखा जा सकता है।

भारी बक्से आदि अर्थात् भारी सामान दक्षिणी दीवार एवं पश्चिमी दीवार पर दक्षिण दिशा की ओर रखे जाने चाहिएँ।

शेष दोनों दिशाओं अर्थात् पूर्व एवं उत्तर में हल्के सामान रखे जाने चाहिएँ।

इस कक्ष का दरवाजा उत्तर अथवा पूर्व दिशा में होना चाहिए, साथ ही एक खिड़की भी इन्हीं दिशाओं में होनी चाहिए।

अनुपयोगी सामान के लिए भवन से बाहर चारदीवारी के निकट कबाड़घर बनाना चाहिए, परन्तु यदि कबाड़घर बना पाना सम्भव नहीं है और भण्डारगृह में ही यह सामान रखा जाना है, तो इस कक्ष का नैर्ऋत्य कोण प्रयोग करना चाहिए।

कबाड़घर की स्थिति :

भवन में अनेक अनुपयोगी अथवा यदा-कदा प्रयोग में आने वाली वस्तुओं को रखने के लिए कबाड़घर बनाया जाता है। कबाड़घर भवन के बाहर नैर्ऋत्य कोण में बनाना चाहिए। यदि ऐसा सम्भव नहीं है, तो भवन के अन्दर नैर्ऋत्य कोण में बनाना चाहिए।

कबाड़घर का द्वार आग्नेय, ईशान अथवा दक्षिण दिशा के अतिरिक्त किसी अन्य दिशा में होना चाहिए।

कबाड़घर का द्वार एक पल्ले का होना चाहिये।

कबाड़घर का द्वार टिन अथवा लोहे का बना होना चाहिए।

कबाड़घर का द्वार भवन के अन्य सभी द्वारों से आकार में छोटा होना चाहिए।

कबाड़घर के दरवाजे का रंग काला होना चाहिए।

कबाड़घर की लम्बाई और चौड़ाई न्यूनतम होनी चाहिए।

कबाड़घर में पानी नहीं रखना चाहिए।

कबाड़घर किसी व्यक्ति को रहने, सोने अथवा किराए पर नहीं दिया जाना चाहिए। गृह-स्वामी ऐसे व्यक्ति से सदैव परेशान रहेगा।

कबाड़घर में किसी देवी-देवता आदि का चित्र न रखें।

इस कबाड़घर के द्वार के समीप कोई गप-शप, बातचीत आदि नहीं करनी चाहिए, न ही जोर से ठहाका लगाएँ और न ही गुस्से में अथवा ऊँची आवाज में बातचीत करें, ऐसा करना घर की खुशियों के लिए हानिकारक है।

कबाड़घर के फर्श व दीवारों में सीलन (नमी) नहीं होनी चाहिए।

कबाड़घर के नीचे तहखाना नहीं होना चाहिए।

कोषागार का स्थान :

उत्तर दिशा का अधिपति कुबेर (देवताओं का कोषाध्यक्ष) माना गया है। अत: धन-सम्पत्ति एवं महत्वपूर्ण कागजात आदि रखने के लिए कोषागार बनाने के लिए सर्वोत्तम दिशा, उत्तर दिशा ही है।

तिजोरी के ईशान कोण में होने से धन-हानि निश्चित है।

आग्नेय कोण में तिजोरी होने से अनावश्यक व्यय वृद्धि होती है।

नैर्ऋत्य कोण में तिजोरी होने से कुछ समय के लिए, तो धन के संग्रहण में वृद्धि-सी प्रतीत होती है, परन्तु शीघ्र ही यह धन किसी दुष्कर्म अथवा चोरी आदि के कारण नष्ट हो जाता है।

यदि कोषागार का पृथक् कक्ष बना पाना सम्भव नहीं है, तो इस कार्य में प्रयोग की जानी वाली आलमारी, सेफ अथवा तिजोरी आदि को भवन के उत्तर दिशा वाले कक्ष में रखा जाना चाहिए।

कोषागार अथवा उत्तर दिशा के कक्ष में रखी तिजोरी कक्ष के दक्षिण-पूर्व एवं दक्षिण-पश्चिम कोणों के अतिरिक्त दक्षिण दिशा में इस प्रकार होनी चाहिए कि तिजोरी का द्वार उत्तर की ओर खुले, साथ ही यह दीवार से दो अथवा तीन इंच दूर हो।

तलघर का स्थल :

सम्पूर्ण भूखण्ड में तलघर कदापि नहीं बनवाना चाहिए। जैसाकि पूर्व में भी चर्चा की गई है कि भवन का उत्तरी एवं पूर्वी भाग दक्षिणी एवं पश्चिमी भाग की अपेक्षा नीचा रहना चाहिए, अत: तलघर भवन के उत्तर एवं पूर्व में बनाना चाहिए।

दक्षिण एवं पश्चिम दिशा में बनाया गया तलघर अत्यन्त कष्टदायक होता है।

यदि किसी निर्मित भवन में दक्षिण-पश्चिम दिशा में तलघर पहले से ही बना हुआ हो, तो उसका उपयोग भारी सामान रखने अथवा गैरेज हेतु करना चाहिए।

तलघर का प्रवेशद्वार पूर्वी-ईशान या दक्षिण-आग्नेय या पश्चिमी-वायव्य या उत्तरी-ईशान में करना चाहिए।

चूल्हे के आकार (त्रिशाल-आकार) का तलघर नहीं बनवाना चाहिए, यह भवन एवं भवन-स्वामी का नाश करता है।

सोपान अथवा सीढ़ियाँ :

सीढ़ियाँ भवन के पार्श्व में दक्षिणी व पश्चिमी भाग के दायीं ओर हों, तो उत्तम है।

ईशान में सीढ़ियाँ कभी ना बनायें।

सीढ़ियाँ उत्तरी अथवा पूर्वी दीवार से मिली हुई न हों, कम से कम तीन इंच दूर बनाएँ, परन्तु दक्षिणी अथवा पश्चिमी दीवार से मिली हुई बनानी चाहिएँ।

यदि किसी पुराने घर में सीढ़ियाँ उत्तर-पूर्व दिशा में बनी हों, तो उसके वास्तुदोष

को समाप्त करने के लिए छत पर दक्षिण-पश्चिम दिशा में एक कमरा बनाना चाहिए। सीढ़ियों का ढाल पूर्व दिशा अथवा उत्तर दिशा की ओर होना चाहिए अर्थात् पश्चिम दीवार से मिलकर पूर्व से पश्चिम की ओर चढ़ते हुए बनायें अथवा दक्षिणी दीवार से लगाकर उत्तर से दक्षिण की ओर चढ़ते हुए बनायें। सीढ़ियों का द्वार पूर्व या दक्षिण दिशा में होना शुभफलदायक होता है।

सीढ़ियों के नीचे एवं ऊपर द्वार रखने चाहिएँ एवं ऊपर का दरवाजा नीचे के दरवाजे से बारह भाग कम होना चाहिए।

यदि सीढ़ियाँ घुमावदार बनानी हों, तो उनका घुमाव सदैव पूर्व से दक्षिण, दक्षिण से पश्चिम, पश्चिम से उत्तर और उत्तर से पूर्व की ओर होना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि चढ़ते समय सीढ़ियाँ हमेशा बायें से दायीं ओर मुड़नी चाहिएँ। अब चाहे घुमाव कितने भी हों। सीढ़ियों के नीचे कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं करना चाहिए। यहाँ तक कि शौचालय भी नहीं होना चाहिए। सीढ़ियों के नीचे यदि शौचालय बनाना ही है, तो इसकी छत सीढ़ियों के आधार से भिन्न होनी चाहिए अर्थात् शौचालय की छत एवं सीढ़ियों के मध्य रिक्त स्थान होना चाहिए। सीढ़ियाँ हमेशा विषम संख्या में बनानी चाहिएँ। सीढ़ियों की संख्या ऐसी हो कि उसे 3 से भाग दें तो 2 शेष रहे, जैसे 5, 11, 17, 23, 29 आदि की संख्या।

लिफ्ट की आवश्यकता :

लिफ्ट भवन में उत्तर, ईशान या पूर्व दिशा में लगवानी चाहिए।

भवन में मध्य भाग में लिफ्ट कदापि न लगवाएँ।

लिफ्ट के लिए दक्षिण अथवा नैर्ऋत्य कोण वर्जित हैं।

कूप, नलकूप अथवा हैण्डपम्प :

कूप अथवा हैण्डपम्प के लिए पूर्वी अथवा उत्तरी ईशान कोण सर्वोत्तम स्थान है। उत्तरी ईशान या पूर्वी ईशान में कुआँ या गड्ढा हो, तो सुख, सम्पन्नता, वंशवृद्धि व प्रसिद्धि देता है।

कूप के तल में चौकोर अथवा वृत्ताकार वलय बिठाने पर भी कुंएँ की जगत का निर्माण गोलाकृति में ही होना चाहिए।

कूप की जगत, भवन के नैर्ऋत्य कोण की अपेक्षा नीची होनी चाहिए।

कूप की जगत उत्तर व पूर्व की दीवारों से सटी हुई नहीं होनी चाहिए।

भवन की चारदीवारी के ईशान कोण में पम्पसेट हो, तो उस पर बनने वाली छत की आकृति झोंपड़ी जैसी होनी चाहिए एवं यह निर्माण पूर्व व उत्तर की दीवारों से सटा हुआ नहीं होना चाहिए। कूप, नलकूप अथवा हैण्डपम्प के वर्जित स्थल मध्य भाग में कूप अथवा गड्ढा होने से भवन के स्वामी का विनाश होता है।

दक्षिण में कूप अथवा गड्ढा स्त्रियों की अकाल मृत्यु का कारण होता है।

दक्षिणी-आग्नेय कोण में कूप अथवा गड्ढा हो, तो उस घर की औरतें अस्वस्थ होंगी, बुरे व्यसन एवं भय का शिकार होंगी।

दक्षिण नैर्ऋत्य कोण में कूप अथवा गड्ढा हो, तो स्त्रियाँ रुग्ण, चरित्रहीन व कर्जदार होती हैं।

पश्चिम में कूप, अथवा गड्ढा पुरुषों के लिए अस्वास्थ्यकारी होता है।

पूर्वी-आग्नेय में कूप अथवा गड्ढा बीमारियों, अग्निभय और चोरी आदि का जनक होता है।

पश्चिमी नैर्ऋत्य कोण में कूप अथवा गड्ढा हो, तो पुरुषों को बीमारियाँ होती हैं एवं वे चरित्रहीन बन जाते हैं। पश्चिमी वायव्य अथवा उत्तरी वायव्य कोण में कूप अथवा गड्ढा होने से मुकदमेबाजी, चोरी, पागलपन आदि अनेक प्रकार के संकट पैदा होते हैं।

स्वीमिंग पूल एवं पानी की टंकी :

जमीन के नीचे रहने वाली पानी की टंकियाँ उत्तर, पूर्व या ईशान में बनानी सर्वश्रेष्ठ हैं।

भवन की छत पर रखी जाने वाली ऑवरहेड पानी की टंकी दक्षिण, पश्चिम अथवा नैर्ऋत्य कोण में बनानी चाहिये। नैर्ऋत्य कोण को राक्षसों का स्थान माना गया है। अत: भारी वजन वाली चीजें उसी दिशा में स्थापित करनी चाहिएँ।

भवन की छत पर पानी की टंकी ईशान में वर्जित है क्योंकि ईशान किसी भी प्रकार की ऊँचाई या भार को वहन नहीं कर सकती। ऐसा करने से अनेक कठिनाइयाँ पैदा होंगी।

यदि किसी कारणवश विवश होकर ईशान कोण में पानी की टंकी लगानी हो, तो इससे अधिक ऊँचा वायव्य कोण में कोई निर्माण कराना चाहिए, वायव्य कोण से अधिक ऊँचा आग्नेय कोण में तथा आग्नेय कोण से अधिक ऊँचा नैर्ऋत्य कोण में निर्माण अवश्य करवाना होगा। ऐसा करने पर ईशान में टैंक के निर्माण का वास्तुदोष दूर हो जाएगा।

तालाब अथवा स्वीमिंग पूल भी पूर्वी अथवा उत्तरी ईशान कोण में ही बनाये जाने चाहिएँ, तभी शुभफल प्राप्त होते हैं।

चारदीवारी :

भूखण्ड के चारों ओर चारदीवारी करानी आवश्यक है। चारदीवारी में कम-से-कम दो द्वार होने चाहिएँ। एक ही द्वार परेशानियों का कारण होता है।

द्वार चारदीवारी में किस स्थान पर बनाया जाएगा, इसके सम्बन्ध में नियम पूर्व में बताए जा चुके हैं। इन्हीं नियमों का पालन करते हुए चारदीवारी में द्वार बनाने चाहिएँ। किसी उद्योग, फैक्ट्री या दुकान से उसकी चारदीवारी ज्यादा ऊँची हो, तो अशुभसूचक है। इससे उद्योगपति की मूल पूँजी आगे नहीं बढ़ती।

भवन की दीवार तथा चारदीवारी की दीवार में अन्तर रखना आवश्यक है।

चारदीवारी के अन्दर उत्तर एवं पूर्व दिशा की ओर दक्षिण एवं पश्चिम दिशा की अपेक्षा अधिक रिक्त स्थान छोड़ना चाहिए।

चारदीवारी की दक्षिणी एवं पश्चिमी दीवार पूर्वी एवं उत्तरी दीवार की अपेक्षा अधिक ऊँची व मोटी होनी चाहिए, इससे भवन में निवास करने वालों को आरोग्य एवं धनलाभ की प्राप्ति होती है।

चारदीवारी की नैर्ऋत्य कोण की दीवार सबसे ऊँची होने पर यश, मान-सम्मान, धन व सुख प्राप्त होता है। चारदीवारी की वायव्य कोण की दीवार सबसे ऊँची होने पर आरोग्य व सुख मिलेगा।

चारदीवारी की आग्नेय कोण की दीवार सबसे ऊँची होने पर सर्वत्र यश मिलता है।

चारदीवारी की पूर्व दिशा की दीवार सबसे ऊँची होने पर ऐश्वर्य हानि तथा अशुभ है।

चारदीवारी की उत्तरी दीवार सबसे ऊँची होने पर धननाश, स्त्री रोग व कर्ज होता है।

चारदीवारी की ईशान कोण की दीवार सबसे ऊँची होने पर समस्त कार्य बाधित होते हैं।

ड्रेनेज अर्थात् पानी एवं मैले का निकास :

भवन में परनाला/मोरी (ड्रेनेज पाइप लाइन) उचित स्थान में बनाना बहुत महत्वपूर्ण कार्य होता है, क्योंकि प्रयोग किये गये पानी का ठहराव घर में सीलन पैदा करता है और बीमारी का कारण होता है, अत: घर बनाते समय ड्रेनेज लाइन बहुत ही व्यवस्थित तरीके की पहले से ड्रेनेज लाइन है, तो उसमें ही सही ढाल से जोड़ना होता है अन्यथा निम्नानुसार ड्रेनेज लाइन बनाने पर विचार किया जाना उचित रहेगा, परन्तु पाइप लाइन उचित मार्ग की दिशा पर ही आधारित होगी—

पूर्वोन्मुख भवन में ड्रेनेज पाइप उत्तर-पूर्व में पूर्व दिशा में उचित होती है।

उत्तरोन्मुख भवन में उत्तर में उत्तर-पूर्व की ओर बनायें।

दक्षिणोन्मुख भवन में दक्षिण-पूर्व में दक्षिण की ओर बनायें।

पश्चिमोन्मुख भवन में पश्चिम की ओर उत्तर-पश्चिम दिशा में बनायें।

पोर्टिको स्थल :

पोर्टिको का निर्माण भूखण्ड की दिशा पर निर्भर करता है। यदि भूखण्ड उत्तरोन्मुख है, तो पोर्टिको उत्तरी ईशान कोण—में बनाया जाना चाहिए।

यदि भूखण्ड वायव्योन्मुख है, तो पोर्टिको पश्चिमी वायव्य कोण—में बनाया जाना चाहिए।

यदि भूखण्ड पश्चिमोन्मुख है, तो भी पोर्टिको पश्चिमी वायव्य कोण—में बनाया जाना चाहिए।

यदि भूखण्ड आग्नेयोन्मुख है, तो भी पोर्टिको पूर्वी आग्नेय कोण—में बनाया जाना चाहिए।

यदि पूर्वोन्मुख भूखण्ड मे मार्ग उत्तर-पूर्व की ओर है, तो पोर्टिको उत्तर-पूर्व दिशा की ओर बनायें। पूर्व में भी बना सकते हैं।

यदि भूखण्ड ईशानोन्मुख है और मार्ग उत्तर या पूर्व में है, तो पोर्टिको को उत्तर-पूर्व में भी बना सकते हैं। पोर्टिको सुविधानुसार इस प्रकार बनाया जा सकता है कि उत्तर एवं पूर्व दिशा दक्षिण एवं पश्चिम से नीची रहे।

गैरिज का स्थान :

भवन में गैरिज बनाना मार्ग की स्थिति पर निर्भर है, अत: निम्नांकित सिद्धान्तों को आधार मानकर गैरिज को बनाया जाना चाहिए—

यदि भूखण्ड पूर्वोन्मुख है, तो गैरिज को दक्षिण-पूर्व दिशा में पूर्व की ओर बनायें।

यदि भूखण्ड उत्तरोन्मुख है, तो गैरिज को उत्तर-पश्चिम में उत्तर की ओर बनायें।

यदि भूखण्ड पश्चिमोन्मुख है, तो गैरिज को दक्षिण-पश्चिम क्षेत्र में पश्चिम दिशा की ओर बनायें।

यदि भूखण्ड दक्षिणोन्मुख है, तो गैरिज को दक्षिण-पश्चिम में पश्चिम दिशा की ओर बनायें।

भवन में गैरिज बनाने का स्थान सेवक कक्षों के समीप उत्तम रहता है।

सेवक का स्थान :

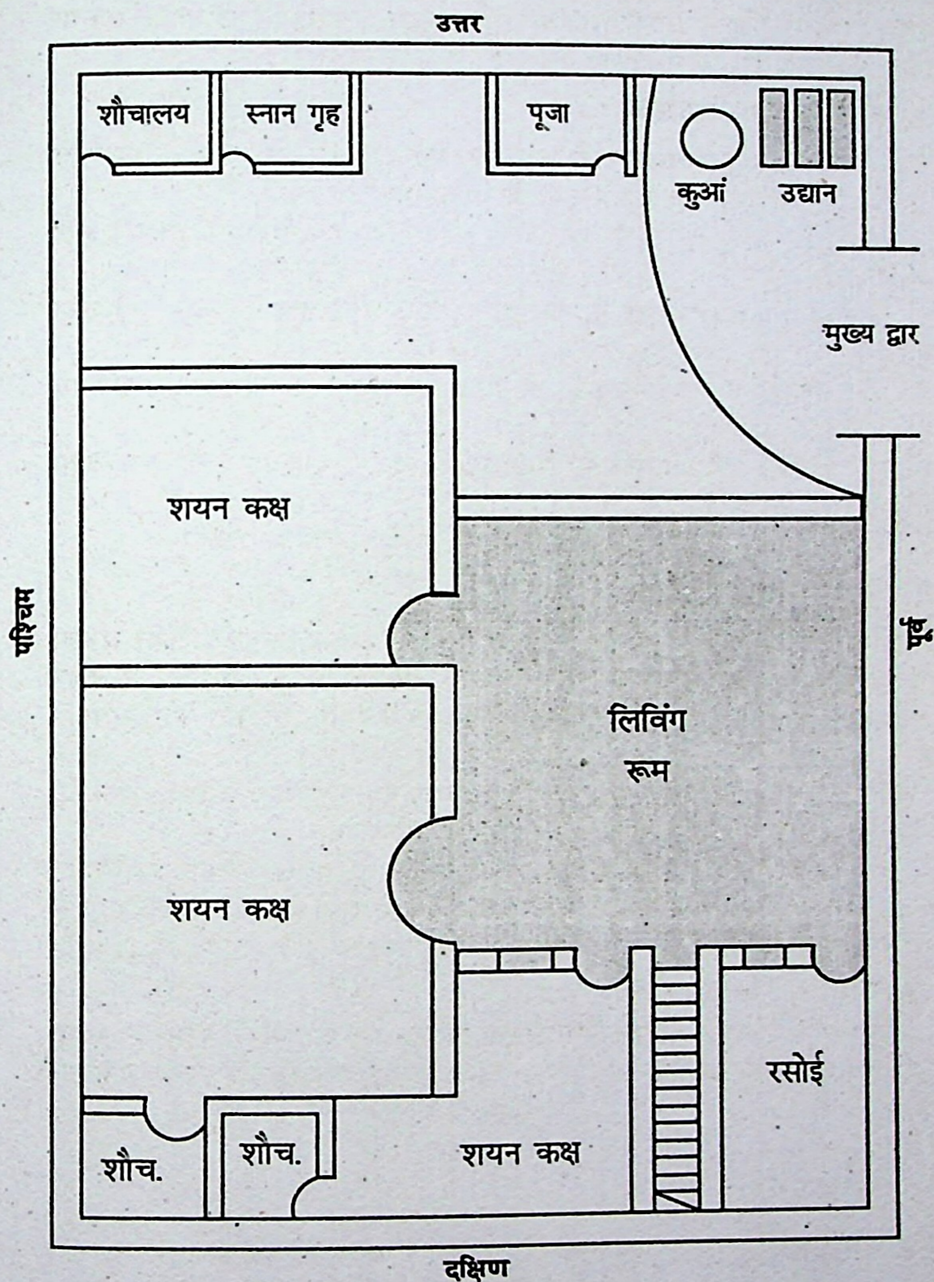
सेवक कक्ष यदि स्थानाभाव न हो, तो मुख्य भवन के निकट दक्षिणी अथवा पश्चिमी भाग में चारदीवारी से सटकर बनाना चाहिए। यदि मुख्य भवन के बाहर बनाना सम्भव न हो, तो भवन के अन्दर इसी भाग में बनाना चाहिए, परन्तु सेवक-कक्ष की दीवार कबाड़घर से लगी हुई न हो।

सेवक-कक्ष यदि परिस्थितिवश उत्तर अथवा पूर्व में ही बनाना आवश्यक हो, तो कक्ष को इन दीवारों से सटाकर नहीं बनाना चाहिए।

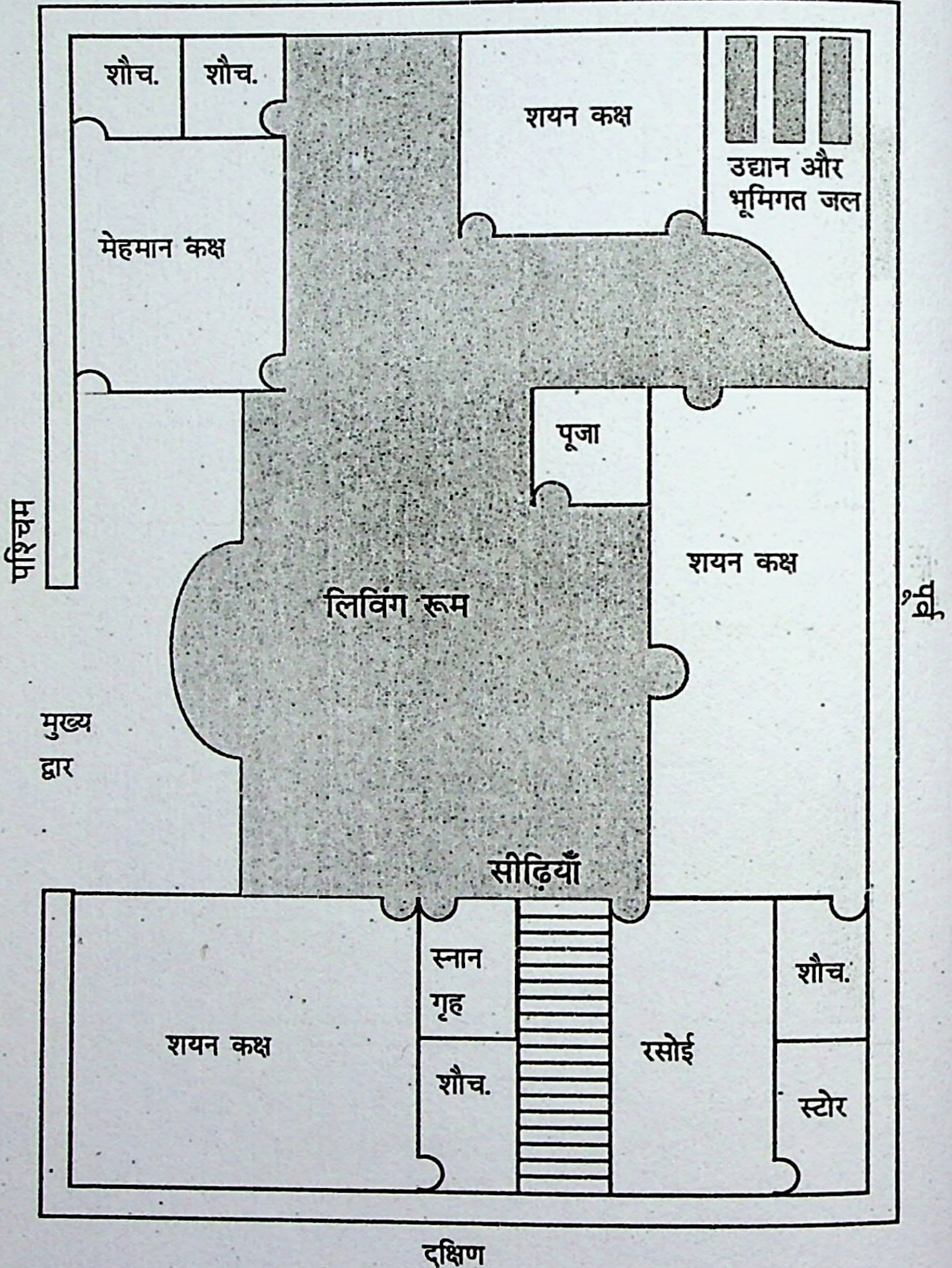
सेवक-कक्ष बनाने में कक्ष के अन्दर अन्य सभी वास्तु-नियमों का विशेष ध्यान रखना चाहिए विशेषत: दक्षिणी एवं पश्चिमी भाग पूर्वी एवं उत्तरी भाग से अधिक भारी होना चाहिए एवं कक्ष का ईशान कोण स्वच्छ एवं शुद्ध रहे।

भवनों का प्रारूप :

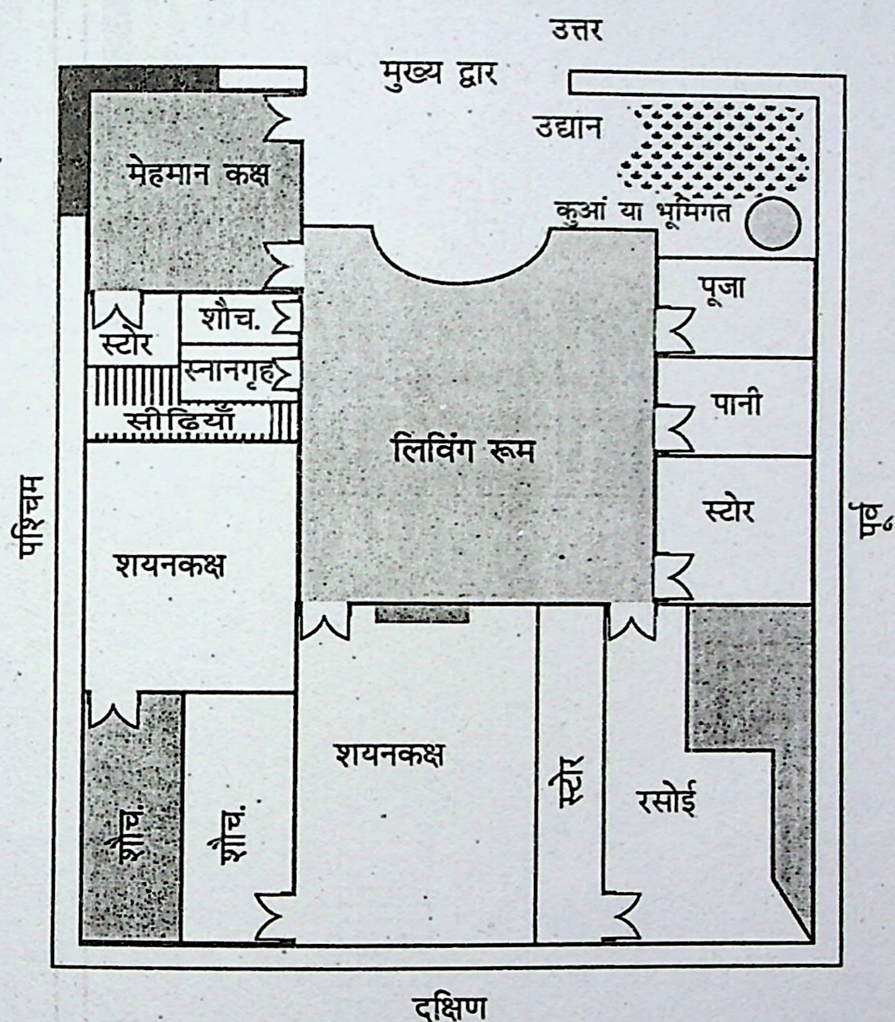
यहाँ कुछ भवनों के प्रारूप दिये जा रहे हैं। इन प्रारूपों के अनुसार भवन बनवाना हर प्रकार से सुख-समृद्धि का प्रतीक माना जाता है। ये प्रारूप अग्र प्रकार हैं—



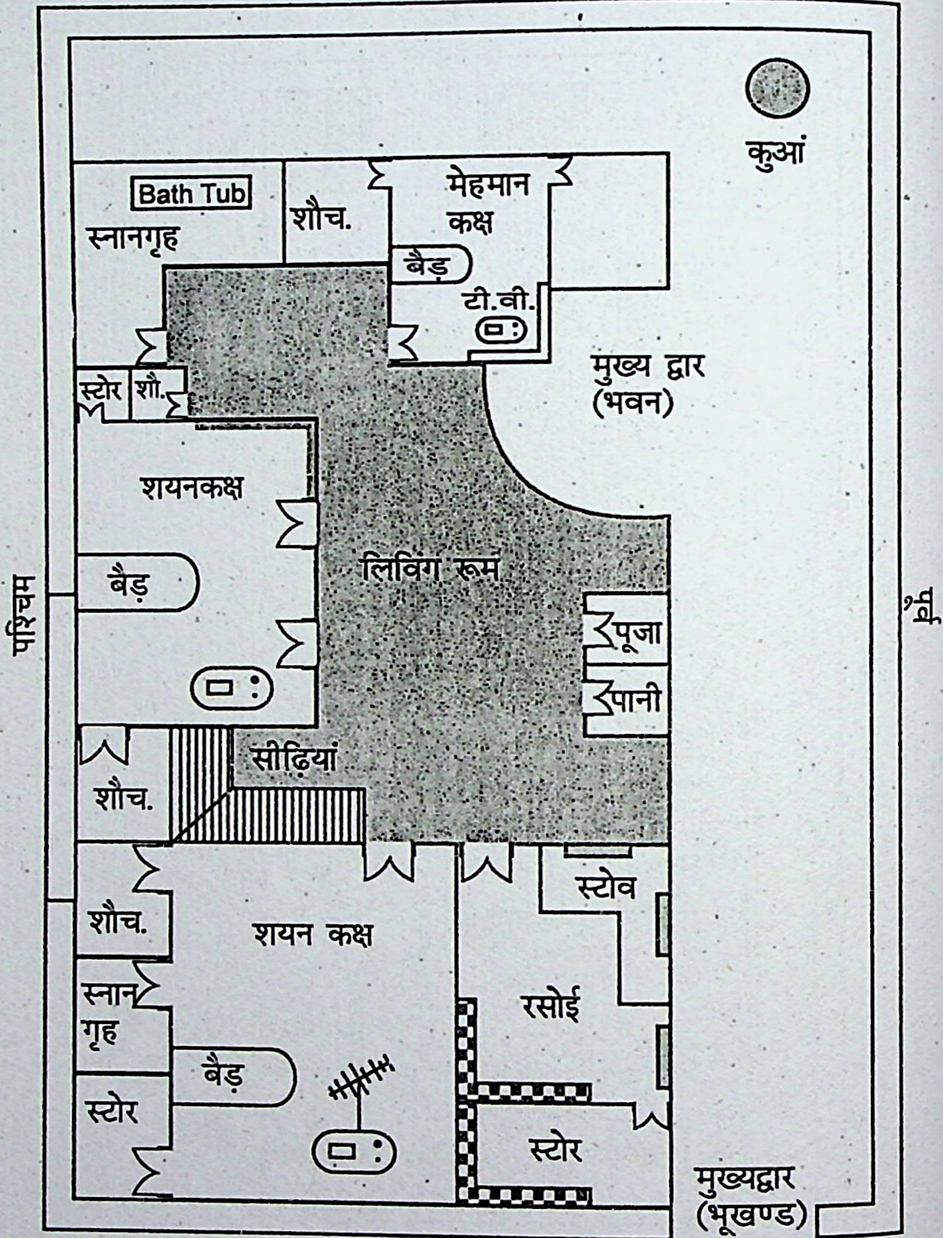
पूर्वोन्मुख भवन का प्रारूप



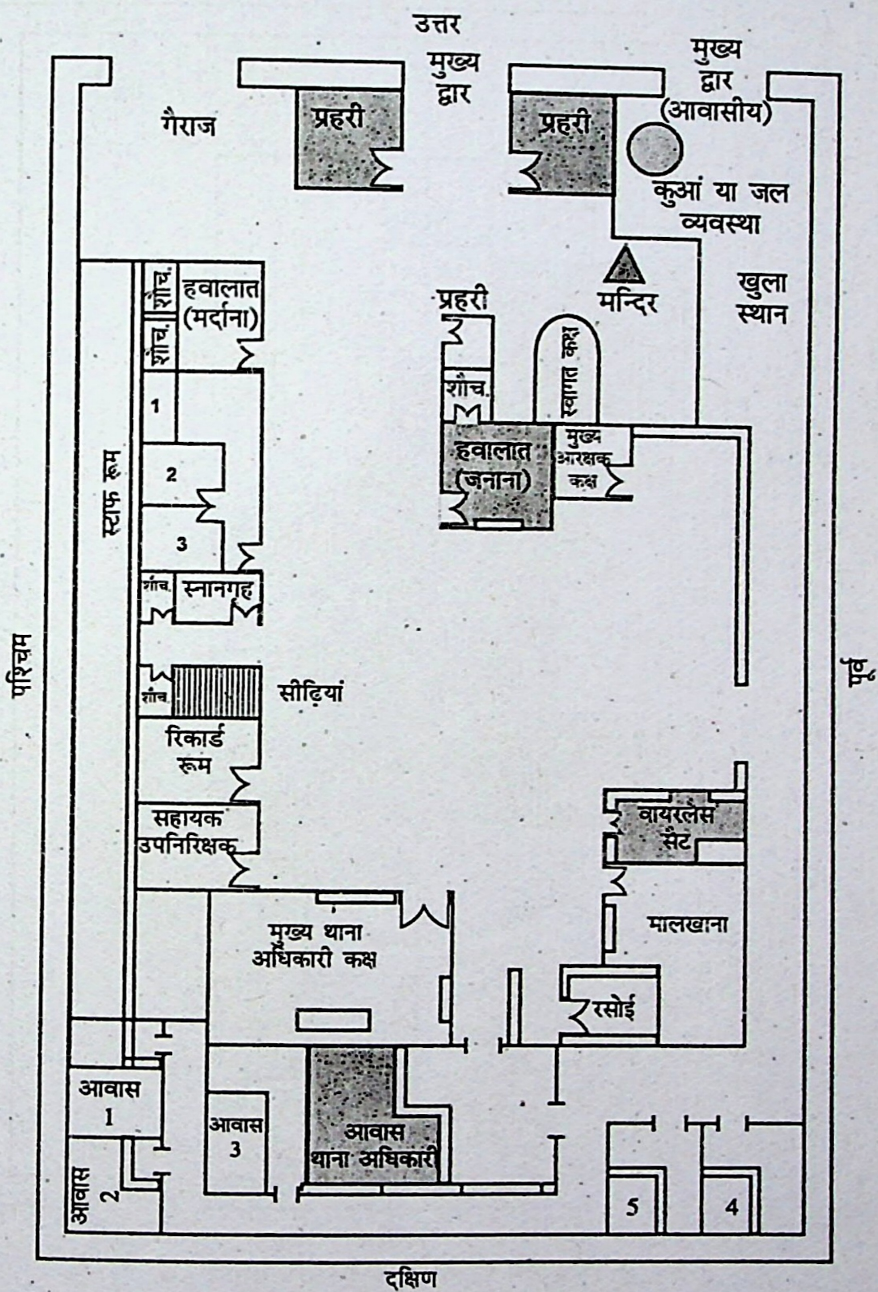
तीन शयन कक्षों का पश्चिममुखी भवन का प्रारूप



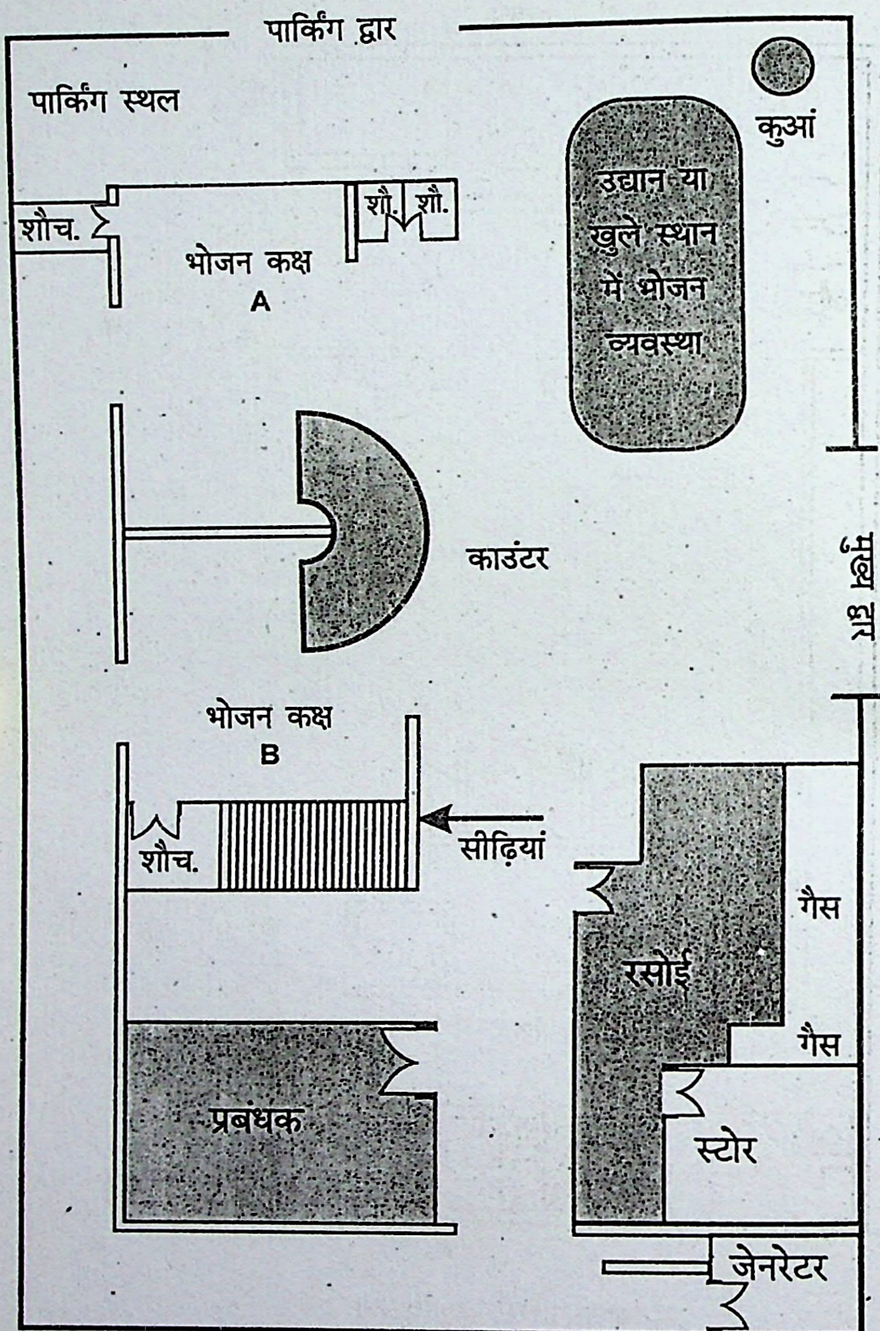
दो शयन कक्षों के आवास का प्रारूप
(उत्तर मुखी)



दो शयन कक्षों के भवन का प्रारूप
(दक्षिण मुखी भूखण्ड)



पुलिस थाना परिसर का विस्तृत प्रारूप



रेस्टोरेंट का विस्तृत रेखाचित्र

उत्तर

19

20

16

30 31 32 33 34

23

17

2

12 11

1

8

3

पश्चिम

पूर्व

21 21

9

10

24

4 5 6 7

35

14

13

18

25 26 27 28

दक्षिण

अस्पताल परिसर का विस्तृत प्रारूप

अस्पताल परिसर का विस्तृत प्रारूप

प्रयुक्त अंकों की सूची

1. आपातकालीन सेवाएं
2. वार्ड A
3. वार्ड B
4. से 7. विशेषज्ञों के कक्ष
8. एक्सरे
9. परीक्षण केन्द्र
10. दवाईयों का संग्रह
11. वार्ड A-शौचालय
12. वार्ड B-शौचालय
13. कैंटीन
14. प्रबंधक का कक्ष
15. कार्यालय
16. कुआं या भूमिगत टैंक
17. मुख्य द्वार (अस्पताल)
18. मुख्य द्वार (आवास)
19. छोटे पौधे या उद्यान
20. तालाब
21. आपरेशन कक्ष
22. पूजा या देव मूर्ति रखने का स्थान
23. पूछताछ
24. सीढ़ियां
25. से 28. आवास
29. वाहनों का पार्किंग स्थल
30. से 34. काटेज वार्ड
35. स्टाफ विश्राम गृह



वास्तु शास्त्र और भूमिज्ञान

भवन निर्माण के पूर्व वास्तुविज्ञ की सलाह के अनुरूप भवन-स्वामी तथा उसके निर्मित करने वाले चिनगरों (मिस्त्री-मजदूर) को मिट्टी-कार्य-ज्ञान का होना आवश्यक है।

भूमि को समतल करना :

भूमि की सफाई :

भूमि का समतल-कार्य आरम्भ करने से पूर्व उस स्थान पर लगी झाड़ियों, वृक्षों, घास एवं अन्य वनस्पति को भली-भांति साफ करना अति आवश्यक होता है। उस स्थान पर मलवा व कूड़ा-करकट कार्य-स्थल के 50 मीटर के अन्दर साफ करना होता है। वृक्षों की जड़ें भूमि-तल से 60 सेंटीमीटर की गहराई तक खोद देनी चाहिएँ। उस स्थान को मिट्टी से भर देना चाहिए।

रूपरेखा को सैट करना व बनाना:

आवश्यक स्थान पर स्तम्भों की चिनाई निर्देश तल चिह्न का कार्य करती है। यह निर्देश तल चिन्ह G.T.S. से सम्बंधित होते हैं। यह कार्य आरम्भ करने से पहले निर्माण तल का सही रूप में कीलें, बाँस व रस्सी अथवा बुर्ज की रूपरेखा तैयार करके दर्शाया जाता है। यह रूपरेखा कार्य पूरा होने तक रखी जाती है।

कटाई सामान्यत: ऊपरी सिरे से नीचे की ओर की जाती है। किसी भी स्थिति में भूमि के बीच में कटाई करना ठीक नहीं समझा जाता। कटाई के बाद सतह को अच्छी प्रकार समतल किया जाता है। भराई समानान्तर तहों के रूप में की जाती है, जबकि 20 सेमी० से ऊपर नहीं होनी चाहिए। भूमि जड़ों, घास व कूड़े से रहित होनी चाहिए। इस प्रकार हर समानान्तर सतह मिट्टी के ढोंकों से रहित होनी चाहिए। आवश्यकता होने पर इस पर पानी का छिड़काव किया जा सकता है। ऊपरी सतह भली-भाँति समतल की जानी चाहिए। कुटाई व भराई आवश्यकता अनुसार किसी भी सतह तक की जा सकती है।

मिट्टी के कार्य का वर्गीकरण :

विभिन्न प्रकार के मिट्टी के कार्यों का विवरण निम्न प्रकार है—

(1) समतल भूमि:

निम्न प्रकार की होती है—

(अ) वनस्पति या रासायनिक भूमि; तृण सहित भूमि, बालू, कंकड़, पथरी, ईंट बनाने की मिट्टी, चिकनी मिट्टी, गारा, सड़ी हुई लकड़ी के टुकड़े, परतदार पत्थर।

(ब) अ में बतायी गयी मिट्टी का मिश्रण।

(स) गारा-कंक्रीट भूमि की सतह से नीचे।

(द) सामान्यत: कोई भी सामग्री जिसमें खोदने के गुण हों व परतों में तोड़ने के गुण हों।

(2) सख्त भूमि :

निम्न प्रकार की होती है—

(अ) कठोर भारी मिट्टी, सख्त परतदार पत्थर, कोई भी मिट्टी जो कि बेलचे-फावड़े से आसानी से तोड़ी जा सके।

(ब) नाले की तल आधार की मिट्टी।

(स) सड़कों व मार्ग की सोलिंग और सख्त भीतरी मिट्टी का सख्त भाग।

(द) किसी भी प्रकार की सतह जो कि पत्थर के टुकड़ों को पीटकर बनायी गयी हो (घोल आदि)।

(य) चूना-कंक्रीट पत्थर की चिनाई (चूने के मसाले में) चूने या सीमेंट के मसाले में ईंट का काम यह सब भूमि की सतह से नीचे होता है।

सामान्य चट्टानें :

निम्न प्रकार की होती हैं—

(अ) चूने का पत्थर, लैटराईट, अन्य नर्म या पृथक् चट्टानें जो कि कीलों से तोड़ी जा सकें।

(ब) प्रचलित सीमेंट, कंक्रीट (भूमि सतह से नीचे)।

विभिन्न प्रकार की मिट्टियाँ :

मिट्टियाँ भी कई प्रकार की होती हैं—

(1) चट्टानें :

इस प्रकार की मिट्टी नींव डालने के कार्य के लिए प्रयोग की जाती है। इसकी धारण क्षमता बहुत होने के कारण यह दबाव डालने पर कम बैठती है।

(2) रेत :

यह सूखा रहने पर असमंजक है किन्तु गीला करने पर अल्पसमंजक हो जाता है। इसके कण 6 मिली मीटर से बड़े होते हैं। कई बार यह कण 2 मिली मीटर से छोटे भी हो सकते हैं। यह नींव में प्रयुक्त हो सकता है, यदि इसकी रोक का सही प्रबंध किया जा सके। यदि रेत पर दबाव डाला जाये तो आकार में फैल जाता है।

(3) काली मिट्टी :

यह पीट अथवा बंगम भी कहलाती है। गीला करने पर अधिक फैलाव के कारण नींव में इसका प्रयोग असफल माना जाता है। यह सूखने पर सिकुड़ जाती है। यह मिट्टी नदी के किनारों पर मिलती है व दक्षिण भारत में अधिक पाई जाती है।

(4) जलोढ़ भूमि :

यह मिट्टी पानी को आसानी से सोख लेती है, इसलिए इसका प्रयोग नींव के लिए उपयुक्त नहीं माना जाता। इसमें दोमट मिट्टी, चिकनी मिट्टी व रेत की परतें एक-के-बाद एक चढ़ी होती हैं।

(5) चिकनी मिट्टी :

इसके कण चिकने व मुलायम लगभग 2.002 मिली मीटर से भी छोटे आकार के होते हैं, इसलिए यह समंजक है। जब यह मिट्टी सूखी हो, तो ठोस (कठोर) आकार की होती है। यह पानी मिलाने पर फैल जाती है, इससे इसका आयतन बढ़ जाता है और सूखने पर सिकुड़ जाती है। इस प्रकार यह मिट्टी भी नींव के लिए उपयोगी नहीं मानी जाती।

पत्थर तथा चिकनी मिट्टी मिली मिट्टी बोल्डर चिकनी मिट्टी कहलाती है।

यदि इसमें रेतीले पत्थर हों, तो इसे हागिन कहते हैं, और वानस्पतिक वस्तुएं मिली होने पर दुमट मिट्टी कहते हैं।

(6) कंकड़ :

यह सामान्यत: रेत में मिला होता है। इसके कण गोल व नुकीले होते हैं। यह नींव के लिए उपयुक्त मानी जाती है, यदि इसमें चिकनी मिट्टी की मात्रा न हो। यह दबाव से फैलती नहीं। पर इसका फैलाव रोकना आवश्यक है।

(7) चाक :

यह कठोर होता है पर पानी में डालने से नर्म पड़ जाता है। इसका नींव में प्रयोग उपयुक्त नहीं माना जाता।

नींव की मिट्टी के गुण :

(1) मिट्टी की तह भार के लम्ब रूप होनी चाहिए, अन्यथा फिसलन हो जाती है
(2) मिट्टी पर वातावरण का प्रभाव नहीं होना चाहिए।
(3) मिट्टी एक-जैसी होना, असमानता से बचाती है।
(4) भार डालने पर मिट्टी को सब स्थानों पर बराबर बैठना चाहिए।

मिट्टी की धारण क्षमता :

वह अधिकतम भार, जो मिट्टी प्रति इकाई क्षेत्र पर किसी हानि के बिना सह सकती है; उसे मिट्टी की धारण क्षमता कहते हैं। यह दो प्रकार की होती है:-

(1) अन्तिम धारण क्षमता,
(2) सुरक्षित धारण क्षमता।

$$\text{सुरक्षित धारण क्षमता} = \frac{\text{अन्तिम धारण क्षमता}}{\text{सुरक्षा गुणांक}}$$

अन्तिम धारण क्षमता ज्ञात करने के विधि :

एक जाँच गड्ढा, जहाँ मिट्टी की धारण क्षमता जाननी हो, खोदा जाता है, इसका तल समतल होना चाहिए। इस पर एक लकड़ी का ऊर्ध्वाकार व एक वर्गाकार टुकड़ा

खड़ा कर दिया जाता है। यह टुकड़ा इस प्रकार रखा जाता है कि यह क्षैतिज दिशा में चल नहीं सकता। लकड़ी के नीचे एक लोहे की पट्टे काउन्टर संक स्क्रू की मदद से लगायी जाती है। इस पर एक लकड़ी के पट्टे पर सन्तुलित भार रखा जाता है।

भार के कारण मिट्टी धँसती है जिसका धँसना लैवल से मापा जाता है। भार को धीरे-धीरे बढ़ाया जाता है और धँसना समय-समय पर मापा जाता है। शुरू में मिट्टी अधिक धँसती है ताकि रिक्त स्थान भर जाये। इसे आरम्भिक धँसना कहते हैं। इस प्रकार एक स्थिति ऐसी आ जाती है जब कम भार रखने पर भी मिट्टी अधिक बैठेगी, इसे क्रांतिक भार कहते हैं। यही अन्तिम धारण क्षमता होती है।

$$\text{अन्तिम धारण क्षमता} = \frac{W}{\text{सुरक्षा गुणांक}}$$

$$\text{सुरक्षित धारण क्षमता} = \frac{\text{अन्तिम धारण क्षमता}}{\text{सुरक्षा गुणांक}}$$

$$\text{अन्तिम धारण क्षमता} = \frac{W}{\text{आधार प्लेट का क्षेत्रफल} \times \text{सुरक्षा गुणांक}}$$

धारण क्षमता सुधारने के तरीके :

(1) पानी को शीघ्र व सुविधापूर्वक निकालने का प्रबंध करना चाहिए।

(2) नींव की अधिक गहराई से, अधिक भार क्षमता होती है।

(3) नींव की चौड़ाई अधिक होने से, भार वितरण क्षेत्र बढ़ता है और भार की तीव्रता कम हो जाती है और नींव अधिक भार सहने योग्य हो जाती है।

(4) मिट्टी में मिले कंकड़, पत्थर आदि को रोलर की सहायता से सघन कर दिया जाता है।

(5) मिट्टी का फैलाव रोकने के लिए शीट फाइल का प्रयोग होना चाहिए।

(6) अधिक क्षेत्र के लिए सीमेंट ग्राउंडिंग की जा सकती है।

उत्खनन : आधार खाइयाँ, नालियाँ व उभरी भूमि के उत्खनन में मिट्टी का कार्य :

(अ) उत्खनन :

किसी भी गहराई लिए खाई की खुदाई यदि खाके के अनुसार हो व 5 मी० चौड़ी से अधिक न हो इसे आधार खाई की खुदाई कहा जाता है।

(ब) 1.5 मी० चौड़ाई से अधिक खुदाई व .30 सेमी० से अधिक गहराई उभरी तल की खुदाई कहलाती है।

(स) 1.5 मी० चौड़ाई और 10 वर्ग मी० प्लान के अनुमान से अधिक हो, पर गहराई 30 सेमी० से अधिक हो इसे सतह की उत्खन्न कहते हैं। यह भी 2 वर्ग मी० में मापी जाती है।





नींव की महत्ता

बिना नींव का महल भी भरभरा कर गिर जाता है। नींव-रहित अर्थात् आधार-विहीन भवन स्थायी नहीं होता। दोषपूर्ण नींव वाले भवनों में भी हर समय खतरा बना रहता है। नींव क्या होती है और उसका क्या कार्य होता है? आइए, उसे समझें।

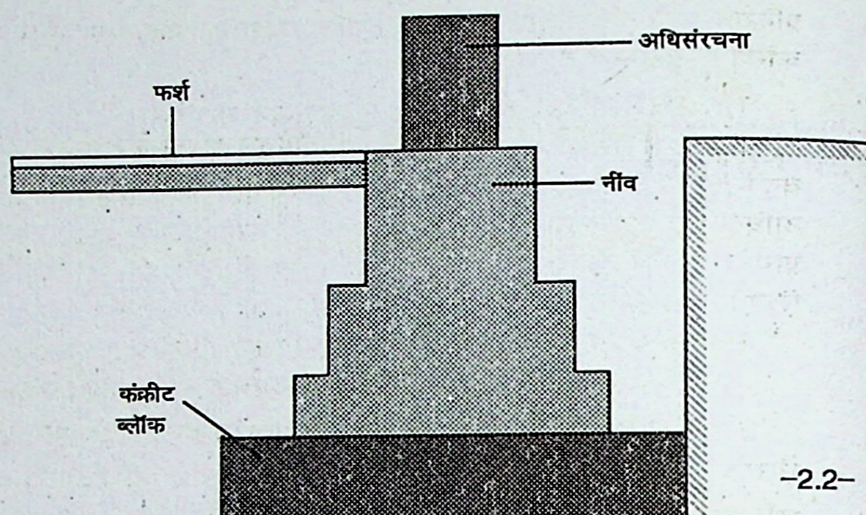
परिभाषा :

दीवारों की चिनाई करने से पहले जमीन को खोदकर और उसे समतल करके जो रोड़ी आदि उस पर बिछा दी जाती है, उसे नींव कहते हैं। नींव को आम बोलचाल में हम बुनियाद भी कहते हैं।

उद्‌देश्य :

नींव का पूरा उद्देश्य संरचना के भार को वहन करना नहीं है जैसा हम प्राय: समझते हैं। नींव का उद्देश्य दीवारों के बोझ को भूमि पर फैलाकर इस प्रकार डालना है कि भूमि उस सारे बोझ को पूरी तरह सहन कर सके। नींव जहाँ ऊपर के बोझ को भूमि के ऊपर फैलाकर इस प्रकार डालती है, वहाँ आस-पास की दीवारों का सम्बन्ध भी आपस में जोड़े रखती है। नींव यदि मजबूत हो तो मकान भूचाल आदि के झटके को अच्छी तरह सहन कर सकता है, किन्तु यदि नींव कमजोर हो, तो दीवारों में दरारें पड़ सकती हैं। यदि दरार पड़ जाएँ तो मकान की आयु कम हो जाएगी। हम देखते हैं कि पुरानी इमारतें आज तक खड़ी दिखाई देती हैं। कई सदियों पुराने मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर तथा अन्य स्मृति भवन आज भी देखने को मिलते हैं। इन भवनों के चिरकाल तक स्थित रहने का मूल कारण उनकी बुनियाद की मजबूती है।

जब नई ईमारत बनायी जाए तो बुनियाद की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। बुनियाद की गहराई और चौड़ाई उसके ऊपर पड़ने वाले भार के अनुसार रखी जानी चाहिए। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि भूमि में भार सहन करने की शक्ति सीमित होती है। अत: यदि हम उस पर उस शक्ति से ज्यादा भार डाल देंगे तो वह उसे सहन नहीं कर सकेगी। इसका परिणाम यह होगा कि वह भार नीचे-ही-नीचे धँसता जाएगा। बुनियाद अधिक गहरी नहीं होनी चाहिए अधिक चौड़ी होनी चाहिए, क्योंकि दीवार का बोझ भूमि के जितने फैलाव पर पड़ता है, उतनी ही भूमि की सहन-शक्ति अधिक होती है।



नींव के फेल होने के कारण :

नींव के फेल होने के कई कारण होते हैं, जिनमें से मुख्य कारण निम्न प्रकार हैं—

(1) नींव के नीचे अवभूमि का स्थिरीकरण समान न होना :

नींव में स्थिरीकरण समान न होने से संरचना में दरारें पड़ जाती हैं। दरारें पड़ने से संरचना बिल्कुल नष्ट हो जाती है। यदि संरचना के सारे क्षेत्र पर अवभूमि समान हो तथा पूरी नींव पर बोझ भी समान हो, तो सारी नींव पर बोझ का वितरण भी समान होगा। ऐसा होने पर अवभूमि का स्थिरीकरण भी समान होगा, परन्तु आमतौर पर ऐसा होता नहीं है। कभी-कभी संरचना का एक भाग दूसरे भाग से ऊँचा होता है। जो नींव ऊँचे भाग के नीचे होती है। वहाँ पर दबाव अधिक होता है तथा जो नींव कम ऊँचाई वाले भाग के नीचे होती है उस पर दबाव कम पड़ता है। इसके अलावा कभी-कभी ऐसा भी होता है कि संरचना की पूरी नींव में अवभूमि एक ही प्रवृत्ति की नहीं होती। नींव का एक भाग पथरीली अवभूमि पर आधारित हो सकता है, जब कि उसके पास वाले भाग की नींव किसी कमजोर अवभूमि पर आधारित हो। ऐसी हालत में नींव के नीचे अवभूमि में स्थिरीकरण असमान होगा।

असमान स्थिरीकरण से दूषित प्रभाव उत्पन्न हो सकते हैं। इन दूषित प्रभावों को हमें अवश्य रोकना चाहिए। इन्हें रोकने के लिए एक तो संरचना की नींव के किसी भी भाग पर, नींव के नीचे अवभूमि पर, उत्पन्न प्रतिबल उसकी धारणा क्षमता से अधिक नहीं होनी चाहिए। दूसरे अधिरचना का गुरुत्वाकर्षण केन्द्र और नींव का गुरुत्वाकर्षण केन्द्र एक ही रेखा पर होने चाहिएँ। तीसरे, कोई भी ऐसा सामान नींव में नहीं लगाना चाहिए जिसके किसी कारण से बिगड़ने या सरकने की सम्भावना हो और उसके फलस्वरूप नींव की सामर्थ्य और बाहरी प्रभावों का

प्रतिरोध करने की शक्ति घट सकें, क्योंकि रचना का यह भाग भूमिगत होने के कारण दिखाई नहीं देता।

(2) चिनाई का अवस्थापन बराबर न होना :

चिनाई में मसाले का उपयोग किया जाता है। जब मसाला सूख जाता है तो वह सिकुड़ने लगता है। जब मसाले के पकने से पहले ही मसाले की सन्धियों पर अधिक भार पड़ जाता है, तो वह दब जाता है। मसाले के सिकुड़ने और दबने से प्राय: चिनाई का अवस्थापन बराबर नहीं रहता। ऐसी स्थिति उत्पन्न न हो इसके लिए निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिएँ—

(a) मसाला न तो बहुत गाढ़ा और न ही बहुत पतला होना चाहिए। इसकी सघनता ठीक होने से वह आसानी से प्रयोग में लाया जा सकता है।

(b) जहाँ तक सम्भव हो संरचना की सभी दीवारें एक साथ तथा एक-सी ऊँचाई में उठायी जानी चाहिएँ। ऐसा भूलकर भी नहीं करना चाहिए कि एक दीवार को तो पूरी छत तक उठा दिया जाए और दूसरी अभी कुर्सी तक ही हो।

(c) संरचना की दीवारें एक दिन में अधिक से अधिक 1.5 मी० ऊँची उठाई जानी चाहिएँ।

(d) मसाले को अपनी पूरी सामर्थ्य धारण करनी चाहिए। मसाला अपनी पूरी सामर्थ्य तब धारण कर सकता है, जब उस पर कम से कम 10 दिन तक तराई की जाए।

(3) संरचना के आस-पास की मिट्टी का सरकना :

संरचना के आस-पास की मिट्टी तब सरकने लगती है, जब संरचना की नींव में काली मिट्टी हो। जब वायुमण्डल में परिवर्तन आता है, तो इस प्रकार की मिट्टी में भी परिवर्तन आने लग जाता है। यह मिट्टी अधिक नमी होने से फूल जाती है और कम नमी होने से सिकुड़ जाती है। जब यह मिट्टी फूलती या सिकुड़ती है, तो इसमें दरारें पड़ जाती हैं। इस दोष को रोकने के लिए एक तो नींव की गहराई अधिक रखनी चाहिए। नींव की गहराई अधिक होने से मिट्टी में उत्पन्न होने वाली दरारें नींव के आधार तक नहीं पहुंचतीं। दूसरे, नींव के नीचे की मिट्टी पर दबाव कम पड़ना चाहिए। तीसरे, ऐसी मिट्टी और भूमि के स्तर के नींव संरचना के किसी भाग के साथ सम्पर्क नहीं होने देना चाहिए। इसके लिए नींव के दोनों तरफ खाई खोदकर उसमें रेत भरी जा सकती है।

(4) नींव के नीचे की भूमि की नमी का सोखना :

कई बार ऐसा भी होता है कि संरचना के पास पेड़ होता है। यदि इस पेड़ की जड़ें संरचना की नींव तक पहुँच जाएँ, तो संरचना को खतरा हो सकता है। जड़ें अपना काम शुरू कर देती हैं। वे नींव की मिट्टी से, मिट्टी की नमी सोख लेती है। नमी के सोखे जाने पर मिट्टी में दरारें पड़ जाती हैं। दरारें पड़ने से सारी संरचना नष्ट हो जाती है।

हमारे देश में कई बार वर्षा अधिक होती है तथा कई बार कम। जब वर्षा कम होती है, तो भूमि के नीचे जलस्तर भी कम हो जाता है। जलस्तर के नीचे चले जाने से मिट्टी में नमी कम हो जाती है, जिससे उसमें दरारें पड़ जाती हैं और संरचना को खतरा हो जाता है।

इन प्रभावों से बचने के लिए हमें एक तो यह देखना चाहिए कि नींव बहुत गहरी खुदाई करके रखी जाए तो इससे मिट्टी में उत्पन्न दरारों का नींव की सुरक्षा पर प्रभाव नहीं पड़ता। दूसरे, संरचना के पास पेड़ नहीं लगाए जाने चाहिएँ। पेड़ कम से कम इतनी दूरी पर लगाए जाने चाहिएँ कि उनकी जड़ें संरचना तक न पहुँच सकें। तीसरे, यदि संरचना बहुत महत्वपूर्ण हो, तो उसके लिए राफ्ट नींव का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(5) पार्श्विक दबाव के कारण संरचना का उलटना :

यदि संरचना की दीवार पर पार्श्विक बल पड़ रहा हो, तो दीवार किसी भी समय उलट सकती है। पार्श्विक दबाव पड़ने के कई कारण हो सकते हैं। पार्श्विक दबाव एक तो डाट के कारण पड़ सकता है, दूसरे—यह ढालू छत के कारण पड़ सकता है तथा तीसरे यह तेज हवा के कारण पड़ सकता है। हमें संरचना को इस प्रभाव से सुरक्षित रखना चाहिए। इसे सुरक्षित रखने के लिए हमें नींव इस प्रकार से रखनी चाहिए कि वह हर हालत में स्थिर रहे।

(6) वायुमण्डल का प्रभाव :

जब वर्षा होती है, तो इसका पानी जमीन के अन्दर रिसता रहता है। पानी के रिसने से जमीन के अन्दर जो लवण उपस्थित होते हैं वे घुल जाते हैं। जब नींव को यह पानी स्पर्श करता है, तो पानी में घुले हुए ये लवण नींव-पदार्थों पर रासायनिक क्रिया करते हैं जिनसे ये पदार्थ नष्ट हो जाते हैं। इन पदार्थों के नष्ट हो जाने से नींव खराब हो जाती है। यदि नींव काफी गहरी न रखी जाए तो वर्षा के पानी के बहाव से नींव की मिट्टी बह जाती है और नींव नंगी हो जाती है। मौसम के साथ-साथ भूमिगत जलस्तर भी बदलता रहता है। इस परिवर्तन से नींव के स्पर्श में आने वाली मिट्टी सिकुड़ती है। इससे भी नींव में दरारें पैदा हो जाती हैं। इन प्रभावों से बचने के लिए एक तो नींव गहरी खोदी जानी चाहिए; दूसरे नींवों में से जल निस्तारण का प्रबन्ध होना चाहिए; तीसरे, नींवों में कंक्रीट व पत्थरों की चिनाई की जानी चाहिए। नींव में मिट्टी भरकर इसकी खूब कटाई की जानी चाहिए ताकि वर्षा भी इसमें रिस न सके।





मिट्टी-जाँच विधि

नींव की प्लान तैयार करने से पहले नींव वाले स्थान की मिट्टी की जाँच करना बहुत जरूरी होता है। मिट्टी की जाँच कर लेने से हमें पता चल जाता है कि मिट्टी में क्या गुण हैं। हमें यह पता चल जाता है कि वह कितना बोझ सहन कर सकती है या कितना बोझ उस पर डाला जा सकता है। दूसरे शब्दों में इसके गुणों का पता लग जाने से हम उसके अनुसार ही नींव अभिकल्पन कर सकते हैं। मिट्टी की जाँच करने के लिए प्राय: निम्नलिखित तरीके अपनाये जाते हैं—

(1) निरीक्षण :

किसी भी संरचना का डिजाइन तैयार करने से पहले वहाँ के स्थल का निरीक्षण करना बहुत जरूरी है। इसके लिए उस क्षेत्र में बने गड्ढों और पहले बनी हुई इमारतों की नींव से हम वहाँ के स्थल का अन्दाजा लगा सकते हैं। उस क्षेत्र में नये गड्ढे खोदकर भी उस क्षेत्र के भूविज्ञान का अध्ययन किया जा सकता है। नगरपालिका, विकास प्राधिकरण या अन्य सोसाइटी जो सारे क्षेत्र के निर्माण की देखभाल करती है और मकानों के नक्शे की स्वीकृति देती है उसके पास उस क्षेत्र की वहन शक्ति का ब्यौरा होता है। उससे पूछताछ करके व कच्चे कुओं का अध्ययन करके उस क्षेत्र की अवभूमि की मूल्यवान जानकारी इकट्ठी की जा सकती है।

(2) गहराई नापना :

यह परीक्षण–विधि केवल नरम मिट्टी में ही उपयोगी है । जहाँ मिट्टी, बजरी या रेत हो, इस विधि द्वारा प्राप्त परिणाम विश्वसनीय नहीं होते तथा उनकी जांच करने के लिए और निश्चित उपाय करने चाहिएँ । इस परीक्षण–विधि में 2.5 सेमी० से 4 सेमी० व्यास की एक नुकीली छड़ का प्रयोग किया जाता है । यह छड़ हथौड़े से या किसी दूसरे तरीके से जमीन में घुसेड़ दी जाती है । थोड़ी–थोड़ी गहराई तक छड़ को घुसेड़ कर बाहर निकाल लिया जाता है तथा छड़ पर लगी मिट्टी का परीक्षण किया जाता है । यह छड़ तब तक जमीन में घुसेड़ी जाती है जब तक कि उसकी नोक किसी सख्त आधार से टकराती नहीं, बीच–बीच में हम छड़ की नोक पर चिपटी मिट्टी की विभिन्न तहों की गहराई का अन्दाजा लगा सकते हैं । इसके अलावा हथौड़े की चोट से जितनी छड़ अन्दर घुसे उससे मिट्टी की परतों की गहराई का अन्दाजा लगा संकते हैं । एक तजुर्बेकार व्यक्ति छड़ के अन्दर घुसने की दर से

मिट्टी के गुणों का आसानी से अन्दाजा लगा सकता है।

मिट्टी में तथा रेत में कम गहरी नींवों का परीक्षण करने के लिए एक उपकरण, जिसे लकड़ी का बरमा कहा जाता है, बहुत लाभदायक होता है। यह लकड़ी में छेद करने वाले गिटगिट जैसा होता है, उससे ज्यादा सख्त होता है।

(3) बेधन विधि :

भिन्न-भिन्न प्रकार के बरमों से मिट्टी में छिद्र किए जा सकते हैं, इसलिए इसे विधि को बेधन विधि कहते हैं। साधारण भवनों की नींवों का परीक्षण करने के लिए ये बरमे बहुत सुविधाजनक और उपयोगी होते हैं। बेधन की विभिन्न विधियाँ इस प्रकार हैं—

(अ) बरमा-बेधन विधि :

मिट्टी वाली और रेतीली जमीन में परीक्षण करने के लिए यह विधि बहुत लाभदायक विधि है। इसमें बरमे को सीधा खड़ा किया जाता है तथा उसके बाद उसके ऊपरी भाग पर लगे हुए दस्ते (हैण्डल) के द्वारा उसे नीचे को दबाते हुए घुमाया जाता है। लगभग एक फुट गहरा छिद्र करने के बाद उसे बाहर निकाल लिया जाता है तथा उसके द्वारा इकट्ठी की गई मिट्टी परीक्षण के लिए रख ली जाती है।

इस बरमे की मदद से लगभग 15 मी० गहराई तक मिट्टी का परीक्षण किया जा सकता है। पथरीली या बजरी वाली जगह पर इस विधि का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

(ब) धारा-छेदन विधि :

इस विधि में चिकनी मिट्टी के कण नीचे नहीं बैठते। चिकनी मिट्टी के कण नीचे न बैठने के कारण यह अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। इस विधि में ये दोष होते हुए भी जो जानकारी इससे मिलती है वह बहुत महत्वपूर्ण जानकारी होती है। अब हम देखते हैं कि यह विधि क्या है? इस विधि का उपयोग तब किया जाता है जब ऊपर से ज्यादा गहराई पर पथरीली जमीन में परीक्षण करना होता है। इस विधि में एक खोखला लोहे का पाइप कुछ गहराई तक गाड़ दिया जाता है। इसके बाद इस खोखले पाइप में गैस का एक पाइप डाल दिया जाता है। यह गैस पाइप खोखले पाइप से व्यास में कम होता है। इसके बाद इस गैस पाइप के ऊपरी सिरे को जल प्रदान व्यवस्था से जोड़ दिया जाता है। गैस पाइप के निचले सिरे का व्यास कम होता है। जब गैस पाइप से दबाव के कारण पाइप के नीचे जो मिट्टी होती है वह उखड़ जाती है और पानी में घुल जाती है। घुली हुई यह मिट्टी फिर पाइपों के बीच की खाली जगह से निकलकर धरातल पर आती है। तब ऐसी मिट्टी को इकट्ठा कर लिया जाता है। मिट्टी को इकट्ठा करने के बाद उसका परीक्षणं कर लिया जाता है तथा परीक्षण करने से यह पता चल जाता है कि मिट्टी के क्या गुण हैं?

(स) आघात-छेदन विधि :

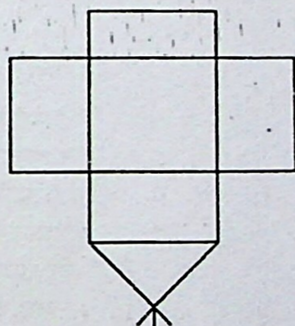
इस विधि में छेनी आदि काटने वाले भारी उपकरणों द्वारा लगातार चोटें मार-मार

कर पत्थरों जैसी कड़ी भूमि वेध दी जाती है, ताकि वह टूटकर पिस जाए। उसके बाद इन उपकरणों द्वारा किए सुराख में पानी डाल दिया जाता है। पानी डालने से बारीक मिट्टी घुल जाती है। मिट्टी घुल जाने पर उसे पम्प के माध्यम से या किसी अन्य तरीके से बाहर निकाल लिया जाता है। तब इस घुली हुई मिट्टी को सुखा लिया जाता है। तब सूखी हुई इस मिट्टी का परीक्षण कर लिया जाता है। परीक्षण करने से मिट्टी के गुण ज्ञात होते जाते हैं। हमें यह याद रखना चाहिए कि यह परीक्षण पथरीली जमीन के लिए लाभदायक होता है न कि चिकनी मिट्टी वाली जमीन के लिए।

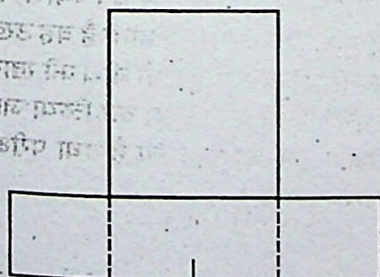
(द) गुल्ली–बेधन विधि :

जब पथरीली चट्टानों को परीक्षण के लिए बेधना हो, तो इसके लिए गुल्ली–बेधन विधि अपनाई जाती है। गुल्ली–बेधन विधि चिकनी मिट्टी तथा रेत आदि पर परीक्षण करने के लिए भी अपनाई जाती है। चिकनी मिट्टी में हथौड़े के प्रहारों द्वारा पहले इस्पात की नाल धँसाई जाती है। उसके बाद उसके अन्दर का द्रव्य का पोले बरमे के माध्यम से बाहर निकाल लिया जाता है। चट्टान बेधने के लिए एक फलका प्रयोग में लाया जाता है, जो घूमते हुए काटने वाले उपकरणों के अपघर्षण से छिद्र करता है। चूँकि बरमे में एक खोखली नाली होती है, इसलिए यह सुविधापूर्वक चट्टान की ठोस से ठोस गुल्ली को ऊपर ले आता है।

मिट्टी की धारण शक्ति :



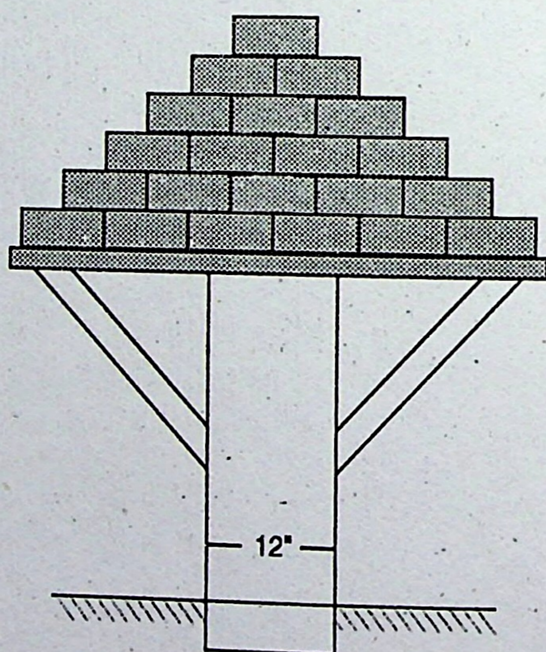
किसी भी मिट्टी की धारण क्षमता से अभिप्राय है कि वह मिट्टी संरचना का कितना बोझ सुरक्षापूर्वक वहन कर सकती है। मिट्टी की धारण मिट्टी के कणों पर निर्भर करती है। मिट्टी के आयतन का जितना ज्यादा भार होगा उसकी धारण क्षमता उतनी ही ज्यादा होगी। संरचना की सुरक्षा की दृष्टि से इस बात की जरूरत है कि उसकी नींव पर अधिक भार न डाला जाये। यदि भूमि की धारण शक्ति एक टन प्रति वर्गफुट सहन करने की है और हमने उसके ऊपर एक टन बोझा इस प्रकार डाल दिया है कि भूमि का ½ वर्ग फुट उसे सहन करे तब वह भूमि उस सारे बोझ को सहन कर सकेगी और बोझ नीचे ही नीचे रसता जाएगा जैसा संलग्न चित्र में दिखाया गया है।



किन्तु यदि हम ऊपर के एक टन बोझ को इस प्रकार डालें कि दो वर्ग फुट भूमि के ऊपर दबाव पड़े, तो वह भूमि उसे अच्छी तरह से सहन कर सकेगी जैसा की चित्र में दिखाया गया है।

मिट्टी की धारण क्षमता का परीक्षण :

मिट्टी की धारण क्षमता ज्ञात करने के कई तरीके हैं। इनमें से एक तरीका यह भी है कि जिस मिट्टी की जाँच करनी हो उस भूमि में एक फुट चौड़ा, एक फुट लम्बा और दो फुट गहरा गड्ढ़ा खोद दिया जाए। उस गड्ढे के ऊपर का लकड़ी का एक वर्ग फुट चौकोर टुकड़ा रख दिया जाए। लकड़ी के इस टुकड़े की लम्बाई या तो आठ फुट या दस फुट हो। ऐसे टुकड़े को उस गड्ढे के अन्दर सीधा खड़ा कर देना चाहिए। उस लकड़ी के ऊपर वाले भाग पर लकड़ी के मोटे तख्ते इस तरह से लगा देने चाहिएँ कि उन पर जो बोझ पड़े, वह बीच वाले लकड़ी के टुकड़े के ऊपर पड़े जैसाकि नीचे के चित्र में दिखाया गया है। तत्पश्चात् उन पट्टों के ऊपर रेत से भरी हुई बोरियों को इस तरह से रखना चाहिए कि उन सब बोरियों का भार उस पट्टे पर पड़े। जितना वजन हम एक वर्ग फुट भूमि पर डालना चाहते हैं, उससे 25 प्रतिशत अधिक वजन डालकर कई घन्टों तक उस खम्भे की भूमि में रसने देना चाहिए। जब हम यह देख लें कि खम्भा अब नीचे नहीं रस रहा है, तो हमें यह समझ लेना चाहिए कि इतनी गहराई में मिट्टी की शक्ति निश्चित बोझ को सहन कर सकती है। खम्भे के ऊपर यदि हम फुटों और इंचों के निशान लगा दें, तो एक दिन में रसने के हिसाब का भी पता लग सकता है। इसी तरीके से नींव की गहराई का अन्दाजा लगाया जा सकता है।



- 24 -

मिट्टी की धारण क्षमता में सुधार करना :

मिट्टी की धारण क्षमता में सुधार करने के कई तरीके हैं जिनमें से कुछ तरीके नीचे बताए गए हैं—

(1) यदि नींव को अधिक गहराई तक ले जाया जाए तो इससे नींव की मिट्टी की धारण क्षमता बढ़ जाती है, परन्तु गहराई बढ़ने के साथ-साथ परतों की नमी नहीं बढ़नी चाहिए।

(2) जहाँ मिट्टी नर्म हो वहाँ पर रेत, बजरी, रोड़ी या रेत फैलाकर खूब कुटाई करने से नर्म मिट्टी की धारण क्षमता बढ़ जाती है।

(3) हम यह तो जानते ही हैं कि मिट्टी की धारण क्षमता एक निश्चित नमी पर अधिकतम होती है। इसलिए हम मिट्टी में से जल निकास व्यवस्था सुधार कर उसकी धारण क्षमता बढ़ा सकते हैं।

(4) नींव में रेत भरकर कुटाई करने से उसकी धारण क्षमता बढ़ सकती है। यह उन स्थानों पर नहीं करना चाहिए जहाँ यह डर हो कि बहते हुए जल में यह बह जाएगी। यह तरीका नदी के किनारे, कुएँ के निकट जहाँ चूहे व अन्य जानवर अपने बिल बना सकते हों, जिनके द्वारा रेत दबाव पाकर बाहर की ओर निकल सके, नहीं अपनाया जाना चाहिए।

(5) शीट फाइलों की मदद से भी नींव के स्थल पर मिट्टी परिरुद्ध करने से मिट्टी की धारण क्षमता बढ़ाई जा सकती है।





भवन-निर्माण की आवश्यक सामग्रियाँ

भवन-निर्माण की लागत दिन-प्रतिदिन भवन-निर्माण सामग्री के महँगे होते जाने के कारण बढ़ती जा रही है। लागत में वृद्धि के लिए भवन-निर्माण तकनीक के परम्परागत तरीकों को ही अपनाते रहना भी काफी हद तक जिम्मेदार है। गलत परम्परागत तरीकों को छोड़कर यदि आज नवीनतम तकनीक द्वारा भवन बनवाया जाए तो लागत में 20-25 प्रतिशत या इससे भी अधिक की कमी लाई जा सकती है। दरअसल होता यह है कि मिस्त्री ने जो कह दिया वह हमने मान लिया और उस कार्य के लिए यदि कोई इंजीनियर भी नियुक्त है, तो आमतौर पर वह भी माथापच्ची करने से कतराते हैं और नई परखी गई तकनीक को भी लागू करने का साहस नहीं रखते।

सामग्री का चुनाव, नींव का गहराई, चौड़ाई सब परम्परागत तरीकों पर ही आधारित होता है। देहरादून में ईंटें उपलब्ध होते हुए भी भवन सुरक्षित रहे जबकि उत्तरकाशी के भूकम्प में पत्थरों की नींव वाले मकान गिरे और ईंटों की नींव वाले सुरक्षित रहे। अब ईंटों की बात आई तो ईंटें ही क्यों, कंक्रीट ब्लाक क्यों नहीं जबकि ये ईंटों के मुकाबले अधिक मजबूत कुल मिलाकर सस्ते, जोड़ने वाले (ज्वॉइंट), प्लास्टर की बचत और खोखले होने के कारण भूकम्प की दृष्टि से भी उत्तम होते हैं और गर्मी,में कम गर्मी तथा जाड़ों में कम ठण्डक प्रदान करते हैं।

आप इस बात पर आश्चर्य करेंगे कि औसतन आधा किलोग्राम सरिया प्रति वर्ग फुट आवासीय मकानों की छतों के लिए पर्याप्त है जबकि परम्परागत तरीकों के अनुसार एक किलो प्रति वर्ग फुट से अधिक लगाना आम बात है। कहीं-कहीं तो ऐसा भी देखने में आया है कि जब मिस्त्री को डिजाइन के अनुसार सरिया बाँधने को कहा गया तो उसने मना कर दिया कि आप अपने जोखिम पर भले ही बँधवा लें पर मैं तैयार नहीं हूं। खैर सरिया बाँधा गया, छत पड़ी जो आज भी सही-सलामत है कि इस भूकम्प के भारी झटके में उसकी प्रामाणिकता और भी पक्की हो गई।

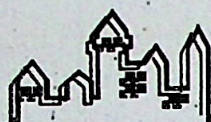
चार फुट चौड़ी दरवाजे की चौखट के ऊपर केवल तीन इंच मोटा लिंटल (आम भाषा में बीम) तीन सूत के सरिए की साढ़े पाँच फुट की दो छड़ तथा दो सूत के सरिए की आठ इंची 6 छड़ें पर्याप्त हैं। दीवारों की चिनाई में, ईंटों के बीच में एक अंगुली के बराबर मोटा मसाला ही काफी है। एक-बारह का मसाला आराम से चलाया जा सकता है, बशर्ते तराई हो।

एक बड़ी गम्भीर कुरीति यह है कि मिस्त्री या मालिक भी स्वयं ईंटों की चिनाई का मसाला या छत की रोड़ी आदि एक बार पानी मिलाकर इकट्ठा ही बनवाकर रख लेते हैं और फिर सारे दिन उस मलवे को चलाते रहते हैं। निश्चित रूप से जानिए कि पानी मिलाने के समय से लेकर लगाने तक के समय तक यदि आधे घन्टे से ऊपर हो जाता है, तो उस मसाले या रोड़ी की पकड़ घट जाती है और आधा घन्टे के बाद मसाले को लगाने में जितनी देर होती जाएगी उतनी ही इसकी पकड़ की ताकत घटती जाएगी। कभी-कभी छत खोलते ही एकदम गिर पड़ी या दीवार में तराई भी खूब की, पर मसाला हाथ के नाखून से झड़ रहा है, कोई पकड़ मसाले ने नहीं की। इन सबमें इस कारण का भी मुख्य हाथ होता है। यह सब मजदूरी बचाने अथवा आरामतलबी होने के चक्कर में होता है। इसके लिए मसाला या रोड़ी सूखी ही बनवा लें (यदि रेत व मिट्टी गीली हो तब नहीं) और पानी तभी मिलवाएँ जब लगवाना हो।

चोखटों, खिड़कियों, दरवाजों में तो हम लकड़ी का भरपूर दुरुपयोग करते ही हैं जबकि इसमें महत्वपूर्ण बचत हो सकती है। यही नहीं हर निर्माण-कार्य के लिए नवीनतम तकनीक के हिसाब से एक निश्चित अवधि गणना करके निकाली जाती है। यदि उस समय तक निर्माण-कार्य पूरा किया जाता है, तो वह सस्ते से सस्ता पड़ता है। उस अवधि से कम में बनाया जाए तब वह महँगा पड़ेगा और अवधि के बाद में पूरा किया जाए तब भी वह महँगा पड़ेगा।

इस प्रकार अनेक वृत्तान्त हैं कहने का तात्पर्य यह है कि एक तरफ तो हम सही भवन-सामग्री का चुनाव नहीं करते और दूसरी ओर सामग्री बर्बाद करते हैं। तीसरे, उसमें लगे श्रम व समय की हानि होती है और चौथे जिसकी ओर किसी का ध्यान नहीं जाता वह है राष्ट्र-सम्पदा की अपार क्षति।





ज्योतिष शास्त्र अनुसार भूमि-भवन-निर्माण

भूमि एवं भवन–निर्माण के लिए सर्वप्रथम भूस्वामित्व एवं गृह–निर्माण के योग की जानकारी ज्योतिष शास्त्र के माध्यम से अपनी जन्म–पत्रिका के आधार पर किसी कुशल विद्वान् ज्योतिषी से करनी चाहिए। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जातक के जन्म, समय एवं जन्मस्थान के आधार पर तात्कालिक ग्रहों की स्थिति स्पष्ट कर जन्म–पत्र का निर्माण किया जाता है। यही जन्म–पत्र मानव के पूर्व जन्म के संचित कर्मों को जानने की कुंजी होती है। पूर्व जन्म में किए गये कर्मों का शुभ–अशुभ फल का भोग तो अवश्य भोगना पड़ता है, साथ ही इस जन्म तथा इस लोक में किये जाने वाले कर्मों का संकेत भी प्राप्त होता है। अपने भाग्य को ज्ञात कर जीवन को उन्नतशील बनाने के लिए अनुकूल समय और क्रियमाण कर्म में सुधार करने पर मानव अपनी भावनाओं के अनुरूप सब प्रकार की सुविधाओं तथा शुभ कर्मों में तत्पर हो जाता है।

इसलिए यह आवश्यक है कि भूमि का क्रय अथवा स्वामित्व प्राप्त करने एवं गृह–निर्माण से पूर्व जन्म–पत्रिका एवं इसके अभाव में गोचर दशा व प्रश्न लग्न के आधार पर योग की जानकारी करने पर किसी प्रकार की बाधा उपस्थित नहीं होगी।

इसके अभाव में भूमि अथवा भवन–निर्माण आर्थिक, सामाजिक प्रतिष्ठा, आयु–आरोग्य व अन्य प्रकार के लाभ के स्थान पर जन–धन की हानि की प्रबल संभावनाएँ हो सकती हैं। ज्योतिष शास्त्र में प्राचीन आचार्यों ने ऐसे मुहूर्त एवं योगों का उल्लेख किया है जिनके आधार पर भूमि क्रय एवं विक्रय, गृह–निर्माण एवं गृहस्वामित्व के लिए शुभ समय की जानकारी दी गई है।

भूमि क्रय–विक्रय माह के दोनों पक्ष की 5/6/10/11/15 तथा कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा तिथियों में गुरुवार तथा शुक्रवार की मृगशिरा, पुनर्वसु, आश्लेषा, मघा, विशाखा, अनुराधा, पूर्वभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, मूल तथा रेवती नक्षत्र व शुभ के क्रय एवं विक्रय के लिए इस समय को देखा जा सकता है।

सामान्य रूप से यह देखा गया है कि बहुत–से लोग इस प्रकार की जानकारी किये बिना भूमि–भवन का क्रय–विक्रय एवं भवन–निर्माण आदि करने के पश्चात् इन सब बातों के सम्बन्ध में विचार करते हैं अथवा इनमें उत्पन्न होने वाले अशुभ फलों पर पश्चात्ताप करने एवं भूमि एवं भवन से दुःखी होते हैं। स्वयं के लिये आवास का उपभोग करना तो दूर लागत मूल्य से कम मूल्य पर भी इसकी बिक्री

को तैयार होने के पश्चात् भी कोई व्यक्ति उसे नहीं खरीदता है। व्यक्ति अपनी पूर्व स्थिति को ही अच्छा समझकर आर्थिक एवं अन्य प्रकार का नुकसान भोगने के पश्चात् निर्माण से पूर्व की स्थिति को ही वापस प्राप्त करना चाहता है।

जातक की जन्म-पत्रिका में निम्नलिखित ग्रहों के योग, ग्रहों के गोचर राशि में संचरण के समय अथवा विंशोत्तरी महादशा एवं प्रत्यन्तर दशा काल में भूमि लाभ एवं भवन व भवनों का स्वामित्व अथवा निर्माण के योग से भवन एवं भूमि के सुख प्राप्त होते हैं। मुख्यतः गृह एवं गृह-सुख का विचार राशि तथा लग्न के चतुर्थ भाव से किया जाता है।

(1) जातक की जन्म-पत्रिका में चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र की दृष्टि चतुर्थ स्थान पर हो, तो बाग-बगीचे का लाभ एवं सुख प्राप्त होता है।

(2) चतुर्थ स्थान बृहस्पति से युक्त अथवा दृष्ट होने पर मंदिर-निर्माण का सुयोग प्राप्त होता है।

(3) कारकांश कुण्डली के चतुर्थ स्थान में चन्द्र एवं शुक्र अथवा राहु, शनि का योग हो, या फिर उच्च राशि का ग्रह हो, तो जातक के पास श्रेष्ठ भवन या उसे मकान का सुख प्राप्त होता है।

(4) जातक की कारकांश कुण्डली के चतुर्थ स्थान में सूर्य हो, तो पर्ण-घास एवं फूंस का गृह-सुख एवं गृह-निर्माण का योग प्राप्त होता है।

(5) कारकांश कुण्डली के चतुर्थ स्थान में गुरु स्थित हो, तो मकान शुभ होता है।

(6) बुध ग्रह के होने पर साधारण एवं स्वच्छ मकान सुख का योग जातक को प्राप्त होता है।

(7) चतुर्थ स्थान बुध से युक्त या दृष्ट होने पर जातक को भव्य महल का व वैभवयुक्त भवन-निर्माण सुख का अवसर होता है।

(8) लग्नेश चतुर्थ भाव में और चतुर्थेश लग्न में स्थित हो, तो जातक को गृह-लाभ होता है।

(9) चतुर्थेश बलवान् होकर 1/4/7/10 स्थानों में शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट होकर स्थित हो अथवा चतुर्थेश जिस राशि में गया हो उस राशि में नवांशाधिपति 1/4/7/10 स्थानों में स्थित हो, तो जातक भवन का लाभ एवं सुख प्राप्त करता है।

(10) उस स्थान पर स्वामी तथा लाभ-स्थान का स्वामी चतुर्थ भाव में स्थित हो तथा चतुर्थेश लाभ-स्थान या दशम स्थान में गया हो, तो जातक को धन सहित भवन की प्राप्ति होती है।

(11) लग्नेश, धनेश और चतुर्थेश—इन तीनों ग्रहों में से जितने ग्रह 1/4/5/7/9/10 स्थानों में गये हों, तो जातक को उतनी ही संख्या के भवनों का स्वामित्व प्राप्त होता है। साथ ही 9 तथा 11 भाव का विचार करना चाहिए।

(12) चन्द्रमा की महादशा, शुक्र की अन्तर्दशा में शुक्र उच्चस्थ या स्वक्षेत्री होने पर नवीन घर का निर्माण होता है तथा दायेश (सप्तम स्थान) शुक्रयुत हो, तो सुख-सम्पत्ति, घर-खेत आदि की वृद्धि होती है।

(13) मंगलकी महादशा मेंशुक्रका अन्तर हो व शुक्र 1/4/5/9/10 भाव मेंउच्च, मूल त्रिकोणी अथवा दशमेश से युक्त हो, तो तालाब, धर्मशाला, कुआँ आदि बनवाने का परोपकार जातक द्वारा किया जाता है।

(14) गुरु की महादशा में गुरु का अन्तर एवं गुरु उच्चस्थ हो, तो भूमि एवं भवन-निर्माण का योग प्राप्त होता है।

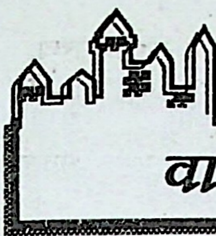
(15) गुरु की महादशा में शनि का अन्तर हो, तो भूमि-लाभ होता है।

(16) गुरु की महादशा में बलवान्, शुक्र केंद्रेश से युक्त होकर 5/11 भाव में हो, तो जातक के द्वारा धर्मशाला, तालाब, कुआँ, सिनेमा आदि का निर्माण कराया जाता है।

(17) गुरु की महादशा में मंगल का अन्तर एवं मंगल उच्च या स्वगृही 1/4/5/7/9/10 भाव में हो, तो इस दशा में भूमि-लाभ, होटल, मिल आदि का निर्माण होता है।

(18) शनि की महादशा में बलवान् मंगल की अन्तर्दशा हो व मंगल 1/4/5/9/10 भाव में हो या लग्नेश से युक्त हो, तो नये भवन के निर्माण की सुयोग प्राप्त होता है।





वास्तु शास्त्र के उपयोगी नियम

सूर्य और पृथ्वी के कारण ही वास्तु शास्त्र का उद्भव हुआ है। सूर्य-किरणों के प्रभाव के फलस्वरूप पृथ्वी में उत्पन्न भौगोलिक स्थितियाँ ही वास्तु के कारणभूत हैं। उत्तम लक्षणों से युक्त गृह-निर्माण के लिए ये स्थितियाँ सहायक होती हैं। पूरब, उत्तर तथा ईशान की दिशाओं में अग्नेत गृहों के परिशीलन करने पर हम स्वयं समझ सकते हैं कि ऐसे गृह किस प्रकार सभी दृष्टियों से विकसित एवं सम्पन्न हुए होते हैं। आग्नेय, नैर्ऋत्य तथा वायव्य की दिशाओं में कुएँ व गड्ढे हों, तो ऐसे गृहों में हम सदा कलह देख सकते हैं। इस प्रकार गृहों के लक्षणों को प्रत्यक्ष रूप में देखकर परिशीलन करने पर हम निस्सन्देह कह सकते हैं कि वास्तु शास्त्र की महत्ता है।

भूमि की दिशाओं में लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई के आधार पर भी भूमि की गुणवत्ता व शुभाशुभत्व का विचार कर गृह-निर्माण हेतु चयन करना चाहिए। तद्नुसार भूमि को चार भागों में विभक्त किया गया है—

भूमि	दिशा में ऊँचाई, लम्बाई, निचाई	फल
(1)गजपृष्ठ	दक्षिण, पश्चिम, नैर्ऋत्य और वायव्य कोण में ऊँची	(1) धनवान एवं आयुष्य वृद्धिकारक
(2) कूर्मपृष्ठ	मध्य में ऊँची और चारों ओर से नीची	(2) उत्साह, सुख, धन-धान्य की वृद्धिकारक
(3) दैत्यपृष्ठ	पूर्व, पूर्व-दक्षिण, उत्तर-पूर्व में ऊँची तथा पश्चिम दिशा में नीची	(3) धन, पुत्र, पशुओं की हानिकारक
4. नागपृष्ठ	पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी उत्तर-दक्षिण दिशा में ऊँची एवं मध्य में नीची	(4) मानसिक रोग, मृत्युभय, स्त्री तथा पुत्रों की हानि और शत्रुओं की वृद्धिकारक होती है।

(1) ध्यान रहे कि फैक्ट्री-उद्योग, स्टाल, होटल एवं कामर्शियल कॉपलेक्स का ईशान कोण कभी भी अन्य दीवारों से ऊँचा नहीं होना चाहिए।

(2) फैक्ट्री के ईशान कोण को छोड़कर अन्य किसी भी दिशा में कुएँ अथवा गड्ढे हों, तो उस गृह-स्वामी को दुष्परिणामों का शिकार होना ही पड़ेगा।

(3) ईशान दिशा में कोई भी त्रुटि दरार, गड्ढा या भग्नावशेष हो, तो गृह-स्वामी उद्योगपति की संतान विकलांग होगी।

(4) ईशान में पाखाना हो तो गृह-कलह होगी, फैक्ट्री में मजदूर लड़ेंगे, फैक्ट्री-स्वामी दुश्चरित्रता एवं दीर्घ व्याधियों का शिकार होगा।

(5) ईशान दिशा में रसोईघर हो, तो निरन्तर गृह-कलह एवं धन का क्षय होगा।

(6) ईशान दिशा में कूड़े-कचरों का ढेर अथवा पत्थरों का ढेर कबाड़े के समान भूलकर भी न रखें अन्यथा भू-स्वामी के लिए शत्रुता, आयु-क्षीणता एवं दुश्चरित्रता उत्पन्न होगी।

(7) वास्तु शास्त्र के नियमों के हिसाब से घर के कमरे में ईशान दिशा से सटाकर मच्छरदानी की छड़ियों या अन्य किसी प्रकार के बेकार सामान यहाँ तक कि झाड़ू को नहीं रखना चाहिए अन्यथा वहाँ स्थायी दरिद्रता का निवास हो जाएगा।

(8) भूखण्ड खरीदने के पूर्व वास्तु-नियमों के अनुसार भूमि की परीक्षा एवं भूखण्ड की आकृति व कोणों की जाँच अवश्य किसी विद्वान् वास्तुविद् से करानी चाहिए।

(9) भवन बनाने से पूर्व जाग्रत करने, शुभ मुहूर्त में भूमि-पूजन, नींव-पूजन कराना चाहिए। भवन पूरा बन जाने के बाद उसकी विधिवत् प्रतिष्ठा, वास्तु-पूजा, गायत्री जप, गणपति पूजन, रुद्र, जप, विष्णु-पूजन, नवग्रह-पूजन एवं ग्रह-शान्ति हवन के साथ, ब्राह्मण भोजन दक्षिणापूर्वक कराना चाहिए।

(10) हमेशा भवन ऐसा बनाना चाहिए कि उसमें रहने वाले व्यक्ति को अधिकतम प्राकृतिक प्रकाश, प्राकृतिक पवन एवं स्वच्छ वायु का प्रवाह मिल सके। भवन ऐसा बनाना चाहिए कि प्रात:कालीन सूर्य की किरणों का लाभ भवन निवासियों को मिल सके।

(11) फैक्ट्री, कारखानों, मिल या विद्यालय का मुख्यद्वार कभी भी कोण में नहीं होना चाहिए।

(12) फैक्ट्री हो, दुकान हो या निजी भवन हो इस बात का सदैव ध्यान रहे कि द्वारवेध न हो।

(13) चाहे रसोईघर हो, जनरेटर, ट्रांसफार्मर या ऑयल इंजिन आदि की स्थापना, सदैव दक्षिण-पूर्व अग्नि कोण में करें।

(14) चाहे जानवर हो, रथ हो, बैलगाड़ी, टैक्सी या कार पार्किंग के लिए हमेशा घर का उत्तर-पश्चिम कोण काम में लें।

(15) घर में प्राकृतिक (वर्षा) जल हो, या कृत्रिम जल, इसका प्रवाह सदैव उत्तर–पूर्व की ओर होना चाहिए।

(16) प्रशासकीय कमरे, बैठक, कंसल्टिंग रूम या महत्वपूर्ण निर्णय लेने के कमरे मकान के उत्तर या पूर्व दिशा में होने चाहिएँ।

(17) पूजन–कक्ष में साधक का मुँह, पूर्व ईशान या उत्तर की ओर ही होना चाहिए।

(18) शौचालय, मूत्रालय, गटर, मैनहोल या गन्दी नाली घर के उत्तर–पश्चिम या दक्षिण–पूर्वकोण में होनी चाहिए।

(19) अनुपयोगी एवं दर्शनीय वृक्षों को कभी भी घर, फैक्ट्री के द्वार पर न लगायें।





वास्तु शास्त्र के निर्देश

साधारण भवन :

(1) भूमि का चयन करते समय दिशा एवं आकार का ध्यान सर्वप्रथम रखना चाहिए। चतुष्कोण अथवा समकोण, दीर्घ चतुष्कोण वाले भूखण्ड पर भवन-निर्माण सब प्रकार से शुद्ध एवं मंगलदायक होता है।

(2) विशाल स्थल ऐश्वर्यकारक होता है; किन्तु स्थल किसी भी दशा में कटा-फटा नहीं होना चाहिए।

(3) त्रिभुज आकृति वाले भूखण्ड का चयन भवन-निर्माण के लिए कभी नहीं करना चाहिए, यह अशुद्ध होता है।

(4) दो विशाल भूखंण्डों के मध्य स्थित एक छोटा व संकरा भूखण्ड भी उत्तम नहीं होता है, उस पर निर्मित भवन से अधिक कष्ट होते हैं।

(5) उत्तर-दक्षिण दिशाओं में भूखण्ड की लम्बाई की अपेक्षा पूर्व-पश्चिम की लम्बाई अधिक हों, तो अधिक श्रेष्ठ होता है।

(6) शयन करते समय सिर पूर्व या दक्षिण दिशा में रखकर शयन करना ही श्रेष्ठ होता है। किसी भी स्थिति में पैर दक्षिण अथवा पूर्व दिशा की ओर नहीं होना चाहिए।

(7) छत पर पानी की टंकियाँ आदि दक्षिण-पश्चिम दिशा में ही रखनी शुद्ध होती हैं। उत्तर व ईशान कोण में इन्हें नहीं रखना चाहिए।

(8) रसोईघर का निर्माण सदैव अग्नि कोण के समीप या दक्षिण अग्नि कोण के समीप किया जा सकता है।

(9) पूजास्थल का निर्माण सदा ईशान कोण में करना उत्तम होता है। विशेष परिस्थिति में पूर्व अग्नि कोण के समीप या दक्षिण अग्नि कोण के समीप किया जा सकता है।

(10) भवन की पूर्व दिशा में ऊँचे वृक्ष और ऊँचे भवन नहीं होने पर शुद्ध वातावरण होता है। पश्चिम दिशा में वृक्ष लगाना उत्तम होता है।

वास्तु राजवल्लभ 1/28 के मुताबिक भवन के बाहर वृक्ष लगाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि वृक्ष भवन से इतनी दूरी पर लगाये जाएँ कि प्रात: नौ बजे से लेकर तीसरे प्रहर तक पेड़ की छाया मकान पर न पड़े।

मकान के पास काँटे वाले पेड़ जैसे बेर की झाड़ी, कटारि, अकोल्ह तथा दूधवाले पेड़ जैसे महुआ आदि नहीं लगाने चाहिएँ, अगर इन्हें कटवाया न जा सके

तो मकान और इनके बीच में शुभदायक वृक्ष शाल, अशोक, पुन्नाग, मौलश्री लगा देना चाहिए।

चम्पा, गुलाब, केला, चमेली, केतकी, फलिनी, नीम, अशोक, केशर, जयन्ती, चन्दन, अपराजिता, नारियल, बेल, आम, अंगूर आदि वृक्ष लगायें। घर में तुलसी का पौधा अवश्य लगाना चाहिए, यह कृमिनाशक है तथा दूषित वायु को शुद्ध करता है।

व्यावसायिक कार्यालयों के निर्माण :

ऑफिस-निर्माण करते समय निम्नलिखित बातों का अवश्य ध्यान रखें–

(1) प्रशासनिक कक्ष पूर्व दिशा में हों।

(2) चेयरमैन का कक्ष उत्तर-पूर्व दिशा में हो।

(3) एकाउंट्स विभाग पश्चिम दिशा में हो।

(4) ऑफिस का पूजाघर ईशान दिशा में हो.

(5) ऑफिस की लॉबी बीच में होनी चाहिए।

कारखाने :

(1) मुख्यद्वार उत्तर, पूरब अथवा पश्चिम दिशा में हो।

(2) यदि मुख्यद्वार उत्तर-दक्षिण में रखना पड़े तो दक्षिण द्वार के ठीक सामने उत्तर दिशा में भी एक-एक द्वार अवश्य रखें।

(3) फैक्ट्री का बायलर सदैव दक्षिण-पूर्व दिशा में होना चाहिए।

(4) जेनरेटर पश्चिम-दक्षिण दिशा में लगाएँ।

(5) जहाँ तक संभव हो, मशीन स्थापित करते उसकी दिशा पश्चिम तथा कारीगर का मुँह पूरब की ओर होना चाहिए।

होटल-रेस्तरां आदि :

(1) आवासीय होटल-निर्माण के लिए भूमि का चयन करते समय विशेष ध्यान रखें कि वह मैगनेटिक कम्पास से सही दिशाओं में आये। उसके चारों कोण वास्तु शास्त्र के अनुसार हों।

(2) होटल, जलपानगृह या रेस्तरां का मुख्यद्वार उत्तर, पूर्व अथवा ईशान की ओर रहे।

(3) पूर्व से पश्चिम का तथा उत्तर से दक्षिण का भाग अधिक ऊँचा बनवायें। उत्तर-पूर्व हल्का रखें।

(4) जलपानगृह या होटल का किचन आग्नेय कोण में रखें। यदि ऐसा संभव न हो, तो वायव्य कोण में रख सकते हैं।

(5) रिसेप्शन रूम उत्तर-पूर्व तथा स्वीमिंग पूल, तालाब, फव्वारे आदि उत्तर-पूर्व या ईशान कोण में बनवायें।

(6) होटल-भोजनालय की व्यवस्था पश्चिमी क्षेत्र में करें।





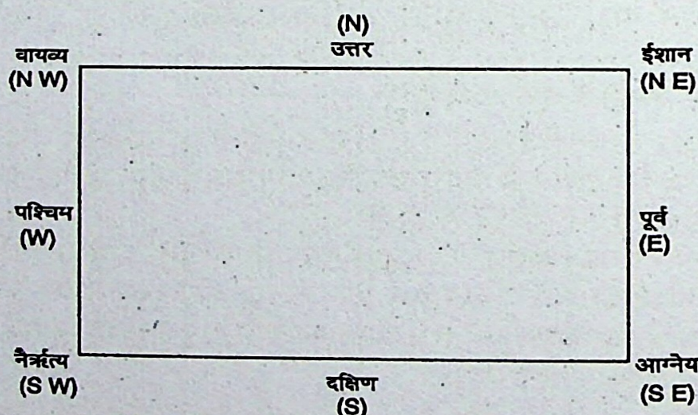
दिशानुसार भूमि-लक्षण

साधारणत: लोग वास्तु शास्त्र का अर्थ केवल भवन से लगाते हैं कि वास्तव में इसका अर्थ बेहद विस्तृत एवं व्यापक है। भूमि के लक्षणों से लेकर उसकी परीक्षा तथा उसका शोधन करने के उपरान्त, उसके ऊपर किया जाने वाला निर्माण, उसके शान्तिकर्म से लेकर प्रवेश-पर्यन्त रहने के नियम तथा आस-पास की स्थिति व ग्राह्य तथा त्याज्य वृक्षादि का ज्ञान आदि सभी विषय वास्तु शास्त्र के ही अंग हैं। अत: इसे समझने हेतु दो भागों में विभाजित करना पड़ेगा:—

(1) भूखण्ड हेतु वास्तु-नियम,

(2) निर्माण हेतु वास्तु-नियम।

वास्तु शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम हमें दिशाओं तथा कोणादि की जानकारी करनी जरूरी होती है, तत्पश्चात् उसे दिशा तथा कोणों के क्षेत्र में बाँटकर उसका अध्ययन करना पड़ता है। नीचे दिए गए रेखाचित्रों से इन्हें आसानी से समझा जा सकता है—



दिशाएँ चार होती हैं–

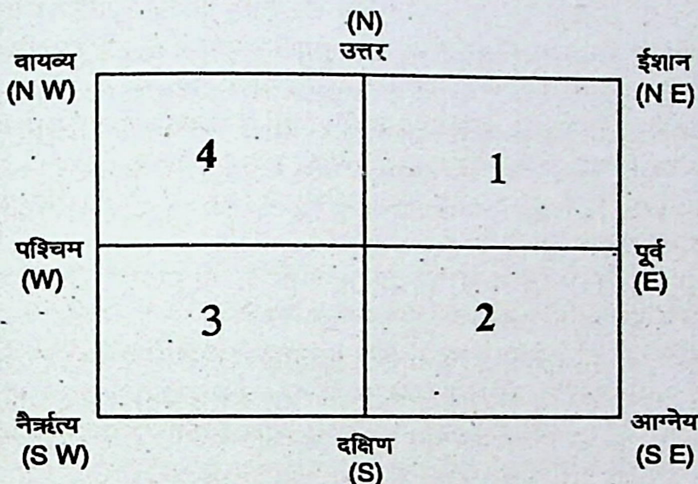
(1) उत्तर, (2) दक्षिण, (3) पूर्व, (4) पश्चिम।

ईशान, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य–ये चार विदिशाएँ अथवा कोण कहा जाता है। जिन्हें क्रमश: उत्तर-पूर्व, दक्षिण-पूर्व, दक्षिण-पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम भी कहा जाता है।

भूखण्ड का चार खण्डों में विभाजन :

दिशा व कोण का ज्ञान होने के पश्चात् भूखण्ड का चार तथा आठ क्षेत्रों में विभाजन किया जाता है, जो निम्न प्रकार से होता है—

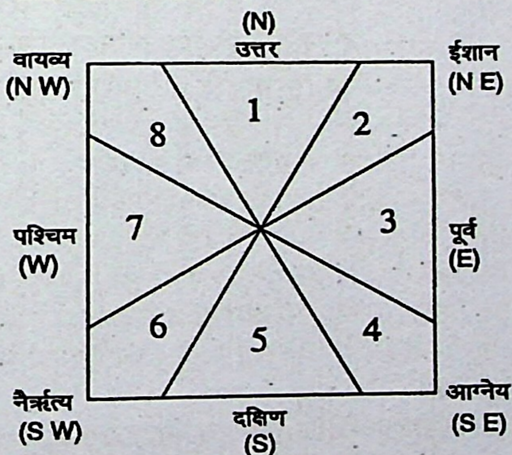
1. उत्तर-पूर्व (ईशान) क्षेत्र,
2. दक्षिण-पूर्व (आग्नेय) क्षेत्र,
3. दक्षिण-पश्चिम (नैर्ऋत्य) क्षेत्र,
4. उत्तर-पश्चिम (वायव्य)।



भूखण्ड का आठ खण्डों में विभाजन :

(1) उत्तर क्षेत्र,
(2) उत्तर-पूर्व क्षेत्र,
(3) पूर्व क्षेत्र,
(4) दक्षिण-पूर्व क्षेत्र,
(5) दक्षिण क्षेत्र,
(6) दक्षिण-पश्चिम क्षेत्र,
(7) पश्चिम क्षेत्र,
(8) उत्तर-पश्चिम क्षेत्र।

इसे निम्न रेखांकन से समझा जा सकता है—



भूमि चयन :

भवन-निर्माणकर्त्ता प्राय: भूमि की गुणवत्ता की जानकारी बिना भवन-निर्माण योजना को साकार रूप दे बैठते हैं। इस स्थिति में प्राय: भवन अर्द्धनिर्मित अवस्था

में रह जाते हैं अथवा निर्माण-कार्य में आर्थिक तथा अन्य प्रकार की बाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं। इनके मूल कारणों को यदि खोजने का प्रयास किया जाये तो पता चलेगा कि प्रथम तो भूमि की गुणवत्ता की ओर ध्यान नहीं दिया गया या फिर भूमि में शल्यदोष अथवा सही समय (शुभ-मुहूर्त) में भवन-निर्माण कार्य का आरम्भ नहीं किया गया होता है।

किसी भी प्रकार का भवन-निर्माण हो, चाहे वे आवासीय-औद्योगिक तथा व्यावसायिक अथवा वस्तुओं के संग्रहार्थ अथवा पशुओं के पालनार्थ ही हों, भूमि की गुणवत्ता की जानकारी के अभाव में निर्माण नहीं करना चाहिए।

भवन-निर्माण के लिए भूमि का चयन अत्यन्त सावधानी और शास्त्र-सम्मत आधार पर करना चाहिए अन्यथा अनेक प्रकार की हानियाँ और मानसिक अशान्ति होने के कारण भवन-निर्माण-कार्य मध्य में अथवा भूमि क्रय करने के पश्चात् अवरुद्ध हो जाते हैं।इसका सीधा प्रभाव भूमि एवं भवन-निर्माणकर्त्ता, उसके परिवार तथा व्यवसाय पर होता है। इसलिए भूमि का चयन और क्रय कार्य सही समय और भूमि की गुणवत्ता के आधार पर ही किया जाना श्रेष्ठ फलदायक होता है।

सर्वप्रथम भवन-निर्माणकर्त्ता भूमि का चयन करते समय यह बात ध्यान में रखें कि जो भूमि कुश-कशा घासयुक्त और जिस स्थान पर अनेक प्रकार के वृक्ष और फल-फूल तथा जल प्रवाह होता हो, ऐसी भूमि भवन-निर्माण के लिए चयन करें।

विभिन्न वर्ण वाली मिट्टी के आधार पर श्वेत, हरी.लाल और काली मिट्टी क्रमश: अधिक प्रशस्त होती है। पूर्वकाल में मिट्टी के वर्ण के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वेश्य और शूद्र वर्ण के लोगों के लिए भूमि-चयन का महत्व शास्त्रों में बताया गया है, किन्तु आज के परिप्रेक्ष्य में यह समयानुकूल नहीं लगता है। इसका मूल कारण भूमि की कमी और वर्ण तथा धर्म निरपेक्षता इस युग के प्रमुख कारण हैं। इसलिए हरी-भरी शस्य-स्यामला, वृक्ष गुल्मादि-लताओं से युक्त तथा सुगन्धित और मनोहारी भूमि, जिसे देखकर मन प्रसन्न होता हो, को भवन-निर्माण के लिए चयन करना चाहिए।

कटी-फटी शल्ययुक्ता, वेधयुक्ता भूमि पर भवन-निर्माण से अनेक प्रकार की व्याधियाँ, हानियाँ और मानसिक अशांति होती हैं।

प्राचीन शास्त्रों में तो भवन-निर्माण से पूर्व भूमि का परीक्षण भी किये जाने का उल्लेख है, जिसके अनुसार से पूर्व भूमि में एक हाथ गड्ढा खोदकर जल भरा जाता था तथा सौ कदम आगे जाकर वापसी में जल की स्थिति से भूमि की गुणवत्ता परीक्षित की जाती थी।

भूमि परीक्षण :

गड्ढे में जल भरने पर यदि सुबह तक जल भरा रहे तो शुभ फलदायिनी होती है। यदि जल सूख जाए तो मध्यम फलदायक है। यदि भूमि फट जाए और उसमें दरारें उभर आएँ तो अशुभ फलदायिनी होती है।

यदि आधे से कम जल रहे तो भूमि को भवन-निर्माण के लिए उपयुक्त या शुभ नहीं माना जाता था।

इसी प्रकार अपनी और नगर की राशियों के आधार पर, जिस प्रकार विवाह के लिए वर-वधु के नक्षत्र-गणादि मिलाए जाते हैं, ठीक वैसे ही भवन निर्माणकर्त्ता और आवासीय स्थान के लिए करना होता है जिसके आधार पर भूमि-चयन भूमि भवन-निर्माण हेतु करने का शास्त्रों में उल्लेख मिलता है। वर्तमान युग में यदि इन सब बातों को ध्यान में रखकर भवन-निर्माण किया जाये तो वह भवन भारतीय वास्तु शास्त्र के अन्तर्गत माना जाता है। भवन-निर्माण के समय भूमि के आन्तरिक भाग में दबे पदार्थों को भी बाहर निकालना चाहिए क्योंकि भू-भाग में हड्डी, बाल, गन्दे कपड़े, अण्डे इत्यादि रहने के कारण भवन निर्माणकर्त्ता और भवन में आवास करने वालों के लिए कष्टकारक होता है। कभी-कभी भूमि के नीचे दबे शल्य के कारण भवन-निर्माण के पश्चात् इन्हें निकालना अत्यन्त कठिन और असंभव होता है, जिससे सुन्दर भवन बनने पर भी वह दोषपूर्ण रहता है।

आजकल इस प्रक्रिया के लिए मैटल डिटेक्टर व भूमिगत वस्तुओं का पता लगाने वाले यंत्रों की सहायता ली जा सकती है। यदि भवन में तलघर बनाना अभीष्ट हो, तो इसके निर्माण से भी भूमिगत दूषित पदार्थों को बाहर किया जा सकता है।

प्राचीन परम्परा के अन्तर्गत भूमि पर गोमल्ल और गोमूत्र इत्यादि के प्रयोग से भी भूमि का शल्योद्धार किया जाता था। इसके अतिरिक्त शल्योद्धार की अनेक विधियाँ प्रचलित थीं, किन्तु वे सब वर्तमान में व्यावहारिक नहीं हैं और अब न ही उनके आधार पर सामान्य जन शल्योद्धार का पता लगा सकते हैं। इसलिए भवन-निर्माण से पूर्व तथा भूमि चयन के लिए इस बात का ध्यान अवश्य रखने पर भूमि के दोषों से बचा जा सकता है।

भवन-निर्माण के लिए चयनित भूमि के आकार और प्रकार को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो भूमि का 90 डिग्री के कोण में होना आवश्यक है। कोई भी कोण कटा-फटा नहीं हो, तो वह भूखण्ड भवन-निर्माण के लिए श्रेष्ठ माना जाता है।





ज्योतिषीय आधार पर भवन-निर्माण

हर व्यक्ति के दिमाग में स्वयं यह बात आती है कि उसका स्वयं का एक बंगला या फ्लैट हो। इसमें से जब भी हम किसी एक का चयन करें तो यह बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिये कि उक्त स्थान स्वयं व परिवार के सदस्यों के साथ शान्तिपूर्वक रहने योग्य है या नहीं। वैसे भी अपने परिवार में ज्यादा से ज्यादा 12 राशियों के सदस्य होंगे तो सात दिनों तक रहेंगे। सात दिन से आशय जैसे रविवार से शनिवार तक मेष से मीन राशि के मानव रह सकें। हमें उस जगह का परीक्षण भी करना चाहिये जिस भूखण्ड अथवा भूखण्ड पर बने आलीशान भवन में हम अपना फ्लैट आरक्षित करा रहे हैं। इसका निर्णय स्वयं करें।

मकान खरीदने या बनवाने में धन की आवश्यकता होगी अत: वह धन अपनी मेहनत का होना चाहिये। कर्ज लेकर मकान या फ्लैट लेना स्वयं को कमजोर करना है। इससे परिवार में घुटन व तनाव बढ़ता है अत: गृहस्थ को यह ठोस निर्णय लेकर उसी प्रकार आगे कदम बढ़ाना चाहिये, जिस प्रकार किसी प्राणी के आगमन के साथ ही उसके भोजन हेतु उस प्राणी की माता के स्तन में दूध आ जाता है। यदि ऐसी स्थिति मकान, फ्लैट आदि में लगने वाले धन के बाबत अपनी नहीं हो पाती है तब तक मकान बनाने या उसे आरक्षित करने के बारे में सोचना परिवार को तनाव व रोग देना है।

परिवर्तन प्रकृति का नियम है तथा सभी ग्रह हर पल चल रहे हैं अत: प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में स्वयं का मकान बनाने की समझ आती है, परन्तु नासमझी के कारण व्यक्ति सही समय पर उचित निर्णय नहीं ले पाता। ग्रहों की शक्ति के द्वारा गृहस्थ 'राजा से रंक' व 'रंक से राजा' बन जाता है। इसलिए यदि ग्रहों के अनुसार व्यक्ति ने अपने जीवन में परिवर्तन किया तो उसके पास मकान बनाने के लिए स्वयं की कमाई का धन एकत्र होगा। जिस प्रकार चिड़िया अपना घोंसला तिनके व अन्य चीजों से बनाती है, परन्तु वह न किसी से उधार लेती है न ही किसी को ब्याज देती है। इसलिए हम ऋण लेकर मकान आदि लेने से बचें क्योंकि मकान का निर्माण सुख की बढ़ोत्तरी के लिए किया जाता है घुटन व तनाव के लिए नहीं। आप यदि प्रश्न करें कि लेन-देन का कार्य मनुष्यों के बीच होता है इससे चिड़िया का क्या मतलब? मानव योनि में रहते हुए यदि व्यक्ति अपना कर्ज नहीं चुकाता तो मृत्यु के पश्चात् भी कर्जदार बना रहता है और उसे उसका कुफल भुगतना पड़ता है।

अत: मानव को भूखण्ड व प्लाट खरीदते समय केवल अग्रिम धनराशि ही देनी चाहिए जो कम हो फिर अपनी राशि वाले दिन; जैसे मेष व वृश्चिक-मंगलवार, वृषभ व तुला-शुक्रवार, मिथुन व कन्या-बुधवार, कर्क-सोमवार, सिंह-रविवार, धनु एवं मीन-गुरुवार तथा मकर एवं कुम्भ-शनिवार अपनी राशि से सम्बंधित व्यक्ति उस भूखण्ड को प्रणाम करें तथा उस भूखण्ड के चारों दिशाओं, कोणों एवं मध्य भाग से थोड़ी-थोड़ी मिट्टी जमा करें। इस प्रकार नौ स्थानों से मिट्टी जमा करें। जो नवग्रहों का प्रतिनिधित्व करती हैं। **सूर्य+चन्द्र+मंगल+बुध+गुरु+शुक्र+शनि+राहु+केतु।** इनका पवित्र सम्बन्ध राशियों से रहता है। यह माला के 108 दाने हैं इसमें एक आप हैं। 0 (शून्य) आपका परिवार तथा आठों दिशाएँ हैं, फिर उक्त मिट्टी को लाकर अच्छी तरह साफ कर लें। तत्पश्चात् एक शिवलिंग का निर्माण करें। इसके पश्चात् उक्त शिवलिंग को जातक अपनी राशि वाले दिन से सात दिनों तक रस से अभिषेक करें, रस के रंग का ध्यान रहे, रस नकली न हो, उधार का न हो और शिवजी का कोई मंत्र जपें, इसके लिए समय का प्रतिबन्ध नहीं है। बाद में रस के प्रसाद को परिजनों में वितरित कर दें और जो बच जाए उसे पीपल की जड़ में डाल दें। इस बीच यह ध्यान रखें कि बचत बढ़ी या घटी। यदि आवक बढ़ी है, तो वह जगह जातक के लिए शुभ रहेगी। आठवें दिन उस शिवलिंग को तालाब या नदी में विसर्जित कर दें।

अभिषेक दिन के हिसाब से करें। सोमवार को कच्चे दूध से, मंगल को टमाटर के रस से, बुध को हरी वस्तु के रंग से, गुरु को पीले रंग के रस से, शुक्र को दही से, शनि को काले अंगूर के रस से तथा रविवार को गाजर के रस का प्रयोग करें, इस प्रयोग से जातक स्वयं समझ जायेगा कि भाग्य उसका साथ दे रहा है या नहीं। जमीन, जो वह लेना चाहता है वह फायदेमंद है या नहीं।





शुभ मुहूर्त एवं शिलान्यास

किसी भी भवन के निर्माण के पूर्व विधि-विधान के अनुसार शुभ लग्न में शिलान्यास कराने की पद्धति है। वास्तु शास्त्र में इसका स्पष्ट उल्लेख है।

कन्या, सिंह, तुला संक्रान्ति में शेष का मुख ईशान कोण में होता है, इसलिए अग्नि कोण (पूर्व दक्षिण के मध्य) में शिलान्यास करना उचित होता है।

वृश्चिक, धनु, मकर संक्रान्ति में शेष का मुख वायव्य अर्थात् वायुमुखी होता है। इसलिए ईशान कोण (पूर्व-उत्तर) में शिलान्यास किया जाना शास्त्र-सम्मत है।

कुम्भ, मीन, मेष राशि में सूर्य के होने पर शेष का मुख अग्नि कोण में होने के कारण नैर्ऋत्य (दक्षिण-पश्चिम) कोण में शिलान्यास करना शुभ होता है।

लेकिन दक्षिण भारतीय वास्तुशास्त्रियों ने प्रत्येक दिशाओं को छोड़कर किसी भी समय, ईशान कोण में ही शिलान्यास करने का मत व्यक्त किया है। यह मत भारतीय वास्तु शास्त्र के अनुरूप तो नहीं है, किन्तु ईशान कोण के महत्व को बल देने के कारण ही ऐसा कहा गया है।

भवन-निर्माण के दौरान तीनों प्रकार के प्रवेशारम्भ के समय वास्तुपूजन करना चाहिए। भूखनन के बाद गृह-निर्माणाभिलाषी अपने नित्य कर्म-स्नान, पूजा-पाठ-अर्चना, संध्यादिक कर्म से निवृत्त होकर नूतन अथवा धौतवस्त्र धारण कर शुभ मुहूर्त के अनुसार भवन-निर्माण-स्थल पर पूर्व या उत्तराभिमुख होकर पत्नी सहित शुद्ध आसन पर बैठें। पत्नी दक्षिण भाग में स्थान ग्रहण करें एवं दायें हाथ में ज़ल लेकर तीन बार आचमन और प्राणायाम करें। **सर्वेषु धर्म कार्येषु पत्नी दक्षिणतः शुभा** 'वाराह' के अनुसार पत्नी को दक्षिण भाग में बैठना चाहिए। आचार्य या पुरोहित मांगलिक तिलक तथा पति-पत्नी का ग्रन्थी बंधन करें।

शिला प्रमाण :

शास्त्रों में शिलाओं का प्रमाण एवं प्रयोग, वर्ण के अनुसार करने का निर्देश दिया गया है!

वर्ण	लम्बाई	चौड़ाई	ऊँचाई
ब्राह्मण	21 अंगुल	10½	5¼
क्षत्रिय	17 अंगुल	8½	4¼
वैश्य	13 अंगुल	6½	3¼
शूद्रं	9 अंगुल	4½	2¼

किन्तु आजकल शिलाओं का प्रमाण के अनुसार प्रयोग नहीं किया ज़ाता है बल्कि 5 पाषाण की शिलाओं का, जो शास्त्रीय प्रमाणानुसार नहीं होती हैं, जैसी भी तत्काल उपलब्ध हो जायें प्रयोग करते हैं। पत्थर के मकान में पाषाण शिला, पहाड़ी घर में पत्थर का ढेला, ईंटों के घर में ईंट की शिलाओं का स्थापन होना चाहिए तथा लकड़ी के मकान में इच्छानुसार शिला स्थापित की जा सकती है।

नींव में 5 शिलाएँ मजबूत और सुन्दर होनी चाहिएँ। उनमें किसी प्रकार का दोष न होना चाहिए तथा इसकी लम्बाई-चौड़ाई और ऊँचाई ऊपर निर्दिष्ट परिमाण से अधिक एवं कम नहीं होनी चाहिए। कृष्णवर्ग अर्थात् काले रंग वाली काली शिला का प्रयोग भी नींव में नहीं करना चाहिए।





ग्राम-नगर शुभ-अशुभ विचार

नवनिर्मित गृहप्रवेश का नाम अपूर्व गृहप्रवेश कहा गया है। अत: अपूर्व प्रवेश के लिए नवीन गृह-निर्माण आवश्यक होता है। ग्राम, नगर, और गृह-निर्माण प्रकरण का नाम वास्तुप्रकरण है। गृहस्थ के कोई भी कार्य निजी घर-मकान, भवन, राजभवन-में शुभ होते हैं। दूसरे के घर में किए गए श्रोत स्मार्त आदिक सभी शुभ कर्म पूर्ण सफल नहीं होते हैं। इन शुभ कर्मों के शुभ फल का भागी वह भूमिपति भी हो जाता है, जिसके भवन में ये विधान किए गए हों। अत: शास्त्रों ने लोकतन्त्र की मूलभूत भित्ति गृहस्थ के लिए आवास की सुव्यवस्था का सहर्ष सुदृढ़ समर्थन किया हैं; इसलिए किस दिशा में या किस नगर या ग्राम में मकान बनाया जाये? कब प्रारम्भ किया जाये? इत्यादि प्रश्नों का उत्तर जानने-समझने के लिए गृह-निर्माण से सम्बधित मुहूर्त और घरों की लम्बाई-चौड़ाई आदि दर्शाने वाले प्रकरण में देखिए और आधुनिक युग के सुन्दरतम् भवनों के निर्माण में प्राचीन गृह-निर्माण शैली का भी उपयोग कीजिए।

ग्राम या नगर शुभ-अशुभ विचार :

अपने नाम के आदिम वर्ण की वर्ग संख्या को दूना कर उसमें ग्राम नाम के आदिम वर्ण की वर्ग संख्या जोड़कर 8 से भाग देने से शेष संख्या तुल्य अपनी, तथा ग्राम वर्ग संख्या को दो से गुणा कर, उसमें अपने नाम की वर्ग संख्या जोड़कर 8 से भाग देने से शेष तुल्य ग्राम की काकिणी होती है। जिसकी काकिणी अधिक हो वह कम काकिणी वाले को धनप्रद होता है और जिसकी काकिणी कम हो वह ऋणी हो जाता है।

मकान बनाने वाले के नाम की काकिणी ग्राम नाम की काकिणी से कम या तुल्य होनी चाहिए तभी तो ग्राम से व्यक्ति को अर्थ-प्राप्ति होगी।

विप्र वर्ण की राशियाँ 4/8/12 के नाम के व्यक्तियों के लिए मकान का मुख्यद्वार पूर्व में, वैश्य वर्ण की राशियों 2/|6/|10 के नाम के व्यक्तियों का दक्षिण में, शुद्र वर्ण की 3/17/11 राशियों के नाम के व्यक्तियों के लिए पश्चिम में और क्षत्रिय वर्ण की राशियाँ 1/5/9 के व्यक्तियों के लिए मकान का मुख्यद्वार उत्तर दिशा में होना चाहिएँ।

अनेक साधनों से सर्वप्रथम भूमि शोधन कर रुचिकर स्थिर, सुहावनी, आकर्षक भूमि में गृह-निर्माण करना चाहिए। गृह-निर्माण समय, घर, धन-धान्य से समृद्धि,

पुत्र-पौत्र, पशु-मित्र-स्त्री आदि सभी के लिए सुखमय हो, सभी प्रसन्न रहें, कोई भूखा-प्यासा-वस्त्रहीन न रहे। इस घर में सभी प्रकार के अतिथियों का स्वागत-सत्कार करना चाहिए।

राशि सम्बंध से ग्राम निवास निषेध :

वस्त्रों के नौ विभागों की तरह ग्राम के दिशा-विदिशाओं में 8 विभाग और मध्य में नवम भाग की कल्पना करनी चाहिए।

वृष, सिंह, मकर और मिथुन राशि के व्यक्तियों को ग्राम के मध्य में निवास हेतु मकान नहीं बनाने चाहिएँ। इसी प्रकार ग्राम की आठों दिशाओं में वृश्चिक राशि वाले को पूर्व में, अग्नि में मीन, दक्षिण में कन्या, नैर्ऋत्य में कर्क, पश्चिम में धनु, वायु में तुला, उत्तर में मेष और ईशान में कुम्भ राशि वाले पुरुषों को निवास हेतु गृह-निर्माण नहीं करना चाहिए। **अ क च ट त प य श** ये आठों वर्ग क्रमशः गरुड़, मार्जार, सिंह, श्वान, सर्प, मूषक, मृग और मेंढ़े होते हैं। प्रत्येक वर्ग अपने से पंचम का बैरी होता है। जैसे अ वर्गेश गरुड़ से पंचम त वर्गेश सर्प अ का बैरी होता है।

गृह-निर्माण स्थल की लम्बाई-चौड़ाई :

यद्यपि वर्तुलाकार पृथ्वी में अनेक राष्ट्रों के, अनेक देशों के, अनेक प्रदेशों के अनेक मण्डलों के, अनेक नगर, अनेक गाँव इत्यादि बसे हैं। अनेक अगाध सागरों से आवेष्टित भूमण्डल के सागरों तक के गाम्भीर्य का पता लग चुका है। पृथ्वी के अगम्य परमाधिक अक्षांश के ध्रुव जैसे देशों, परम उच्च एवरेस्ट जैसी चोटियों की यात्रा से भी आगे अनन्त ब्रह्माण्ड के इस सौरमण्डल के चन्द्रग्रह पर भी मानव चरण चिन्हित होगए हैं। निकट के कुछ दशकों में तथा अन्य और मंगल, शनि, बृहस्पति तक ग्रह-पिण्डों की जानकारी भी प्राप्त हो चुकी है। विज्ञान के अभूतपूर्व शोधों और आविष्कारों से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड रहस्य और नभमण्डल अछूते और अनजान नहीं रह जायेंगे। विज्ञान चाहे कितनी भी प्रगति कर ले, कितनी ही उपलब्धियाँ प्राप्त कर लें तो भी मानव के आवास की समस्या का समाधान सदा आवश्यक रहा था और रहेगा। इसीलिए जो जहाँ भी रहेगा वहाँ उसे जीवन निर्वाह तथा आजीविका के साथ आवास की आवश्यकता पड़ती रहेगी।

गाँव या नगर में :

भूमि की इयत्ता से उसके सम-विषम चतुर्भुजात्मक, त्रिकोणत्मक खण्डों में मानव विशेष का अधिकार रहेगा, अतः उस भूमि के अत्यल्प खण्ड पर गृह-निर्माण की व्यवस्था प्राचीन वास्तु शास्त्रज्ञों ने की है। आचार्य ने मकान बनाने की जगह का उपर्युक्त नाम लम्बाई X चौड़ाई को गृहपिण्ड कहा है। मकान के भी 27 नक्षत्र होंगे; जैसे प्रत्येक व्यक्ति के नाम से कोई नक्षत्र होगा। इसी प्रकार प्रत्येक मकान में (1) ध्वज, (2) धूम, (3) सिंह, (4) श्वान, (5) वृष, (6) खर, (7) हाथी और (8) ध्वाड्क्ष, ये आठ नामों के 8 आय होते हैं। इनमें नाम सदृश, ध्वज, सिंह, वृष और हाथी, ये 4 विषम आय शुभ आय होते हैं।

आचार्य ने गृहपिण्ड साधन के बहुश्रमसाध्य कठिन गणित की एक सारिणी

सर्वसाधारण के लिए प्रस्तुत कर पिण्ड साधन गणित का अनुपम कौशल बताया है। विवाह प्रकरण में वर-कन्या के मेलापक की तरह मकान और मकान मालिक के नक्षत्रों जैसे नक्षत्र यहाँ भी होने चाहिएँ। वर कन्या मेलापक में दोनों की नाड़ियाँ भिन्न होनी चाहिएँ, किन्तु यहां गृह-निर्माण में वास्तु और भू-स्वामी की परस्पर एक नाड़ी ही उत्तम मानी गई है, अतः यहाँ ध्यानपूर्वक इस बात का विचार करना चाहिए कि वास्तु और भू-स्वामी की परस्पर में एक ही नाड़ी हो।

गृहद्वार विचार :

ध्वजादिक आय के नाम पहले बताये जा चुके हैं।

आय के अनुसार गृहद्वार दिशा समझनी चाहिए। किस पिण्ड का ध्वज आय है, उसमें चारों दिशाओं के घर के द्वार होते हैं।

सिंह आय में पूर्व, दक्षिण और उत्तर में द्वार होते हैं। वृष आय में केवल पूर्व में द्वार होता है। गज आय में पूर्व और दक्षिण में द्वार होते हैं अथवा ब्राह्मणादिक वर्णक्रम से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र के मकानों के क्रमशः पश्चिम, उत्तर, पूर्व और दक्षिण दिशाओं में द्वार शुभ होते हैं।

गृहारम्भ में निषेध समय :

गृह-स्वामी की राशि से सूर्य अशुभ, निर्बल या नीच राशिस्थ हो, तो गृह-स्वामी का नाश, चन्द्रमा निर्बल या नीचगत हो, तो गृहपति की स्त्री का विनाश, इसी प्रकार बृहस्पति हो, तो गृह-स्वामी का सुख-नाश, ऐसी ही स्थिति शुक्र की होने से गृहपति का वित्त विनाश होता है।

दिन नक्षत्र+चन्द्र तथा पूर्व सिद्ध वास्तु नक्षत्रों में वास्तु नक्षत्र के सम्मुख होने पर घर के मालिक की उस घर में स्थिति नहीं होती। पृष्ठास्थ होने पर उस घर में चोरी से सर्वस्व सम्पत्ति आदि की हानि होती है।

कुछ आचार्य 'पूर्व मुख' घर में लग्नगत चन्द्रमा आगे, दक्षिण मुख घर में लग्नगत चन्द्रमा बायें, पश्चिम मुख घर में लग्नगत चन्द्रमा पीछे और उत्तर मुख घर में लग्नगत चन्द्रमा दक्षिण होता है—ऐसा कहा गया है। इसी प्रकार सर्वत्र विचार निर्धारण करना चाहिए।

गृहारम्भ में वृष वास्तु चक्र :

सूर्य नक्षत्र से गृहारम्भ के दिन की तीन नक्षत्र तक वृष के स्थित नक्षत्र से गृहदाद होता है। चार नक्षत्र तक वृष के अग्र नक्षत्रों में घर जनवास शून्य रहता है। पुनः पीछे के चार पैरों में, चारों नक्षत्रों में घर-निर्माता की सुस्थिर स्थिति होती है। पुनः पीछे आगे के तीन नक्षत्र वृष पृष्ठ में श्रीप्राप्ति के लिए होते हैं। पुनः आगे के 4 चार नक्षत्रों में वृष के दक्षिण कुक्षि में घर आरम्भ करने से घर में लाभ होता है। उसके आगे के चार नक्षत्रों में गृह-निर्माण में दारिद्रय होता है। उसके आगे के तीन नक्षत्रों में गृह-निर्माता को सतत् पीड़ा ही रहती है।

साधारण सरल बोध के लिए इसे वृष चक्र कहा जाता है।

फलितार्थ है कि सूर्य नक्षत्र से चन्द्रमा की नक्षत्र तक गिनती के प्रथम 7 नक्षत्रों

का गृह-निर्माण अशुभ, 8 से 18 तक के 11 नक्षत्रों का गृह-निर्माण शुभ और (अभिजित् सहित) 19 से 28 तक के 10 नक्षत्रों का गृह-निर्माण अशुभ होता है। वास्तव में सूर्य नक्षत्र से चन्द्रमा की नक्षत्र संख्या जब 8 से 18 तक हो तभी गृह-निर्माण का कार्यारम्भ शुभ होता है। शेष में अशुभ।

द्वार दिशा, गृह-निर्माण की नक्षत्र और प्रसव गृह मुहूर्त :

सौर चन्द्रमासों के समन्वय से पूर्व और पश्चिम दिशा के मुख के गृह-निर्माण में कुम्भ के सूर्य में फाल्गुन मास, सिंह, कर्क में श्रावण और मकर के सूर्य में पौष मास शुभ होते हैं।

दक्षिण और उत्तर मुख के गृह-निर्माण में मेष, वृष के सूर्य में बैशाख मास, तुला, वृश्चिक के सूर्य में मार्गशीर्ष चन्द्रमास शुभ होते हैं।

मृदु-ध्रुव संज्ञक शततारा, स्वाति, धनिष्ठा, हस्त और पुष्य नक्षत्रों में गृहप्रवेश शुभ होता है।

तृणादिकों के मकानों में सौर, चान्द्र समन्वयित मासों की आवश्यकता नहीं है साधारण शुभ मुहूर्त आवश्यक है।

वित्तादि सम्भव स्थितियों के मानवों के लिए, भवन के नैर्ऋत्य भाग में सूतिका गृह-निर्माण शुभ होता है।

आसन्न प्रसवकाल समझकर गर्भ से नवमादिक मास में शुभ दिन वार लग्नादिक शुभ मुहूर्त में सूतिका गृहप्रवेश शुभ होता है।

आचार्यों के मतान्तर से—मेष, वृष, कर्क, सिंह, तुला, वृश्चिक, मकर और कुम्भ राशियों के सूर्य में क्रमश: चैत्र, ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्र, आश्विन, कार्तिक, पौष और माघ मासों में गृह-निर्माण शुभ होता है।

कन्या के सूर्य में कार्तिक और धनु के सूर्य में माघ मास में गृह-निर्माण शुभ नहीं होकर अशुभ होता है।

चन्द्र मासों की गणना यहाँ कृष्ण प्रतिपदा से आरम्भ समझनी चाहिए।

वास्तु शास्त्र के अनुसार दिशाओं में ऊँचाई, लम्बाई, निचाई का फल निम्नवत् होता है—

भूमि	दिशा में ऊँचाई, लम्बाई, निचाई	फल
(1) गजपृष्ठ	दक्षिण, पश्चिम, नैर्ऋत्य और वायव्य कोण में ऊँची	धनवान् एवं आयुष्य वृद्धिकारक।
(2) कूर्मपृष्ठ	मध्य में ऊँची और चारों ओर से नीची	उत्साह, सुख, धन-धान्य की वृद्धिकारक।
(3) दैत्यपृष्ठ	पूर्व, पूर्व-दक्षिण, उत्तर-पूर्व में ऊँची तथा पश्चिम दिशा में नीची	धन, पुत्र पशुओं की वृद्धिकारक।
(4) नागपृष्ठ	पूर्व पश्चिम की ओर लम्बी, उत्तर-दक्षिण दिशा में ऊँची एवं मध्य में नीची	मानसिक रोग, मृत्युभय स्त्री तथा पुत्रों की हानि और शत्रुओं की वृद्धिकारक होती है।

वास्तु शास्त्र के अनुसार आठों दिशाओं में भूमि की ऊँचाई का फल निम्न प्रकार होता है—

पूर्व दिशा में ऊँची		**पुत्रनाशकारक**
(पूर्व-दक्षिण के मध्य कोण)	अग्नि कोण में ऊँची भूमि	धन-लाभ
दक्षिण दिशा में ऊँची		**स्वास्थ्यप्रद**
(दक्षिण-पश्चिम के मध्य)	नैर्ऋत्य कोण में ऊँची भूमि	लक्ष्मी व धन-धान्य वृद्धि
पश्चिम दिशा में ऊँची		**पुत्र प्रदा, संतति लाभ**
(उत्तर-पश्चिममध्यकोण)	वायव्य में ऊँची भूमि	द्रव्य हानि
उत्तर दिशा में ऊँची		**आयु आरोग्य लाभ**
(उत्तर-पूर्व के मध्य कोण)	ईशान कोण में ऊँची भूमि	महाक्लेश एवं दु:ख

भूमि के शुभाशुभत्व में उसकी लम्बाई और चौड़ाई के परिमाण आदि को भी ध्यान में रखकर भूमि क्रय एवं भवन-निर्माण का विचार उत्तम एवं शुभ फलकारक होता है।

फटी हुई, शल्ययुक्त, दीमक वाली, ऊँची-नीची (ऊबड़-खाबड़) भूमि का भवन-निर्माण के लिये सदा त्याग करना चाहिए।

स्फुटिता मरणं कुर्यादूषरा धन नाशिनी।
सशल्या क्लेशदा नित्यं विषमा शत्रुवर्द्धिनी।।

फटी हुई भूमि से मृत्यु, ऊसर भूमि से धन-नाश, शल्ययुक्ता से सदैव दु:ख और ऊँची-नीची भूमि शत्रुओं की वृद्धि करने वाली होती है।

भूमि के जीवित और मृत आदि के लक्षणों में जिस भूमि पर वृक्ष हरे-भरे रहते हों और कृषि से सुन्दर उपज होती हो तथा पानी, घास एवं पत्थरों वाली भूमि को आवास योग्य जीविता भूमि कहते हैं। इसके अतिरिक्त भूमि मृताभूमि कहलाती है। मृता भूमि पर भवन का निर्माण करना शुभ नहीं होता है। इसमें किसी प्रकार की वंश-वृद्धि एवं अभ्युन्नति नहीं होती है, इसलिए सदैव इसका ध्यान रखना चाहिए।

भूमि के जीविता और मृतावस्था को ज्ञात करने के लिए भूमि की लम्बाई और चौड़ाई के योग में ग्राम के अक्षर को जोड़कर 4 से गुणा करें एवं गुणनफल में निवासकर्त्ता के नाम का अक्षर जोड़ते हुए का 3 भाग देने से 1 शेष रहे तो भूमि जीविता, 2 से समता और 0 शेष में वह भूमि मृता भूमि होती है।

तिथि सम्बंध से द्वार निषेध :

पूर्णिमा से कृष्णाष्टमी तक पूर्वमुख घर, कृष्ण नवमी से चतुर्दशी तक उत्तर-मुख, अमावस्या से शुक्लाष्टमी तक पश्चिममुख और शुक्लनवमी से शुक्लचतुर्दशी तक दक्षिणमुख का मकान नहीं बनाना चाहिए।

गृह-निर्माण में 2, 5, 3, 6, 7, 10, 12, 11, 13 और पूर्णिमा तिथियाँ शुभ फलदायिनी होती हैं। कृष्णपक्ष की अपेक्षा शुक्लपक्ष गृह-निर्माण में शुभ है।

अपने मकान की द्विगुणित ऊँचाई तक की भूमि के भीतर मार्ग के वृक्ष, स्तम्भ और कूप आदि ये मकान के वेधक होते हैं। अत: मकान की द्विगुणित ऊँचाई तक की चारों तरफ की जमीन स्वच्छ और उद्यान के उपयोग की रखनी चाहिए।

गृहारम्भ में पंचांग-शुद्धि :

मंगल, रविवार, रिक्ता, अमावस्या, प्रतिपद, अष्टमी तथा धनिष्ठादि रेवत्यन्त पंचक संज्ञक नक्षत्रों और बाणपंचक को छोड़कर शेष वार तिथि नक्षत्रों में गृह-निर्माण का कार्य शुभ होता है।

गृहारम्भ—लग्न से 12, 8 स्थान रहित शेष स्थानों में शुभ ग्रह होने चाहिएँ। (3/16/11) में पाप ग्रह होने चाहिएँ।

सफल राहुमुख विचार :

देव-मन्दिर, मानव मन्दिर (गृह) और वापी-कूप, तालाब आदि जलाशय के निर्माण में क्रमश: मीन, सिंह, मकर राशि के सूर्य में ईशान कोण से विलोम, वायव्य, नैर्ऋत्य और अग्निकोण में राहु का मुख होता है; जैसे देव-मन्दिर में मीन, मेष, वृषभ, ईशान में मिथुन, कर्क, सिंह इत्यादि के सूर्य में वायव्य आदि तथा गृह-निर्माण में सिंह, कन्या, तुला में ईशान इत्यादि तथा जलाशय निर्माण में-मकर, कुम्भ, मीन के सूर्य में ईशान इत्यादि से राहुमुख जानकर विपरीत दिशा में राहु का पुच्छ समझना चाहिए। पुच्छ दिशा में प्रथम खात का आरम्भ कर वहाँ पर शिला नींव स्थापन करना शुभ है।

मकान सीमा में कूप आदि जलाशयों का स्थान :

वास्तु के मध्य में कूप-निर्माण धनहानि के लिए होता है। वास्तु की ईशान दिशा में पुष्टि, पूर्व में ऐश्वर्य वृद्धि, अग्नि में पुत्र-नाश, दक्षिण में स्त्री-विनाश, नैर्ऋत्य में गृह-स्वामी की मृत्यु, पश्चिम में शुभ, वायव्य में शत्रुपीड़ा और वास्तु के उत्तर में कूप से गृह-स्वामी के लिए शुभ होता है।

भूमि की स्थिति :

विदध्यादचिरेणैव पूर्वादिप्लवतो मही।
मध्यप्लवा महीं नेष्टा न शुभा प्लवत: पुरा।।

वास्तु शास्त्र के अनुसार पूर्व दिशा की ओर ढालदार भूमि वृद्धि करने वाली, उत्तर-दक्षिण की ओर ढालू भूमि धन-धान्य प्रदान करने वाली, पश्चिम का ओर ढालू भूमि-ज्ञान एवं धन-नाश करने वाली तथा दक्षिण दिशा की ओर ढालदार भूमि मृत्यु देने वाली होती है।

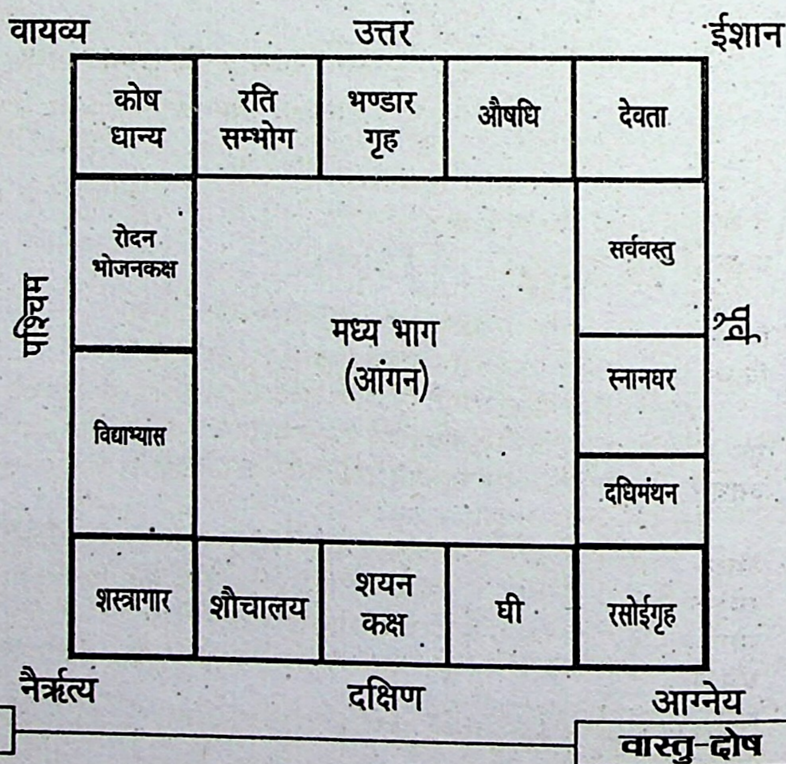
पूर्व में धन-प्राप्ति, आग्नेय में दाह, दक्षिण में मृत्यु, नैर्ऋत्य में धनहानि, पश्चिम में पुत्रमरण, वायव्य में प्रवास, उत्तर में धन-लाभ, ईशान में ज्ञान का लाभ होता है। मध्य में गड्ढा या ढालदार भूमि नेष्ट व अशुभ होती है। शास्त्रों में ऐसा भी मत मिलता है कि ब्राह्मण के लिए उत्तरी ढाल, क्षत्रिय को पूर्व में ढाल वाली, वैश्य को

दक्षिण की ओर ढाल तथा शूद्र को पश्चिम की ओर ढालदार भूमि शुभ होती है। विशेषत: ब्राह्मण किसी भी दिशा की ओर ढालदार भूमि पर भवन-निर्माण कर सकता है किन्तु क्षत्रिय, वैश्य आदि को ऊपर निर्धारित ढाल की ओर भूमि पर ही भवन का निर्माण शुभ फलदायक होता है।

भूमि की दिशाओं में लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई के आधार पर भी भूमि की गुणवत्ता व शुभाशुभत्व का विचार का गृह-निर्माण हेतु चयन करना चाहिए। तद्नुसार भूमि को चार भागों में विभक्त किया गया है।

भवन के भीतर शौच, स्नान और रसोई (पाकादि) के कमरे :

पूर्व में स्नानघर, आग्नेय में पाकशाला, दक्षिण में शयनकक्ष, नैर्ऋत्य में राजगृह में अस्त्र-शस्त्र और जनतान्त्रिक, जनगृह में साधारण व्यावहारिक औजार, कल-पुर्जे, कपड़े सीने आदि की मशीन, मोटर, ट्रैक्टर प्रभृति, पश्चिम में भोजनकक्ष, वायव्य में धान्य संग्रह (स्टोर रूम), उत्तर में कोषगृह और ईशान में देवगृह (स्वेष्ट देव का स्थान) का होना चाहिए। क्रमश: उक्त दो-दो कमरों के बीच में, दधिमंथन स्थान, घृत भण्डार, विद्याध्ययनकक्ष, रोदनगृह, (राजभवन में) रति-स्थान, औषधियों की जगह का कमरा और गृहस्थी के सभी प्रकार के अन्य आवश्यक पदार्थों को रखने के कमरे होने चाहिएँ। प्राचीन वैज्ञानिक पद्धतियों से निर्मित साधारण या राजमहल तक के घरों की बनावट को नीचे के चक्र से स्पष्ट समझिये।



भवनों की आयु का गृहयोग :

गृह के प्रारम्भ समय की लग्न से बृहस्पति लग्नगत, सूर्य-बुध सातवें, शुक्र चौथे, और तीसरे शनि हों, तो मकान की पूर्णायु 100 वर्ष की होती है। यदि लग्न में शुक्र, तीसरे सूर्य, मंगल छठे और बृहस्पति पंचम स्थान में हो, तो ऐसी ग्रह-स्थिति के मकान की आयु 200 वर्ष की होती है।

आयु सम्बंधी अन्य विचार :

ग्रह के आरम्भकालीन लग्न से लग्नस्थ शुक्र, दशम बुध, एकादश सूर्य लग्न रहित शेष केन्द्रों में (4/7/10) में बृहस्पति हो तो मकान शतायु होता है।

यदि बृहस्पति चौथे, चन्द्रमा दशम में, मंगल और शनि एकादश में हों, तो घर की आयु 80 वर्ष तक होती है।

लक्ष्मीयुक्त गृह के तीन गृहयोग :

(1) अपनी उच्च राशि-मीन लग्न में शुक्र, अथवा (2) अपनी उच्च राशि कर्क का बृहस्पति चतुर्थ, अथवा (3) अपनी उच्च राशि तुला का शनि एकादश स्थान में हो, तो ऐसी ग्रह-स्थितियों में प्रारम्भ किए गए एक वर्ष में गृह का सर्वारम्भ बहुत दीर्घ समय तक लक्ष्मीयुक्त होता है।

एक वर्ष में स्वामित्व परिवर्तन योग :

अत्यन्त शुभफल देने वाला एक भी ग्रह शत्रु के नवांश में होकर सप्तम अथवा चौथे हो तथा ब्राह्मणादिक वर्ण स्वामी ग्रह भी निर्बल हो, तो ऐसी ग्रह-स्थिति में प्रारम्भ किया गया घर एक साल के भीतर दूसरे के हस्तगत हो जाता है।

गृहारम्भ समय नक्षत्र विशेष से फल विशेष :

पुष्य, ध्रुव संज्ञक, मृगशिरा, श्रावण, आश्लेषा, पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रों में जिस किसी में बृहस्पति हो, तो बृहस्पतियुक्त—उस नक्षत्र में और बृहस्पतिवार के ही दिन प्रारम्भ किया गया घर पुत्र और राज्यप्रद होता है।

विशाखा, अश्विनी, चित्रा, धनिष्ठा, शततारा और आर्द्रा नक्षत्रों में जिस किसी में शुक्र ग्रह हो, तो शुक्रयुक्त—उस नक्षत्र में तथा शुक्रवार के ही दिन प्रारम्भ किया गया घर धन-धान्य से परिपूर्ण होता है।

इसलिए यह आवश्यक है कि भूमि का क्रय अथवा स्वामित्व प्राप्त करने एवं गृह-निर्माण से पूर्व जन्म-पत्रिका एवं इसके अभाव में गोचर दशा व प्रश्न लग्न के आधार पर योग की जानकारी करने पर किसी प्रकार की बाधा उपस्थित नहीं होती है।

इसके अभाव में भूमि अथवा भवन-निर्माण आर्थिक, सामाजिक प्रतिष्ठा, आयु-आरोग्य व अन्य प्रकार के लाभ के स्थान पर जन-धन की हानि की प्रबल सम्भावनाएँ हो सकती हैं। ज्योतिष शास्त्र में प्राचीन आचार्यों ने ऐसे मुहूर्त एवं योगों का उल्लेख किया है जिनके आधार पर भूमि क्रय एवं विक्रय, गृह-निर्माण एवं गृहस्वामित्व के लिए शुभ समय की जानकारी दी गई है, जो अग्रवत् है—

भूमि क्रय-विक्रय माह के दोनों पक्ष की 5/6/10/11/15 तथा कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा तिथियों में गुरुवार तथा शुक्रवार को मृगशिरा, पुनर्वसु, आश्लेषा, मघा, विशाखा, अनुराधा, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, मूल तथा रेवती नक्षत्र व शुभ चन्द्रबल में भूमि खरीद एवं बिचौती शुभ होती है। अत: भूमि के क्रय एवं विक्रय के लिए इस समय को देखा जा सकता है।

सामान्य रूप से यह देखा गया है कि बहुत-से लोग इस प्रकार की जानकारी किये बिना भूमि, भवन का क्रय-विक्रय एवं भवन-निर्माण आदि करने के पश्चात् इन सब बातों के सम्बंध में विचार करते हैं। अथवा इनसे उत्पन्न होने वाले अशुभ फलों पर पश्चाताप करते हैं एवं भूमि एवं भवन से दु:खी होते हैं। स्वयं के लिए आवास का उपभोग करना तो दूर वे लागत मूल्य से कम मूल्य पर भी इसे विक्रय को तैयार होने के पश्चात् भी कोई व्यक्ति उसे नहीं खरीदता है। व्यक्ति अपनी पूर्व स्थिति को ही वापस प्राप्त करना चाहता है।

जातक की जन्म-पत्रिका में निम्नलिखित ग्रहों में योग, ग्रहों के गोचर राशि में संचरण के समय अथवा विंशोत्तरी महादशा एवं प्रत्यन्तर दशा काल में भूमि लाभ एवं भवन व भवनों का स्वामित्व अथवा निर्माण के योग से भवन एवं भूमि के सुख प्राप्त होते हैं। मुख्यत: गृह-सुख का विचार चतुर्थ भाव से किया जाता है—

(1) जातक की जन्म-पत्रिका में चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र की दृष्टि चतुर्थ स्थान पर हो, तो बाग-बगीचे का लाभ एवं सुख प्राप्त होता है।

(2) चतुर्थ स्थान बृहस्पति से युक्त अथवा दृष्ट होने पर मन्दिर-निर्माण का सुयोग प्राप्त होता है।

(3) कारकांश कुण्डली के चतुर्थ स्थान में चन्द्र एवं शुक्र अथवा राहु, शनि का योग हो या फिर उच्च राशि का ग्रह हो, तो जातक के पास श्रेष्ठ भवन या उसे मकान का सुख प्राप्त होता है।





आधुनिक भवनों के रूप-स्वरूप

वर्तमान में भवन भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं। प्रत्येक भवन की बनावट भिन्न-भिन्न होती है। बनावट के आधार पर हम सब प्रकार के भवनों को 12 भागों में बाँट सकते हैं। बारह प्रकार के भवन इस प्रकार होते हैं—(1) निवास-गृह (2) सरकारी क्वार्टर, (3) सरकारी कार्यालय, (4) व्यापारिक भवन, (5) कारखाने, (6) विद्या भवन, (7) पुस्तकालय, (8) क्लब, (9) धार्मिक स्थान, (10) स्मृति ग्रह, (11) अस्पताल, (12) किले अर्थात् रक्षा सम्बंधी स्थान।

इन बारह प्रकार के भवनों का संक्षेप में नीचे वर्णन किया गया है—

(1) निवास-गृह :

मनुष्य के रहने के लिए जो मकान बनाए जाते हैं उन्हें निवास-गृह कहते हैं। इन गृहों का निर्माण मनुष्य की आवश्यकता और उपलब्ध पूँजी के अनुसार किया जाता है। हम अपने देश में सस्ते से सस्ता और मँहगे से मँहगा निवास-गृह तैयार कर सकते हैं। यहाँ पर 50,000 रुपए से तथा 5 लाख रुपये से निवास-गृह तैयार हो सकता है। मकान बनाते समय, चाहे वह कम लागत से बनाया जाए या ज्यादा लागत से, निम्न बातों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए। पहली बात तो यह देखनी चाहिए कि जिस भूमि पर मकान बनाना हो वह सील वाली अथवा कलर वाली न हो। दूसरे उस मकान के आस-पास कूड़ादान या सार्वजनिक शौचालय न हो।

तीसरी ध्यान देने योग्य बात यह है कि मकान के अगले भाग के सामने सड़क होनी चाहिए। यदि दोनों ओर सड़क या गली हो, तो और भी अच्छी बात है। इस बात को भी ध्यान में रखना चाहिए कि मकान के आसपास कोई निर्माणशाला न हो, क्योंकि मकान के पास निर्माणशाला होने से उसका धुआँ हर समय मकान में आता रहेगा। मकान बड़ी सड़क से भी दूर होना चाहिए ताकि बसों आदि से निकलने वाला धुआँ भी मकान में न आ सके। मकान के भीतरी भाग में ध्यान देने योग्य यह बात है कि रसोईघर व शौचालय रिहायशी कमरों के पास न बनाए जाएँ। कमरों में खिड़कियाँ व दरवाजे इस प्रकार से बनाने चाहिएँ जिससे उनमें सीधी हवा आ-जा सके। कमरों की बनावट इस प्रकार से होनी चाहिएँ कि उनमें धूप आ सके। मकान बनाते समय उसमें नालियों की ओर भी विशेष ध्यान देना चाहिए। नालियाँ इस तरह की नहीं होनी चाहिएँ कि उनमें पानी खड़ा रहे।

अब देखने वाली बात है कि निवास-गृह में कमरों की बाँट कैसे की जाए। वैसे

देखा जाए तो हममें से बहुत-से लोग एक ही कमरे में गुजर करते हैं। एक ही कमरा उठने-बैठने व सोने आदि के लिए भी प्रयोग में लाया जाता है। कमरों की बाँट तो धनी लोगों की कोठियों के सम्बंध में ही की जा सकती है, परन्तु कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो न तो बहुत धनी होते हैं और न बहुत गरीब। ऐसे लोगों के लिए देश में विकास प्राधिकरण तथा कुछ राज्यों में आवास बोर्ड 25, 50, 75, 100, 150 तथा 200 वर्ग मीटर के प्लाट दे रहे हैं। अत: हम मकानों की बाँट कोठियों और मकानों या फ्लैटों के रूप में कर सकते हैं। प्राय: इनमें एक ड्राइंगरूम तथा दो बेडरूम होते हैं। कोठियों में मेहमानों के लिए कमरा, कार्यालय के लिए कमरा तथा नौकरों आदि के लिए कमरा भी होता है।

ड्राइंगरूम जितना बड़ा हो उतना ही अच्छा होता है। इस कमरे में सोफा सैट, कुर्सियाँ आदि बैठने-उठने और मेहमानों से मिलने के लिए बिछाई जाती हैं। आजकल तो ड्राइंगरूम तथा डायनिंग रूम इकट्ठा बनाने का रिवाज हो गया है। औसत यह कमरा 24' x 14' होना चाहिए।

सोने के कमरे रसोईघर से दूर होने चाहिएँ। इसमें खिड़कियाँ और रोशनदान, अवश्य होने चाहिएँ। इसमें क्रॉस वेन्टीलेशन भी अवश्य होना चाहिए। सोने के कमरों में हल्के रंग की सफेदी होनी चाहिए तथा इनमें अधिक सामान भी नहीं रखना चाहिए।

स्नानगृह सोने के कमरों के साथ ही होना चाहिए। स्नानगृह में सफेद टाइलों का फर्श होना चाहिए। स्नानगृह की छत की ऊँचाई कमरों की ऊँचाई से कम भी हो, तो ठीक है। इसमें पानी के निकास के लिए अच्छी पानी की व्यवस्था होनी चाहिए।

रसोईघर ड्राइंगरूम तथा सोने के कमरों से तनिक दूर होनी चाहिए। यद्यपि आजकल लकड़ी व कोयले का प्रयोग कम होकर उसके स्थान पर खाना गैस से बनाया जाता है, फिर भी यदि रसोई थोड़ी दूर हो, तो अच्छा ही है, क्योंकि इसके साथ वाले कमरे ज्यादा गर्म नहीं होंगे। रसोईघर के दरवाजों और खिड़कियों में जाली लगानी चाहिए ताकि मक्खियाँ आदि रसोई में न आ सकें। रसोईघर में खुरा अवश्य ही बनाना चाहिए। आजकल रसोईघर में प्राय: सिंक लगाया जाता है।

निवास-गृहों में सामान रखने के लिए स्टोररूम, आमतौर पर बना लिया जाता है। 8' x 8' का स्टोररूम (भण्डारगृह) बहुत अच्छा माना जाता है। स्टोररूम का फर्श मजबूत होना चाहिए ताकि उसमें नमी न आ सके क्योंकि नमी आ जाने से उसमें पड़ी वस्तुएँ खराब हो जाएँगी। इसमें रसद की सभी वस्तुएँ रखी जा सकती हैं।

शौचालय बनाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि इसमें पानी के निकास की नालियाँ बाहर की ओर हों और इसके अन्दर हवा के आने-जाने का बन्दोबस्त हो।

उपरोक्त कमरों के अलावा बड़ी कोठियों में अग्रांकित कमरे की व्यवस्था भी की जाती है—

पूजा-पाठ का कमरा :

प्रत्येक व्यक्ति की किसी न किसी धर्म में निष्ठा होती है। जब कभी कोई व्यक्ति कष्ट से दु:खी होता है, तो वह अपने इष्ट देवता को याद करता है। अत: प्रत्येक कोठी या बड़े मकान में एक कमरा ऐसा बनाया जाता है जो शोरगुल से दूर हो और जिसमें मनुष्य थोड़ा समय प्रभु का चिन्तन भी कर सके और निवास-गृह से उसका अधिक सम्बंध न रहे।

कोठियों में मोटरगाड़ी आदि के लिए गैराज भी बनाया जाता है। मोटर गैराज ऐसा होना चाहिए जिसमें हर किस्म की मोटर आ सके। यह बाहरी फाटक की सीध में बनाया जाना चाहिए, जिसमें मोटर को आने-जाने में रुकावट न हो।

कोठियों में नौकरों के लिए भी एक पृथक् कमरा बनाया जाता है। यह कमरा प्राय: कोठी के पिछले भाग में बनाया जाता है।

(2) सरकारी क्वार्टर :

सरकारी क्वार्टर प्राय: सादे बनाए जाते हैं। सरकारी क्वार्टरों के आसपास वायु व रोशनी के लिए सड़कें और गलियाँ बनाई जाती हैं। इसके पास ही बच्चों के खेलने तथा अन्य व्यक्तियों के बैठने-उठने के लिए पार्क बनाए जाते हैं। सरकारी क्वार्टर भिन्न-भिन्न टाइप के होते हैं। भिन्न-भिन्न टाइप के क्वार्टर कर्मचारियों के वेतन के आधार पर छोटे और बड़े बनाए जाते हैं। बम्बई (मुम्बई), कलकत्ता, मद्रास (चेन्नई) और दिल्ली जैसे बड़े-बड़े नगरों में अब भूमि की कमी के कारण चार-चार और आठ-आठ मंजिलें क्वार्टर भी बनाये जाते हैं।

(3) सरकारी कार्यालय :

सरकारी कार्यालयों में कमरों का आकार कार्यालय में काम करने वाले व्यक्तियों के हिसाब से रखा जाना चाहिए। कमरे इस तरह से बनाए जाने चाहिएँ जिससे उनमें रोशनी और वायु ठीक तरह से आए। कार्यालय में बरामदे आदि भी अवश्य ही बनाए जाने चाहिएँ। कार्यालय के चारों ओर एक खुला मैदान भी छोड़ा जाना चाहिए ताकि उसमें बगीचा आदि लगाया जा सके और साइकिल स्टैंड व मोटर और स्कूटर खड़ा करने का इन्तजाम भी किया जा सके। कार्यालय का अभिलेखागार किसी ऐसे स्थान पर बनाया जाना चाहिए, जो हर प्रकार से सुरक्षित हो और वहाँ पर नमी आदि भी न हो।

(4) व्यापारिक स्थान :

व्यापारिक स्थानों में दुकानें, फर्मों के कार्यालय, बैंक, बीमा कम्पनियाँ तथा कारखाने आदि मुख्य हैं। ऐसे भवन आवश्यकता के अनुसार विभिन्न प्रकार से बनाए जाते हैं। ऐसे स्थानों के साथ ही वहाँ के कर्मचारियों की रिहायश के लिए भी यदि मकान बना दिए जाएँ तो बहुत अच्छा रहता है, क्योंकि कर्मचारियों का आने-जाने का समय बच जाता है और वे अपना काम अधिक कुशलतापूर्वक कर लेते हैं।

(5) कारखाने :

आमतौर पर देखा गया है कि कारखाने नगरों के बाहर होते हैं। यह बात है भी ठीक। कारखाने नगरों के बाहर ही होने चाहिएँ, परन्तु छोटे-छोटे कारखाने जैसे छपाई का प्रेस, बटन बनाने का कारखाना, लोहा ढालने की भट्टी, आटा पीसने की चक्की, जहाँ थोड़े व्यक्ति काम करते हों, नगर के भीतर बनाए जा सकते हैं। बड़े कारखानों की दीवारों की चिकनाई और फर्श सीमेंट के मसाले से तैयार करने चाहिएँ।

(6) विद्या भवन :

विद्या भवन भी नगर के बाहर ही होने चाहिएँ क्योंकि बाहर की जलवायु बहुत स्वच्छ होती है। विद्या भवनों के कमरे बहुत खुले होने चाहिएँ ताकि इनमें खुली हवा आ सके। कमरों के साथ बरामदा भी अवश्य होना चाहिए। विद्या भवनों के साथ क्रीड़ास्थल भी होना चाहिए, जहाँ बच्चे जाकर खेल-कूद सकें।

(7) पुस्तकालय :

पुस्तकालय ऐसा बनाना चाहिए जिसमें पुस्तकों की दीमक तथा अन्य कीटाणुओं से रक्षा की जा सके। इसलिए पुस्तकालयों की दीवारों तथा फर्श पर सीमेंट का प्लस्तर करना बहुत जरूरी है। पुस्तकालय के लिए एक बड़ा कक्ष बनाना भी आवश्यक है। इस कक्ष में रोशनी की व्यवस्था करना भी आवश्यक है, ताकि उसमें बैठने वाले व्यक्तियों को रोशनी के अभाव का सामना न करना पड़े। इस स्थान पर आवाज अधिक नहीं पहुँचनी चाहिए, जिससे वहाँ पर अध्ययन करने वाले व्यक्तियों को परेशानी न हो।

(8) क्लब :

क्लब मनोरंजन के लिए खोले जाते हैं। क्लबों के साथ खुला मैदान हो, तो बहुत अच्छा है। क्लबों के कमरों में रोशनी के लिए खिड़कियाँ और रोशनदान होने चाहिएँ।

(9) धार्मिक स्थान :

भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है। यहाँ पर लोगों का धार्मिक स्थानों की ओर अधिक झुकाव रहा है। यहाँ पर हर नगर में मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा, गिरजाघर होते हैं। ऐसे स्थानों के चारों ओर काफी जमीन खुली छोड़ दी जाती है, जिससे कि बाहरी शोर, भगवत चिन्तन करते समय सुनाई न दे। ऐसे स्थान सदैव खुले और हवादार बनाए जाते हैं।

(10) स्मृतिगृह :

स्मृतिगृह प्रायः मन्दिर, मस्जिद, मकबरा, गुरुद्वारा तथा मीनार आदि के रूप में बनाए जाते हैं। ऐसे स्थान प्रायः सुन्दर बनाए जाते हैं। ये मजबूत होते हैं और

हजारों वर्षों तक कायम रहते हैं। स्मृतिगृह प्रायः संगमरमर के बनाए जाते हैं। आगरा के ताजमहल और चित्तौड़ के विजय स्तम्भ को कौन भूल सकता है।

(11) अस्पताल :

अस्पताल दो प्रकार के होते हैं। छोटे अस्पताल को डिस्पेंसरी भी कहा जाता है। डिस्पेंसरी में रोगी देखकर दवा दे दी जाती है, परन्तु बड़े अस्पताल में रोगियों के रहने के लिए भी स्थान का बन्दोबस्त होता है। अस्पतालों में खून, टट्टी, थूक की जाँच करने, एक्स-रे करने तथा सब प्रकार की डॉक्टरी जाँच करने की व्यवस्था होती है। अस्पताल भी नगरों के कोलाहल से दूर नगर के बाहर ही बनाए जाते हैं। अस्पताल के साथ ही अस्पताल में काम करने वाले कर्मचारियों की रिहायश के लिए मकानों की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि आपात की स्थिति में उन्हें शीघ्र बुलाया जा सके। इससे उनकी कार्यकुशलता भी बढ़ेगी।

(12) किले आदि :

रक्षा के लिए किले, पुलिस-चौकियाँ, जेलखाने आदि बनाए जाते हैं। प्राचीन काल में किलों का बहुत रिवाज था, परन्तु अब इनकी इतनी आवश्यकता नहीं, क्योंकि अब युद्ध का ढंग बदल गया है। आजकल नवीन किस्म के शस्त्र युद्ध के प्रयोग में लाये जाते हैं। इन शस्त्रों के प्रयोग में किलों के होने या न होने का कोई महत्व नहीं है। आजकल वायुयानों से रक्षा करने वाले स्थानों की आवश्यकता है। हवाई अड्डे नगरों के बाहर होने चाहिएँ, जिससे युद्ध के समय नगरवासियों को अधिक कठिनाई का सामना न करना पड़े।





औद्योगिक इकाइयों की आवश्यकता

औद्योगिक इकाइयाँ दो तरह की होती हैं। पहली इकाई वे हैं, जो आवासीय सीमा में पनपती हैं तथा दूसरी वे हैं, जो निर्धारित औद्योगिक आस्थान में स्थापित होती हैं—

शहरी उद्योग :

शहरी उद्योगों में वे उद्योग शामिल हैं, जो शहर में यत्र-तत्र फैले हुए होते हैं। निजी जमीन पर या किराए के भवनों में ये छोटे-मोटे कल-कारखाने कार्य कर रहे होते हैं; जैसे—लोहा, प्लास्टिक, मिठाई के डिब्बे बनाने का कारखाना।

औद्योगिक आस्थानों की औद्योगिक इकाइयाँ :

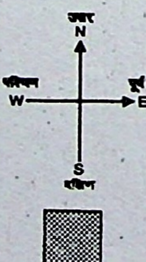
औद्योगिक विकास के साथ-साथ देश में हर प्रदेश की सरकार ने प्राय: हर बड़े शहर के बाहर औद्योगिक आस्थान (इण्डस्ट्रियल एरिया) बना दिया है। इण्डस्ट्रियल एरिया में सरकार हल्के एवं भारी उद्योग लगाने के लिए उचित मूल्य में भूखण्ड देती है। अत: इन औद्योगिक भूखण्डों का वास्तु में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान हो गया है।

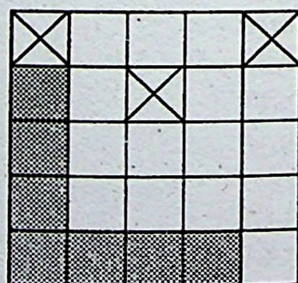
भूमि व वास्तु शास्त्र के मुख्य सिद्धान्त सभी स्थलों पर समान रूप से लागू होते हैं। अत: औद्योगिक क्षेत्र में जो भूखण्ड पसंद किया जाए, वह भूखण्ड वास्तु शास्त्र के अनुरूप होना चाहिए।

उद्योग में मशीनों की स्थिति सबसे महत्वपूर्ण है। अत: आगे दिये गये रेखा चित्रों के अनुरूप मशीनों की स्थापना करनी चाहिए।

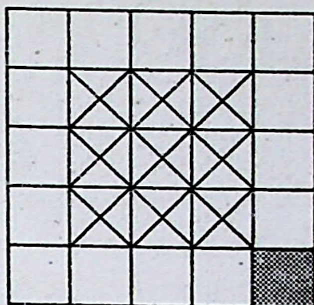
मुख्य मशीनों की स्थापना :

दक्षिण-पश्चिम दिशा में स्थित स्थल में फैक्ट्री की मुख्य एवं महत्वपूर्ण मशीनों को लगाया जाना चाहिए। अर्थात् दक्षिण-पश्चिम में भारी मशीनों को रखा जाना चाहिए। ऐसा करने से मशीनों की आयु लम्बी होगी एवं उत्पादन बढ़ने से फैक्ट्री-स्वामी की समृद्धि में वृद्धि होगी।





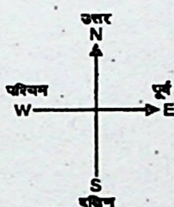
ऊर्जा-स्रोत, विद्युत बायलर (भट्टी) आदि का स्थान :

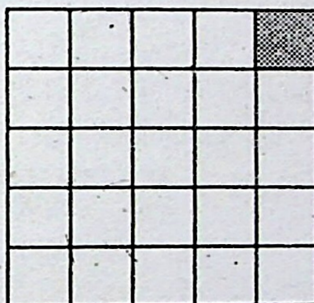


ये सारे स्रोत एवं संसाधन आग से सम्बंधित हैं। ये गर्मी उत्पन्न करते हैं, अत: इनकी स्थापना आग्नेय कोण में ही की जाए जो वास्तु शास्त्र के सिद्धांतों के अनुरूप होता है। आग से सम्बंधित सामान यदि आग्नेय कोण में रहता है, तो दुर्घटना की संभावनाए कम रहती हैं।

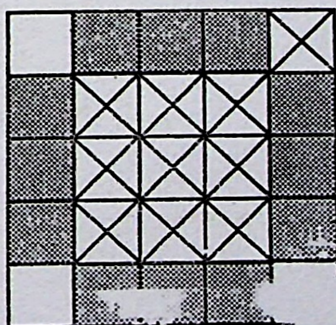
रिसेप्शन एवं पूजागृह :

ईशान की ओर पूजागृह या स्वागत-कक्ष (रिसेप्शन) रहना चाहिए। इस स्थान की पवित्रता का बहुत ख्याल रखना चाहिए। यह कोण देवताओं का निवास-स्थल होता है। आग्नेय कोण में यदि स्वागत-कक्ष (रिसेप्शन) होगा तो उत्पादन में या तो खराबी होगी, या व्यापार में घाटा होता जाता है।





प्रशासनिक कार्यालय :



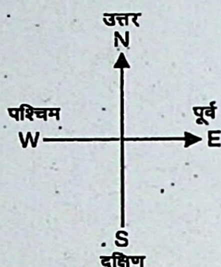
प्रशासनिक कार्यालय के लिए पूर्व का मध्य-क्षेत्र, पश्चिम का मध्यक्षेत्र एवं उत्तर तथा दक्षिण का मध्यक्षेत्र उपयुक्त समझा गया है। इसमें पूर्व एवं पश्चिम का क्षेत्र सर्वोत्तम है।

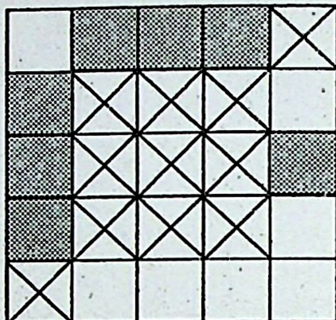
ईशान एवं औद्योगिक क्षेत्र का हृदय-स्थल प्रशासनिक कार्य हेतु उपयुक्त नहीं होता है। यदि इन क्षेत्रों में प्रशासनिक कार्यालय बनाया गया तो हमेशा गलत निर्णय का शिकार होना पड़ेगा एवं तनाव बना रहेगा। प्रशासन से असंतुष्ट होकर कर्मचारीगण, हड़ताल करके कम्पनी को बंद भी करवा सकते हैं।

कच्चा माल हेतु भण्डारगृह :

मध्य-उत्तर, मध्य-पश्चिम एवं पूर्व का थोड़ा-सा भाग का कच्चा माल भण्डारण हेतु स्थल-निर्माण किया जाना चाहिए।

ईशान एवं मध्य क्षेत्र में कच्चा माल रखना उचित नहीं होता है।

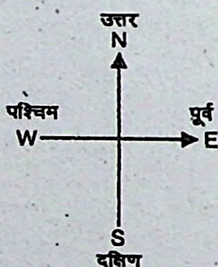


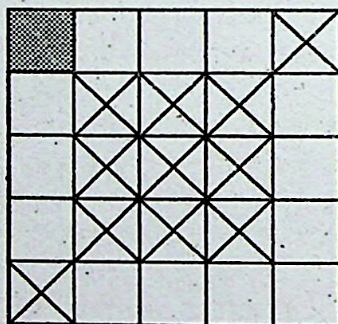


तैयार माल गोदाम :

तैयार माल रखने के लिए सदैव वायव्य कोण में स्थल चयन करना चाहिए। इस कोण में तैयार माल रखने से माल की खूबसूरती एवं चमक अधिक लम्बी अवधि तक बनी रहती है तथा माल भी जल्दी बिक जाता है।

ईशान, नैर्ऋत्य एवं औद्योगिक स्थल के मध्य में तैयार माल नहीं रखना चाहिए। इससे माल क्षतिग्रस्त होने की संभावना रहती है एवं माल का लाभ भी प्रभावित होता है।



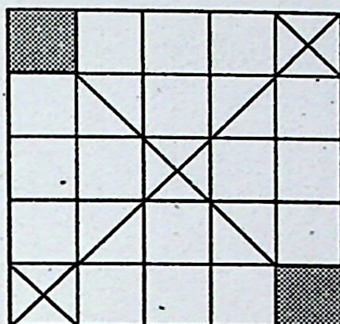


चौकीदार एवं कर्मचारियों का आवास :

चौकीदारों के लिए निवास हेतु आग्नेय कोण को सर्वोत्तम माना गया है। यहाँ चौकीदार को रात में नींद नहीं आएगी। फैक्ट्री में काम करने वाले कर्मचारियों के लिए वायव्य दिशा में निवास करने का आवास बनाना चाहिए। वायव्य में इन्हें गहरी नींद आएगी एवं पूर्ण आराम प्राप्त होगा। कर्मचारियों को मेहनत के पश्चात्

नींद आना एवं आराम मिलना आवश्यक है, ताकि वे दूसरे दिन फिर तरो-ताजा होकर काम कर सकें।

ईशान, नैर्ऋत्य अथवा मध्य-क्षेत्र में कर्मचारियों एवं चौकीदारों के रहने के निवास नहीं बनाए जाने चाहिएँ, इससे उद्योग को क्षति पहुँचने की संभावना बलवती रहती है।



ध्यान देने योग्य नियम :

(1) मुख्यद्वार उत्तर, पूरब अथवा पश्चिम दिशा में हो।

(2) यदि मुख्यद्वार दक्षिण में रखना पड़े तो दक्षिण द्वार के ठीक सामने उत्तर दिशा में भी एक द्वार अवश्य रखें।

(3) फैक्ट्री में बायलर सदैव दक्षिण-पूर्व दिशा में होना चाहिये।

(4) जैनरेटर पश्चिम-दक्षिण दिशा में लगाएँ।

(5) औद्योगिक इकाई के मुख्यद्वार के समीप चौकीदार या गार्ड का कक्षद्वार दिशा के अनुसार मुख्यद्वार के बायीं या दायीं ओर रहना चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि मुख्यद्वार उत्तर में हो, तो यह द्वार से पश्चिम में होना चाहिए। मुख्यद्वार यदि पूरब में हो, तो द्वार के दक्षिण या मुख्यद्वार पश्चिम में हो, तो द्वार के उत्तर और मुख्यद्वार दक्षिण की ओर हो, तो द्वार के पूरब की ओर स्थापित किया जाना चाहिए।

(6) प्रशासकीय कार्यालय हेतु निर्दिष्ट दिशा कोण में स्थित स्थलों में निर्माण किया जाना चाहिए। सर्वोच्च अधिकारी के बैठने की व्यवस्था हर हाल में दक्षिण-पश्चिम या दक्षिण-पूर्व क्षेत्र में होना चाहिए। तकनीकी सहायक, लेखाकार आदि उनसे पूर्व उत्तर या दक्षिण-पूर्व की ओर बैठाए जाने चाहिएँ। विक्रय अधिकारी, चौकीदार या अस्थायी कर्मचारी आदि के बैठने का स्थान कार्यालय के उत्तर-पश्चिम क्षेत्र में ही रखना चाहिए।

(7) उत्तर-पूर्व क्षेत्र केवल आगन्तुकों के लिए स्वागत-कक्ष या प्रतीक्षालय हेतु ही उपयोग में लाया जाना चाहिए अथवा यह क्षेत्र खाली रखा जाए, स्थान खाली रखे जाने पर वहाँ छोटा-सा उपवन लगाया जाना चाहिए।

(8) सामान की नाप-तौल आदि हेतु उत्तर-पश्चिम क्षेत्र उपयुक्त रहता है। अस्थायी तौर पर उत्तर-पूर्व के खाली क्षेत्र का प्रयोग भी किया जा सकता है।

(9) पानी का भण्डार या जल संसाधन हेतु उत्तर-पूर्व क्षेत्र श्रेष्ठ माना गया है।

(10) प्रसाधन उत्तर-पश्चिम या दक्षिण-पूर्व क्षेत्र के समीप ही बनाया जाना शास्त्र-सम्मत होता है।

(11) जहाँ तक संभव हो, मशीन स्थापित करते समय उसकी दिशा पश्चिम तथा कारीगर का मुँह पूरब की ओर होना चाहिए।





फेंग सुई वास्तु विज्ञान

चीन, हांगकांग एवं दक्षिण-पूर्व एशिया में भारतीय वास्तु शास्त्र का परिवर्तन रूप 'फेंग सुई' है। वहाँ की 90 प्रतिशत आम जनता फेंग सुई के आधार पर अपने होटल, भवन, दुकान, कामर्शियल कॉम्पलेक्स आदि का निर्माण करती है। यही वजह है कि हांगकांग, बैंकांक, सिंगापुर, कुआलालामपुर, सिओल इत्यादि विश्व के सबसे बड़े व्यापारिक केन्द्र हैं।

'फेंग सुई' शास्त्र में भी भारतीय वास्तु शास्त्र की भाँति मुख्य आधार प्रकृति के पाँच तत्व हैं। इनमें पानी, अग्नि, भूमि, सोना एवं लकड़ी को नवीन भवन बनाने का आधार माना जाता है। इनका अनुपातिक तालमेल यदि सही हो, तो भवन में रहने वाला सुखी रहता है अन्यथा अनेक प्रकार के कष्टों को भोगता है। भारत में जिन पंचतत्वों की मान्यता है वे हैं—

1. पृथ्वी,
2. जल,
3. अग्नि,
4. वायु,
5. आकाश।

पाश्चात्य मान्यताओं के अनुसार उनके उपरोक्त प्राकृतिक पाँच तत्व व्यक्ति के जन्म-समय पर निर्भर रहते हैं। उदाहरणार्थ, यदि किसी व्यक्ति का जन्म प्रात: 5.00 बजे का है, तो उसका तत्व 'अग्नि' होगा। अग्नि तत्व वाले को अपने भवन की पूर्व एवं पूर्व इशान्य वाली दिशा में निर्माण-कार्य प्रारम्भ कराना चाहिए। दिशा को स्वच्छ एवं अलंकृत करने के लिए ज्यादा ध्यान देना चाहिए। देखें अग्रलिखित समय तथा वर्गीकरण सारिणी:—

पंचतत्व	जन्म-समय	निर्माण-कार्य
लकड़ी (Wood)	11P.M.-1A.M. 1A.M.-3A.M.	उत्तर (N) उत्तर-ईशान्य (NE)
अग्नि (Fire)	3A.M.-5A.M. 5A.M.-7A.M.	पूर्व-ईशान्य (NE) पूर्व (E)
पृथ्वी (Earth)	7A.M.-9A.M. 9A.M.-11A.M.	पूर्व-अग्निकोण (SE) दक्षिण-अग्निकोण (SE)
स्वर्ण (Gold)	11A.M.-1P.M. 1P.M.-3P.M. 3P.M.-5P.M. 5P.M.-7P.M.	दक्षिण (S) दक्षिण-नैर्ऋत्य (SW) पश्चिम-नैर्ऋत्य (SW) पश्चिम
जल (Water)	7P.M.-9P.M. 9P.M.-11P.M.	पश्चिम-वायव्य (NW) उत्तर-वायव्य (NW)





शॉपिंग सेन्टर की उपयोगिता

भवन-निर्माण के साथ-साथ किसी भी शॉपिंग सेन्टर को विकसित करने हेतु भी वास्तु सिद्धान्तों का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए भूमि-चयन से निर्माण तक सभी कार्यों में वास्तु नियमों का ध्यान रखना चाहिए। शॉपिंग सेन्टर के निर्माण हेतु भूखण्ड में यदि पूर्व-उत्तरोन्मुखी है और उसमें उत्तर-पूर्व दिशा में विस्तार है, तो उत्तम है। प्रयास यह करें कि दुकानों के द्वार उत्तर या पूर्व की ओर रहें। भूखण्ड में उत्तर-पूर्व क्षेत्र में सर्वाधिक खुला स्थान रखें और बाग-बगीचा, हरियाली अथवा पार्किंग आदि की व्यवस्था रखें। यदि भूमि वास्तु नियमानुसार शुद्ध नहीं है, तो सर्वप्रथम उसका वास्तुदोष दूर करें।

प्रत्येक स्थान पर पूर्व-उत्तरोन्मुख भूखण्ड उपलब्ध नहीं होते हैं। यदि ऐसा नहीं है, तो मानचित्र इस प्रकार बनाएँ कि उत्तर व पूर्व का स्थान अधिकाधिक खाली रहे। व्यावसायिक केन्द्र में पानी की व्यवस्था उत्तर-पूर्व क्षेत्र में करनी चाहिए। ऊपरी टंकी वायव्य कोण में बनानी चाहिए। विद्युत व जैनरेटर आदि का प्रबंध आग्नेय कोण में करना चाहिए। स्टोर दक्षिण-पश्चिम दिशा में ही बनाएँ। उत्तर-पूर्व में मन्दिर या पूजा-स्थल बनाएँ। शौचालय दक्षिण भाग में रखें। बालकॉनी उत्तर या पूर्व में ही बनाएँ।

शॉपिंग सेन्टर की दुकानों में भी वास्तु-नियमों का पालन करना चाहिए। दुकान के उत्तर-पूर्व क्षेत्र को पूजा-स्थल के रूप में रखें। इस स्थान को शुद्ध रखें। यहाँ पीपे का पानी भी रखें। इस क्षेत्र को अधिकाधिक खुला रखें और शुद्ध रखें। आलमारी या फर्नीचर दुकान के दक्षिण-पश्चिम भाग में बनाएँ। बिक्री का माल दक्षिण-पश्चिम व उत्तर-पश्चिम क्षेत्र में रखें। दक्षिण-पश्चिम क्षेत्र में दुकान के स्वामी के बैठने की व्यवस्था करें। केन्द्र के भाग को यथासम्भव रिक्त रखें। दुकान में बिजली का मीटर, मेनस्विच आदि आग्नेय कोण में स्थापित करें। इसी प्रकार सिनेमाहॉल, होटल तथा रेस्तरां का निर्माण कराएँ।

उपनगर अथवा कॉलोनी :

देश के विभिन्न भागों में गृह-निर्माण सहकारी समितियाँ तथा शासकीय स्तर पर नगर विकास निगम, नगरपालिकायें, पंचायतें, आवास मण्डल आदि सामान्य रूप से आवासीय योजनायें बनाकर एकमंजिले अथवा बहुमंजिले भवनों का निर्माण कर रहे हैं। प्राय: देखा गया है कि ये भवन वास्तु शास्त्र के सिद्धान्तों पर

खरे नहीं उतर रहे हैं, क्योंकि इनके निर्माण के समय वास्तु की जानकारी नहीं की जाती है। दक्षिण भारत में प्राय: आवासीय योजनाओं के प्रारम्भ में तथा भवन-निर्माण के समय वास्तु सिद्धान्तों का अधिक पालन किया जाता है। वे अपनी योजनाओं को वास्तु के अनुरूप वास्तु शास्त्र के आधार पर निर्मित एवं तैयार कराकर वे प्रचार करते हैं कि ये योजना और आवास वास्तु शास्त्र के अनुसार हैं। यदि देश के अन्य भागों में भी इस प्रकार की वास्तु पद्धति आवासीय योजनाओं के लिए स्वीकार कर भवन-निर्माण की प्रक्रिया अपनाई जाये तो साधारण मनुष्य को भी आवास के सम्बंध में मानसिक शान्ति प्राप्त होने के सुअवसर प्राप्त होंगे।

जितनी बड़ी आवासीय योजनाएँ होंगी उनमें सुविधाएँ भी उसी मात्रा में होनी चाहिएँ। बड़ी आवासीय योजनाओं के अन्तर्गत सुविधाओं के लिए निम्नलिखित दिशाओं के अनुसार निर्माण की योजनाएँ बनाई जानी चाहिएँ—

- आवासीय योजनाओं के चारों ओर परकोटा बनाया जाये जिससे साधारण व्यक्ति की सुरक्षा हो सके। योजना के बाद चारों दिशाओं में मुख्यद्वार एवं उपद्वारों का निर्माण वास्तु शास्त्र के अनुसार किया जाये।
- प्रवेश-द्वारों के पास सुरक्षा की दृष्टि से पुलिस थाना, चौकियाँ, वाचमैन, सिक्योरिटी रूम आदि के स्थानों की व्यवस्था की जानी चाहिए। इससे साधारण मनुष्य भी भयमुक्त एवं तनाव-रहित वातावरण में रहकर अपने परिवार एवं स्वयं की उन्नति के लिए सतत् प्रयत्नशील रहेगा और वह राष्ट्रीय योजनाओं में अपनी भागीदारी कर्त्तव्यनिष्ठापूर्ण ढंग से संचालित कर सकेगा।
- इन योजनाओं का पूर्वी एवं उत्तरी भू-भाग ढालदार रखना चाहिये। इससे साधारण मनुष्य के लिए बनाई गई योजना एवं उसमें निर्मित भवन शुभ एवं उन्नतिकारक रहेंगे।
- आवासीय भवनों की पूर्व दिशा में तरणताल (स्वीमिंग पूल), सार्वजनिक भवन, सरकारी एवं अर्द्धसरकारी कार्यालय, कोष कार्यालय, अधिकारियों एवं कर्मचारियों के अस्थायी आवास तथा पार्क, जल के लिए बोरिंग विवाह स्थल (मैरिज हॉल) आदि का निर्माण करना चाहिए।
- बहुमंजिले भवन तथा योजना के दक्षिणी एवं पश्चिमी भाग में पंखे, मशीनरी मार्केट (इलैक्ट्रिल स्टोर) इत्यादि बनाये जायें। विद्युत केन्द्र आदि की स्थापना पूर्व-दक्षिण दिशा के आग्नेय कोण में की जाये तथा इसी दिशा में होटल, रेस्टोरेण्ट को स्थान देना चाहिए। इसी के समीप डेरी आदि का निर्माण, लकड़ी मार्केट, कोल डिपो व गैस वितरण तथा मिल्क-बूथ आदि को स्थान देना चाहिए।
- योजना के उत्तर-पूर्व भाग में देवालय, प्रार्थना-स्थल, तालाब, जलाशय आदि रखे जायें तथा यहाँ फल व सब्जी मार्केट भी बनाये जा सकते हैं।
- सार्वजनिक पुस्तकालय, वाचनालय, समाचार-पत्र-पत्रिकाओं के विक्रय केन्द्र नैर्ऋत्य कोण तथा दक्षिण-पश्चिम दिशा के मध्य निर्माण किये जाने पर शुभकारक होता है एवं लोगों की बौद्धिक क्षमता में वृद्धि होती है।



वास्तु शास्त्र आधुनिक विद्या नहीं

जाने-माने वास्तु शास्त्री और प्रोफेसर पं० विष्णुदत्त शर्मा शास्त्री का कहना है कि वास्तु शास्त्र केवल अंधविश्वास नहीं है बल्कि इसका ठोस वैज्ञानिक आधार हैं। जिस तरह बिना खिड़की और रोशनदान वाला मकान बीमारी का घर बन जाता है, उसी तरह वास्तु शास्त्र के प्रतिकूल बना मकान कई समस्याओं को जन्म देता है। डॉ० शास्त्री का कहना है कि दरअसल, वास्तु शास्त्र कोई नई विद्या नहीं है। यह तो हजारों वर्ष से हमारे देश में थी, लेकिन बाद में लोग इसे भूल गए। यदि पाँच हजार वर्ष बाद भी वास्तु शास्त्र के सूत्रों का सही उपयोग किया जाए तो आधुनिक युग में लोगों की कई समस्याओं का समाधान हो सकता है। उनका कहना है कि इस शास्त्र के वैज्ञानिक आधार हैं, यही कारण है कि पश्चिमी देशों में इस विद्या का भरपूर उपयोग किया जा रहा है। वैसे भारत में हजारों वर्ष पूर्व मन्दिरों के निर्माण में भी इस शास्त्र का उपयोग किया जाता था। उस समय की कई परम्पराएँ अब तक प्रचलित रही हैं।

ज्योतिष और आयुर्वेद के बाद वास्तु शास्त्र ही ऐसी विद्या है, जो वैदिक काल की देन हैं। यह विश्व उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों के बीच बसा हुआ है। इन ध्रुवों के बीच चुम्बकीय-तरंगें प्रवाहित होती रहती हैं। यही तरंगें मानव-जीवन को प्रभावित करती हैं। यदि इन तरंगों के विपरीत दिशा में कोई व्यक्ति सोए, तो उसके मस्तिष्क पर इसका नकारात्मक असर पड़ सकता है। वास्तुशास्त्रियों का मानना है कि तरंगों का उत्तर से दक्षिण की ओर सतत् प्रभाव रहता है इसलिए घरों की बनावट ऐसी होनी चाहिए ताकि ये प्रभाव न गड़बड़ाए।

वास्तुशास्त्रियों का कहना है कि यदि मकान का उत्तर और पूर्वी भाग बंद हो, तो उससे ऊर्जा धाराप्रवाह नहीं बहती।इसी तरह मकान का उत्तर-पूर्वी भाग हमेशा नीचा होना चाहिए ताकि ऊर्जा का प्रवाह न रुके। मकान के चारों कोने 90 डिग्री का कोण बनाएँ तो वह आदर्श मकान हो सकता है। इसी तरह उत्तर-पूर्वी कोना, दक्षिण-पूर्वी कोने से बड़ा होना चाहिए। सड़क समाप्त होने पर बना मकान उसमें रहने वाले व्यक्तियों के स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकता है। जिस मकान के दक्षिणी भाग में गहरा गड्ढा होता है, उस मकान में रहने वाली महिलाओं का स्वास्थ्य गड़बड़ा सकता है। वास्तु शास्त्र का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह है कि व्यक्ति की ऊर्जा लगातार ऊर्जा चार्ज होती रहे ताकि वह परेशानियों से हमेशा दूर रहे'

वास्तु अर्थात् भवन की स्थिति का ब्रह्माण्ड में पृथ्वी की स्थिति से तालमेल है। वास्तु विद्या के प्रति दुनियाभर में आकर्षण बढ़ रहा है। लोग नए सिरे से निर्माण कर रहे हैं या वास्तु-नियमों के अनुसार उनमें सुधार ला रहे हैं। मूलत: यह विद्या भारत की ही है। बौद्ध धर्म का प्रचार करने गए भिक्षुओं के जरिए यह चीन गई। मध्यकाल के अंधकार युग में जिस तरह तमाम विद्याएँ लुप्त हुईं, वास्तु का भी लोप हुआ। चीन के लोगों ने इस विद्या से लाभ उठाया। वहाँ फेंग सुई के नाम से यह जीवंत रही।

डॉ० शास्त्री के अनुसार लालकिले का मुख्यद्वार यदि पूर्व की ओर खुलता तो बहुत संभव है कि उसका इतिहास कुछ अलग ही होता। उसकी प्राचीर और परिसर में इतना रक्त नहीं बहता, इतने उतार-चढ़ाव नहीं आते। लालकिले के समय में ही बनी जामा मस्जिद की मिसाल भी देखें। मस्जिद का मुख्यद्वार पूर्व दिशा में है। भवन के और हिस्सों में भी वास्तु के नियमों का ध्यान रखा गया है। मस्जिद बनने के बाद शान से खड़ी है। उससे जुड़े परिवार भी खुशहाल और समर्थ हैं। समाज में उनकी अच्छी स्थिति है।

वास्तु शास्त्र तथा वास्तुविद्या कुल मिलाकर प्रकृति से सामंजस्य बनाकर रहने की कला है। प्राणऊर्जा की चुम्बकीय धाराएँ उत्तर से दक्षिण की ओर बहती हैं और कितने ही प्रमाण दिए जा सकते हैं जिनसे साबित होता है कि इन धाराओं में सामंजस्य बनाकर सुखी समुन्नत जीवन जिया जा सकता है, वरना ऐसा भी होता है कि समस्याएँ ज्यों की त्यों बनी रहती हैं। तमाम कोशिशें कर लेने पर भी गुत्थी नहीं सुलझती। दुबई का मामला है। अलमुजा प्लाजा सेंटर में अशोक कुरुणात्रे रहते हैं। वहीं बस गए हैं। पत्नी अरसे से बीमार थी। कोई निदान नहीं हो रहा था। दुनियाभर का इलाज कर लिया कोई फायदा नहीं हुआ। उनका निवास देखा और वास्तु के हिसाब से कुछ सुधार करने की सलाह दी। करुणात्रे ने वह किया और लिखा कि पत्नी की दशा में काफी सुधार है। अमेरिका में सिएटल शहर का एक मामला है। वहाँ भी गृहिणी बीमार ही रहती थी। मेजबान डॉक्टर ने कितने ही जटिल रोग ठीक किए होंगे, लेकिन घर में कोई कामयाबी नहीं मिल रही थी। वास्तुविद् डॉ० विष्णुदत्त शर्मा शास्त्री ने अपनी विद्या के हिसाब से देखा और पाया कि मकान के दक्षिण-पूर्व में स्वीमिंग पूल था। उससे घर का चुम्बकीय संतुलन गड़बड़ा रहा था। सुधारने की सलाह दी। उस पर अमल किया तो कुछ ही दिनों में गृहिणी की स्थिति में आश्चर्यजनक सुधार होने लगा।

गृहिणी ही नहीं वास्तु के नियम घर में रहने वाले सभी लोगों के स्वास्थ्य, मानसिक शान्ति और व्यवहार को प्रभावित करते हैं। डॉ० शास्त्री कहते हैं, अंधविश्वास कतई नहीं है। कुछ सावधानियों की सलाह तो विद्वान् भी देते हैं जैसे दक्षिण दिशा में पैर करके नहीं सोना चाहिए। सोते समय दक्षिण या पूर्व में हो तो अच्छा है। घर का दरवाजा पूर्व, उत्तर या उत्तर-पूर्व दिशा में हो। पश्चिम या दक्षिण में मुख्यद्वार उस जगह रहने वाले लोगों को अशान्त और असंतुलित करते हैं। वास्तु शास्त्र बेडरूम, बाथरूम, किचन, बैठक और पूजागृह की स्थिति पर भी

मार्गदर्शन करता है। भारत से ज्यादा अमेरिका और यूरोपीय देशों में इस विषय पर ज्यादा काम हो रहा है। हमारे यहाँ अथर्ववेद में वास्तु को समझने के महत्वपूर्ण सूत्र उपलब्ध हैं।

इन ठोस तर्कों के कारण ही विदेशों में वास्तु शास्त्र लोकप्रिय है। कोरिया और चीन में तो यह फेंग सुई के नाम से काफी समय से प्रचलित है। इन देशों में तो हालत यह है कि वित्तीय संस्थाएँ, उन औद्योगिक इकाइयों या परियोजना को ऋण ही नहीं देतीं, जिनकी इमारतों के नक्शे को किसी वास्तु शास्त्री ने अपनी स्वीकृति न दी हो। वहाँ तो कमरों में फर्नीचर भी वास्तुशास्त्रियों की सलाह लेकर ही रखा जाता है। विदेशों की देखा-देखी भारत में आधुनिक विचारों वाले लोग भी अब वास्तु शास्त्र को स्वीकार करने लगे हैं।





एक आधुनिक घर की चाह

दरअसल आज एक आधुनिक और सुन्दर घर का सपना शायद हम सभी देखते हैं। सुसज्जित और आरामदायक घर में रहने की चाह किसे न होगी। आज तो महानगर की बढ़ती आबादी का एक बड़ा हिस्सा पूर्वनिर्मित फ्लैटों में रहता है। जगह की कमी को देखते हुए बहुमंजिली इमारतें ही जहाँ एकमात्र उपाय है वहीं इन फ्लैटों में आधुनिक जीवन की परिभाषा बिल्कुल अलग है। छोटे दिखने वाले फ्लैटों की भी जरा-सी परिभाषा बिल्कुल अलग है। छोटे दिखने वाले फ्लैटों को भी जरा-सी कोशिश और आधुनिक रुचियों और जरूरतों के अनुरूप ढाला जा सकता है। आधुनिक घर का मतलब सिर्फ फर्नीचर या सजावटी सामान से घर को सजाना नहीं है। इसका सही अर्थ है चीजों का इस तरह चुनाव और सजावट कि वे आपके घर का एक भाग लगें और साथ ही परिवार के सदस्यों की जरूरतों को भी पूरा करें। घर सिर्फ मकान नहीं है बल्कि उसमें रहने वाले हर सदस्य के व्यक्तित्व का झरोखा भी है। घर देखकर परिवार के बारे में बहुत कुछ बताया जा सकता है। इसमें से हर कोई अपने घर को सुन्दर बनाने के लिए लगातार प्रयास करता रहता है। कभी परदे बदलकर, कभी पेंट कराकर, कभी सजावटी सामान लाकर और कभी फर्नीचर व्यवस्था में फेरबदल करके।

पर एक व्यावसायिक आधुनिककार और आम आदमी द्वारा सजाए घर में काफी फर्क रहता है। बात सिर्फ महँगी चीजों की नहीं बल्कि आधुनिक होने के नियमों की है। अन्य चीजों की तरह, आधुनिक की शुरूआत भी योजना से होती है। सबसे पहले निर्धारित कीजिए कि आप अपने घर को कैसा देखना चाहते हैं—पारम्परिक, आधुनिक, आरामदायक या भव्य। फिर बारी है रंगों के चुनाव की। एक कमरे के लिए जो मुख्य रंग चुना गया है फिर उसे न बदलें। एक नीला लैंप शेड बहुत सुन्दर हो सकता है, पर यदि वह आपकी प्रमुखता लिए योजना से मेल नहीं खाता तो सारी मेहनत बेकार जाएगी।

इसी तरह यदि परम्परागत तरीके से सजे घर में महंगा शो-पीस रख दिया जाए तो बात नहीं बनेगी। अपने कपड़ों और उनसे मेल खाती चीजों के प्रति हम कितने सजग रहते हैं। बस, इतना ही ध्यान हमें घर और चीजों पर देना है। फर्क सिर्फ इतना है कि कपड़े हम रोज बदल सकते हैं पर परदे और कालीन नहीं। इसलिए शुरू में ही ज्यादा ध्यान देना पड़ेगा।

कोई भी सुन्दर वस्तु तुरन्त खरीदने की बजाय यह परखें कि वह आपके घर की चीजों से मेल खाएगी या नहीं। यदि आप थोड़ी-सी सूझबूझ से आधुनिक नियमों को प्रयोग में लाएँ तो घर की सुन्दरता को आप और अधिक उभार सकते हैं और ऐसी चीजों को ढक सकते हैं जो आपकी पसंद नहीं। रहने वालों की पसंद-नापसंद तो बदलती रहती है पर घर नहीं बदला जा सकता।

जगह की कमी शायद हम सभी को अखरती है; पर जितनी जगह है, उसी का पूरा उपयोग किया जाए तो यह समस्या काफी हद तक सफल हो सकती है। छोटे कमरों में भारी फर्नीचर कभी न रखें। छोटे कमरों के लिए हल्का और लम्बी टाँगों वाले सोफे-कुर्सियाँ अधिक उपयुक्त रहते हैं और ऐसी जगह में फर्नीचर दीवार से सटाकर रखें जिससे फर्श का अधिकतम हिस्सा दिखता रहे। छोटे कमरे में फर्श पर यदि आप कुछ बिछाना चाहते हैं जैसे विनायल फ्लोरिंग, टाइल आदि तो हल्के रंग में छोटे-छोटे डिजाइन ही पसंद करें।

अब रंगों की बात लेते हैं। रंगों के सही इस्तेमाल से भी किसी जगह को छोटा-बड़ा किया जा सकता है।

छोटे कमरों के लिए एक ही मुख्य रंग चुना जाए तो वह बड़ा लगेगा। दीवारों के रंग से मेल खाते परदे, उन्हीं जैसे सोफे और कालीन आदि कमरों को एकसारता प्रदान करते हैं।





आन्तरिक एवं बाह्य साज-सज्जा

उनके घर की तारीफ आजकल सब कर रहे हैं, इसलिए नहीं कि उनका घर बहुत बड़ा और वैभवपूर्ण है। उनके पास एक सामान्य मध्यवर्गीय तीन कमरों का मकान है, अलबत्ता प्रशंसा का केन्द्र उनके घर की साज-सज्जा है, जिसमें उनका सौन्दर्यबोध और कलात्मक अभिरुचि झलकती है। दरअसल प्रकृति में केवल मनुष्य को सौन्दर्यबोध का वरदान मिला है। सिर्फ उसके पास ही यह क्षमता है कि वह सौन्दर्य के सूक्ष्म भाव को अपने स्थूल कार्यों में प्रस्तुत कर सकता है। शास्त्र बताते हैं कि इसी सौन्दर्यबोध का विस्तार ललित कलायें आज भी हैं; पर अब कुछ कलायें व्यक्तिगत क्षमता से निकलकर एक भरे-पूरे उद्योग के रूप में बदल रही हैं। इनमें से एक कला है सजावट की, जिसे अब इंटीरियर डेकोरेशन के नाम से जाना जाता है। सजावट करना अब एक कलात्मक पेशा है और इसके उपादानों का निर्माण करना एक उद्योग। यह कला अब घर की अभिरुचि के दायरे से निकल कर बड़े भवनों और कार्यालयों की सजावट के स्तर तक पहुँच गई है।

सजावट तो लोग पहले भी करते थे, सौन्दर्यबोध प्राचीन काल से व्यक्ति को एक बेहतर और सुरुचिपूर्ण परिवेश में रहने को प्रेरित करता रहा है। हाल के वर्षों में जरूरतों के मुताबिक यह कला एक पेशा बनती गई और खालिस घरेलू स्तर पर प्रयोग के जरिये बनने वाले सजावटी उत्पादन अब उद्योग बन गए। किस तरह से घरों और कार्यालयों की सजावट में नई क्रांति आ रही है और सुविधा को ध्यान में रखकर किस तरह से विभिन्न माध्यमों में प्रयोग हो रहे हैं इसकी एक झलक मिली आयोजित एक बड़ी प्रदर्शनी में। देश की एक प्रमुख डिजाइन पत्रिका 'इनसाइड आउटसाइड' द्वारा प्रायोजित और 'बिजनेस इण्डिया एक्जीबीशंस' द्वारा आयोजित इस प्रदर्शनी ने कलात्मक अभिरुचि के उद्योग बनने की जानकारी दी और साथ ही इसका भी संकेत दिया कि किस तरह इस उद्योग में भारतीय कला संस्कारों और पश्चिमी सुविधावादी दृष्टिकोण का समन्वय हो रहा है। प्रदर्शनी में आन्तरिक और बाह्य सज्जा व भवन-निर्माण सामग्रियों से जुड़ी करीब 400 छोटी-बड़ी कम्पनियाँ शामिल थीं।

देश में ज्यादातर मकान अभी भी उन्हीं पारम्परिक निर्माण सामग्रियों से बनते हैं, पर जो बदलाव आया है वह मकान की साज-सज्जा के ढंग में। दीवारों पर रंग से लेकर, कालीन, फर्नीचर, सजावटी सामान, रसोई, स्नानगृह तक अब एक

योजनाबद्ध ढंग से विभिन्न रुचियों के मुताबिक सजाए जाने लगे हैं और लोग तलाशने लगे हैं कि कैसे इनमें कलात्मक प्रयोग किये जा सकें।

घरों और दफ्तरों की आन्तरिक और बाह्य सज्जा का यह उद्योग अभी देश में अपना पूरा आकार ले रहा है, पर इसके हिस्से तेजी से विकसित हुए हैं, जिसकी वजह उनका विशिष्ट स्वभाव और उत्पादों की माँग है। फर्नीचर उद्योग, सेरेमिक टायल उद्योग, सैनेटरीवेयर उद्योग और बाथरूम फिटिंग जैसे पुराने उद्योग इस व्यापक दायरे में फैले कि आन्तरिक-बाह्य सज्जा उद्योग के हिस्से बन गए हैं। जानकार कहते हैं कि आंतरिक-बाह्य सज्जा उद्योग का आकार और बाजार अंदाज पाना खासा मुश्किल है; पर इसके हिस्से के तौर पर विकसित उद्योगों को यदि आधार माना जाए तो इनका ही बाजार करीब 1600 से 1700 करोड़ रुपये का है। घरों की सजावट में अभी बड़े पैमाने पर हस्तनिर्मित उत्पादनों का प्रचलन है। वस्तुत: कला अभी मानवीय हाथों से निकलकर मशीन तक नहीं पहुँची है; इसलिए हस्तशिल्प क्षेत्र में बनने वाले सामानों का बाजार आँक पाना कठिन है फिर भी आंतरिक और बाह्य सज्जा का उद्योग अब करीब 2500 करोड़ रुपये के आस-पास तो पहुँच ही गया है।

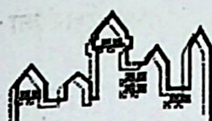
आन्तरिक सज्जा के एक विशेषज्ञ का कहना है कि भारत में आन्तरिक सज्जा के दो पहलू हैं, एक पहलू सुविधा का है कि सही ढंग के उत्पादनों का प्रयोग किया जाए। इस पक्ष पर पश्चिम के मॉडलों का प्रयोग बढ़ रहा है जैसे सिस्टम और मॉड्यूलर फर्नीचर, सुविधाजनक घरेलू उपकरण आदि और दूसरा पक्ष कला का है जहाँ अभी भी पारम्परिक भारतीय कला पद्धतियाँ और अभी हस्तशिल्प के ढंग अपनी जगह बनाये हुए हैं। उद्योग के लिहाज से आन्तरिक सज्जा में फर्नीचर उद्योग से यह पूरी तरह भिन्न है। इसमें फाइबर प्लास्टिक का प्रयोग किया जाता है। देश में पहला मॉड्यूलर फर्नीचर बनाने वाली एक कम्पनी के निदेशक कहते हैं कि फर्नीचर का प्रचलन तात्कालिक जरूरतों, लकड़ी समस्या और समय की कमी के चलते शुरू हुआ; पर आज कम्पनियों के कार्यालयों में यह खासा लोकप्रिय हो रहा है। इसकी वजह यह है कि इसे किसी भी जगह की जरूरत के हिसाब से सेट किया जा सकता है और हल्का होने के कारण इसे लाने-ले जाने की समस्या नहीं। यदि किसी को स्थान बदलना है तो वह इसे खोलकर पुन: दूसरे ढंग से स्थापित कर सकता है। यह फर्नीचर विदेशों में काफी प्रचलित है, क्योंकि लकड़ी का प्रयोगं वहाँ लगभग नगण्य है। भारत में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आने से इसे काफी बाजार मिला है। सिस्टम फर्नीचर का बाजार सालाना करीब 35 फीसदी की दर से बढ़ रहा है।

यह फर्नीचर अभी केवल कार्यालयों के प्रयोग तक ही सीमित है। घरों के लिए इसका बाजार अभी विकसित नहीं हुआ है। यदि कुल फर्नीचर बाजार को देखा जाए तो अभी लकड़ी और अन्य पारम्परिक साधनों से बनने वाले फर्नीचर का हिस्सा 95 फीसदी है। केवल 5 फीसदी हिस्सा इस तरह के फर्नीचर का है। बड़े

पैमाने पर न सही पर छोटे स्तर पर घरों में भी बने बनाये मॉड्यूलर फर्नीचर का प्रयोग शुरू हो रहा है। यह खालिस पश्चिमी देशों की तर्ज पर है।

पिछले दिनों फर्नीचर निर्माण करने वाली एक कम्पनी ने एक नये बनाये रसोईघर को प्रदर्शित किया था। यह रसोईघर जगह के हिसाब से स्थापित किया जा सकता है। खासतौर पर उन घरों में जहाँ रसोईघर नहीं है, उनके लिए यह विशेष उपयोगी है। इसमें एक साथ बर्तन धोने का सिंक, बर्तन और अन्य सामान रखने की जगह है और जुड़ी हुई फ्रिज उपलब्ध है। इसे खोलकर कहीं भी स्थापित किया जा सकता है। इस नए प्रचलन के साथ एक बात सबने स्वीकार की कि अभी देश में इस तरह फर्नीचर के लिए जरूरी गुणवत्ता मानकों का विकास होना है। फिर भी आन्तरिक और बांह्य सज्जा का जो स्वरूप अब उभर रहा है वह इस बात की गवाही देता है कि घरों व कार्यस्थलों को सुरुचिपूर्ण बनाने के क्षेत्र में एक नया दौर शुरू हो रहा है।





गृह-सज्जा के विविध रूप

वर्तमान समय में रहन-सहन के तरीके और गृह-सज्जा पर अधिक जोर दिया जा रहा है। तरतीब से सजा आपका घर आपके व्यक्तित्व में चार चाँद लगाता है। यह आपके सभ्य और शिक्षित होने का प्रमाण है। आम आदमी इस रहस्य को समझ चुका है। यही कारण है कि धनाढ्य वर्ग में भी इस ओर अब जागरूकता उपजी है। खासतौर पर ड्राइंगरूम और लिविंगरूम को सजाने का एक फैशन-सा चल निकला है। यही कारण है कि इंटीरियर डिजायनर्स की एक पूरी टीम उभर आयी है और खप भी रही है। इनकी दखलंदाजी न केवल घरों तक है, बल्कि स्कूल, उद्यान, औद्योगिक परिसरों में भी ये लोग अपना प्रभाव रखते हैं। ये प्रशिक्षित डिजाइनर्स होते हैं जो गृह-सज्जा का कार्य करते हैं। एक-एक वस्तु इनकी देख- रेख में सजायी जाती है। यह इनके सृजनात्मक सोच और कल्पना का परिचायक है।

खूबसूरत घर सभी का सपना होता है और वास्तु ने इस रहस्य को समझा है। वास्तु शास्त्र हमें उन नियमों से परिचित कराता है, जिनसे वास्तुशास्त्रानुसार गृह सज्जा संभव है।

वृक्ष और पौधे :

पर्यावरण की जागरूकता के चलते और पौधों की अप्रतिम सुन्दरता और खुशबू ने प्रत्येक घरों में पौधों और वृक्षों से गृह-सज्जा अनिवार्य बना दी है। निश्चित रूप से बाहरी गृह-सज्जा के लिए पेड़-पौधे अहम भूमिका निभाते हैं। भारतीय समाज में वृक्षों और पौधों का बहुत ही महत्व है और उनका वैज्ञानिक ढंग से वर्णन किया जाता है और प्रतिवर्ष सैकड़ों रुपये खर्च करके इनका वैदिक रीति से विवाह सम्पन्न होता है। यद्यपि यह बात पढ़ने में बहुत ही अटपटी लगती है, लेकिन यह एक पूर्ण सत्य है। देवताओं की पूजा में तुलसी की पत्तियों का अलग ही महत्व है। बिना तुलसी के देवपूजा का कार्यक्रम अधूरा रहता है। यही कारण है कि मंदिरों और धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों के परिसरों में तुलसी का होना अवश्यम्भावी है। तुलसी के पौधे को घर के ब्रह्म स्थान में रोपा जाता है। वैसे खूशबू और प्रभावशीलता के चलते यह गृह-सज्जा में भी अहम है। यदि इसे घर के मध्य में लगाया जाना सम्भव न हो तो इसे ईशान कोण में लगाया जाना चाहिए।

पीपल के वृक्ष को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं है। यह तुलसी जितना ही महत्वपूर्ण और पूज्य है। लेकिन चूँकि इसकी जड़ें बहुत दूर तक फैलती हैं और

इसे काटना निषिद्ध है, इसलिए इसे घर के अन्दर नहीं लगाया जाना चाहिए। भूखण्ड की कुल लम्बाई से दुगुने दूर ईशान कोण में स्थित पीपल उन्नतिकारक है।

छोटे पौधों को उत्तर-पूर्व में बहुत ही करीने से लगाना चाहिए। यदि उत्तर-पूर्व में स्थान का अभाव हो तो इन्हें कहीं भी लगाया जा सकता है, लेकिन बड़े वृक्षों को ईशान में नही लगाना चाहिए। इन्हें नैर्ऋत्य कोण में लगायें। अपने निजी उद्यान में आप यदि कुर्सियाँ रखते हैं तो उन्हें भी नैर्ऋत्य के किसी स्थान पर रखें। छोटे पौधों के गमलों को वायव्य की तरफ रखा जा सकता है। इन्हें एक ही रंग से पोतना चाहिए। उद्यान में आप भूमिगत टैंक बनवाना चाहते हैं तो उसी स्थिति में बनवाएँ कि आपका उद्यान ईशान में स्थित हो। यदि ऐसा नहीं है तो पानी का टैंक भूमि से कुछ फीट ऊपर रखें। भूखण्ड के नैर्ऋत्य कोण में उद्यान नहीं बनाना चाहिए। मुख्य द्वार के समीप इस प्रकार के पौधे रखने चाहिएँ जो कँटीले नहीं हों। उत्कृष्ट गमलों में ही पौधे लगायें। टूटे-फूटे और छोटे-बड़े गमले आपकी सृजनात्मक क्षमता के प्रभाव को गौण करते हैं।

आन्तरिक सज्जा :

उत्तर और पूर्व की तरफ जो खिड़कियाँ हों उनमें सजीव पौधे रखे जा सकते हैं। वायव्य-पश्चिम की खिड़कियों में भी प्राकृतिक फूलों के पौधे रख सकते हैं। लेकिन दक्षिण की खिड़कियों में प्लास्टिक या शुष्क विधि से सुखाए गये फूलों के गुलदस्ते रखें। पूर्व-उत्तर और पश्चिम में रखे पौधों को प्राकृतिक प्रकाश मिलने से ये अधिक समय तक टिके रहते हैं। दक्षिण की सुन्दरता को बनाए रखने के लिए शुष्क विधि से सजीव फूलों को सुखा लेने से ये बहुत ही आकर्षक लगते हैं। सामान्यता ऐसा प्रतीत होता है, जैसे ये सजीव हों।

शुष्क विधि से सुखाए गये पौधों या फूलों को यदि किसी प्रकार की मानवीय या प्राकृतिक क्षति न पहुँचे तो ये काफी समय तक अपने सौन्दर्य को टिका सकते हैं। हालांकि इनमें प्राकृतिक खुशबू नहीं होती, लेकिन देशी इत्र आदि से इस कमी को पूरा किया जा सकता है। फूलों को सुखाने के लिए निम्न उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है—

(1) इच्छित फूलों की डाली, डंडी सहित फूल या छोटा पौधा।

(2) एक लकड़ी, प्लास्टिक या टिन का डिब्बा जो उतना बड़ा हो कि आपके इच्छित फूल उसमें समा सकें।

(3) रेगिस्तान की बालू (रेत) या अत्यन्त महीन पीसी गयी मिट्टी जो कपड़े से छान ली गई हो।

अपनी मनपसंद ताजा फूलों की डाली को डिब्बे में इस प्रकार स्थिर कर दें कि उसकी कोई भी पत्ती या फूल अपने आकार से विकृत न हों। फिर उसमें महीन बालू को बहुत ही सावधानी से धीरे-धीरे डालें। यह प्रक्रिया बहुत ही धीरे करें। बालू को कभी भी इस प्रकार न डालें कि वह फूलों या पत्तियों को क्षति पहुँचा दे। डिब्बे के पूरा भरने पर इसे छाया में पन्द्रह दिन तक रखा रहने दें। तदुपरान्त इसकी

बालू (मिट्टी) को धीरे-धीरे निकाल लें। अन्दर जो फूलों की डाली है इसके प्राकृतिक रंग अब स्थायी हो चुके हैं। इन्हें गमले में समूह के रूप में लगाकर एक अत्यन्त लुभावने गुलदस्ते या पौधे का रूप दिया जा सकता है।

कृत्रिम वस्तुओं से गृह-सज्जा :

टेलीविजन और टेलीफोन की टेबिल पर कभी भी प्राकृतिक सजीव पौधे न रखें। स्थायी रूप से फर्श पर दरी या कालीन न बिछायें। मुख्य चाय-टेबिल के नीचे उसके आकार से कुछ बड़ा कालीन स्थायी रूप से रखा जा सकता है। मेहमानों के बैठने के लिये वायव्य की तरफ सोफे लगायें।

साज-सज्जा में प्रयुक्त वस्तुओं में जो वस्तु गतिशील हो या जिनमें पानी का उपयोग होता हो, उन्हें वायव्य में रखें। वे वस्तुएँ जो सफेद रंग की हों उन्हें अग्नि कोण की तरफ सजाएँ। नीले रंग और जानवर की आकृति की वस्तुओं को नैर्ऋत्य कोण में स्थान दें। यदि आप पुस्तकों को भी सजावट की वस्तु मानते हैं तो उन्हें ईशान में रखें। चमकीली और सजीव वस्तुओं को मध्य पूर्व में रखें। वे वस्तुएँ जो भारी और स्थायी हैं, उन्हें मध्य पश्चिम में रखें।

गृह-सज्जा में अपनी कल्पनाशीलता का अधिकतम उपयोग करें।





अनंत है वास्तु में ज्योतिष की सम्भावना

जिस प्रकार एक अच्छे हस्तरेखा विशेषज्ञ को ज्योतिष का पर्याप्त ज्ञान होना आवश्यक है, उसी प्रकार वास्तु के विद्यार्थी को भी ज्योतिष के ज्ञान से अवगत होना चाहिए, क्योंकि निगूढ़ विद्याओं का मूल ज्योतिष है और विद्वानों के अनुसार पाँचवें वेद का स्थान ज्योतिष के लिए आरक्षित है। वास्तु में ज्योतिष के समावेश के द्वारा हम परिसर में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति की अलग-अलग स्थिति का आँकलन कर सकते हैं, चाहे वे सब एक ही स्थान विशेष में रह रहे हों। एक परिसर में ग्रहों के प्रभाव के चलते उसके नौ भाग हो जाते हैं और प्रत्येक भाग में रहने वाला अलग-अलग ग्रहों से प्रभावित होता है, अत: उसके स्वास्थ्य और विचारधारा में भी उस ग्रह या ग्रहों के प्रभाव को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। वास्तु में सर्वतोमुखी विकास के लिए वास्तु के विद्यार्थी को ज्योतिष का प्रारम्भिक ज्ञान तो कम से कम अवश्य ही होना चाहिए।

परिसर के समग्र अध्ययन के लिए ज्योतिष का उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है, यह जान लेना समीचीन होगा। भारतीय ज्योतिष में नवग्रह हैं। सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु। हालांकि यूरेनस, नेपच्यून और प्लूटो एक नयी खोज है और कम्प्यूटर से बनने वाली जन्मकुण्डली में ये ग्रह समाहित रहते हैं। लेकिन आम जीवन में इनका विशेष महत्व स्पष्ट नहीं हो पाया है, साथ ही ये पृथ्वी से इतने अधिक दूर हैं कि इनका मनुष्य पर असर पड़ता भी है कि नहीं, यह एक शोध का विषय है।

परिसर में नवग्रह स्थापना दो तरह से की जाती है—एक नैसर्गिक और दूसरी तात्कालिक। नैसर्गिक के मापदण्ड पूर्व निर्धारित हैं। प्रत्येक भूखण्ड में स्वत: ही नैसर्गिक ग्रहों का आधिपत्य रहता है। ज्योतिष में प्रत्येक ग्रह की अपनी दिशा होती है। प्रत्येक ग्रह के अलग-अलग दिशा में स्थित होने से उसकी प्रभावशीलता दिशा विशेष को प्रभावित करती है, क्योंकि ग्रह उस दिशा का नैसर्गिक स्वामी है। जो तीन सारिणियाँ दी गई हैं उन्हें समझने से भवन में भली-भाँति प्रकार ग्रहों और राशियों की दिशा को समझा जा सकता है। तात्कालिक रूप से ग्रहों के स्थान भवन के निर्माण के अनुसार बदलते रहते हैं। अनुभव में तात्कालिक ग्रहों के अधिक क्रियाशील होने के प्रमाण दृष्टिगोचर हुए हैं। ग्रहों की प्रकृति और तात्कालिक उपस्थिति के लिए उन्हें समझना अधिक श्रेयस्कर रहेगा।

वायव्य	उत्तर	ईशान
धनु ♐	मकर ♑ कुंभ ♒	मीन ♓
तुला ♎ वृश्चिक ♏		मेष ♈ वृषभ ♉
कन्या ♍	कर्क ♋ सिंह ♌	मिथुन ♊
नैर्ऋत्य	दक्षिण	अग्नि

पश्चिम (बाएँ) — पूर्व (दाएँ)

भूखण्ड में राशि का स्थान

सूर्य : मूल रूप से पापग्रह सूर्य को पूर्व का स्वामी माना गया है। इसका शरीर आयताकार है। आँखें लाल तथा मन्दिर और पिता का कारक है। नैसर्गिक रूप से हालांकि यह पूर्व दिशा का अधिष्ठाता है, लेकिन तात्कालिक रूप में इसे परिसर के उस स्थान का अधिकारी माना गया है, जहाँ सर्वाधिक धूप आती है और जहाँ गृह का स्वामी निवास करता है। इसकी राशि सिंह का स्थान दक्षिण दिशा है, जो इसके पापी होने का द्योतक है।

चन्द्रमा : गोरे रंग और सुन्दर नेत्र का स्वामी चन्द्रमा स्थूल शरीर का होता है। यह पश्चिमोत्तर दिशा का स्वामी है और जलीय ग्रह है। संतुलित चरित्र के इस शुभ ग्रह को ज्योतिष में मांता का कारक माना गया है। वास्तु में नैसर्गिक रूप से

यह वायव्य का स्वामी है और तात्कालिक दृष्टि से विशेष रूप से भूमिगत जल संग्रह पर इसका अधिकार होता है।

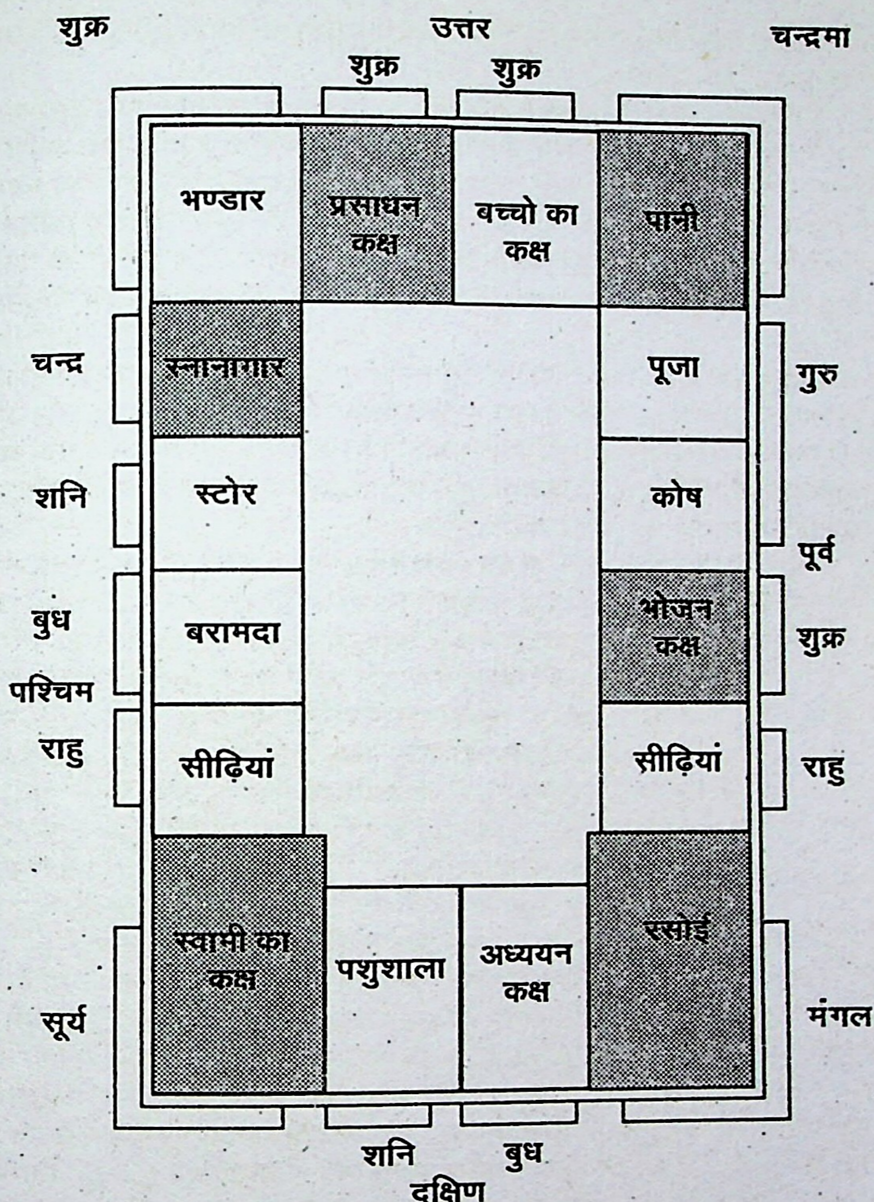
मंगल : अनुशासन मंगल का पर्याय है। मूल रूप से दक्षिणी दिशा का स्वामी होने से इसे पापी ग्रह माना गया है। यह अग्नि का कारक है, अत: इसे तात्कालिक रूप से रसोई का स्वामी मानते हैं। मंगल एक विघटनकारी ग्रह है, इसलिए किसी भी परिसर में रसोई के बहुत नजदीक पूजास्थान को नहीं रखना चाहिए। ज्योतिष में यह मेष और वृश्चिक राशि का स्वामी है तथा वृश्चिक राशि को विध्वंसक राशि की संज्ञा प्राप्त है। रसोई को अग्नि कोण में बना देने से इसके सभी अवगुण निष्प्रभाव हो जाते हैं।

बुध : पृथ्वी तत्व का ग्रह बुध नपुंसक है। हरे रंग और उत्तर दिशा का स्वामी है। परिसर की बैठक (ड्राइंगरूम), जहाँ गणित सम्बंधी कार्य होते हों और अधि-कतर बच्चे रहते हों, ये स्थान बुध के अधीन है। यदि बच्चों के कमरे के एक ओर रसोई है और दूसरी ओर भी किसी पापी ग्रह का अधिकार है तो बच्चों की शिक्षा में निरंतर बाधा का सामना करना होता है।

बृहस्पति : सुनहरे रंग का ओजस्वी बृहस्पति देवताओं का गुरु है। यह जहाँ लक्ष्मी (धन) का कारक है, वहीं सरस्वती (ज्ञान) पर भी इसका अधिकार होता है। बृहस्पति ईशान कोण का स्वामी है और आकाश तत्व का है। गुरु प्रभावी परिसर या व्यक्ति धर्मरत एवं महत्वाकांक्षी होता है। गुरु-प्रधान व्यक्ति अपने क्षेत्र में अवश्य उन्नति की ओर अग्रसर होता है। पूजास्थान में इसका अधिकार सिद्ध है। नैसर्गिक रूप में उत्तर-पूर्व का स्थान है। तात्कालिक मायनों में जिस स्थान पर परिसर की पूजा होती है, वह स्थान गुरु के लिए है। जिन परिसरों में ईशान कोण (उत्तर-पूर्व) में बहुत भारी निर्माण कार्य हुआ हो या उस स्थान पर शौचालय आदि बना दिया गया हो तो उनके स्वामी बृहस्पति के दोष से ग्रसित रहते हैं। इस प्रकार के भवनों में रहने वाले लोग ज्ञानार्जन के प्रति उदासीन रहते हैं। ऐसे परिसर में रहने वाले सदा ही सरकार द्वारा दण्डित किए जाते हैं और अक्सर यह दण्ड आर्थिक होता है।

शुक्र : स्थूल शरीर और गेहुँआ रंग, यह शुक्र के प्रभाव के चलते आते हैं। यह असुरों का गुरु है। देवताओं में जो स्थान बृहस्पति को प्राप्त है, वही असुरों में शुक्र को है। यह स्त्रीगृह और दक्षिणी पूर्व का स्वामी है। शनि से इसकी मित्रता जगजाहिर है। सौन्दर्य और लावण्य का यह प्रधान कारक है। जो लोग शुक्र से प्रभावित होते हैं, उनका व्यक्तित्व बहुत ही आकर्षक होता है। हालांकि गुरु के आकर्षण की तरह इनमें वास्तविकता नहीं होती, लेकिन इनमें सौन्दर्य बोध का बाहुल्य होता है। यह सांसारिक सुख का कारक है। नैसर्गिक रूप से जहाँ शुक्र अग्नि कोण का स्वामी है, वहीं तात्कालिक रूप से स्त्रियाँ जहां शृंगार आदि की व्यवस्था रखती हैं, वहाँ तात्कालिक शुक्र की उपस्थिति रहती है। भवन के जिस भाग में सुगन्धित पदार्थों की बहुलता रहती है, वहाँ भी शुक्र का अधिकार रहता है।

शनि : दुबले-पतले शरीर और गहरे काले रंग के वर्ण के शनि का अधिकार



आवास में तत्कालीन ग्रह स्थापना

पश्चिमी दिशा में रहता है। यह वायु तत्व और नपुंसक ग्रह है। शारीरिक दृष्टि से यह लंगड़ा है और सुस्त रहता है। विलम्ब का यह कारक है। जहाँ भी इसकी उपस्थिति रहती है, उस स्थान को यह बहुत अधिक विलम्ब के साथ उन्नति देता है। जन्मकुण्डली

में जहाँ शनि पड़ जाता है, उस भाव को शुभ फलों की प्राप्ति अत्यन्त देरी से मिलती है। यह आयु के 36वें वर्ष के उपरान्त अपने प्रभाव को कम करता है।

यदि परिसर सम्पूर्ण रूप से वास्तु सम्पन्न होने पर भी पर्याप्त रूप से विकसित नहीं हो पा रहा हो और साथ ही किसी प्रकार का कारण भी पकड़ में न आता हो तो उन्नति में बाधक ग्रह को पकड़ना आवश्यक होता है। इसके लिए घर या परिसर के स्वामी से कुछ पंक्तियों का सुलेख लिखवाना चाहिए। यदि शनि का प्रभाव है तो व्यक्ति जो सुलेख लिखेगा, उसकी पंक्तियाँ नीचे की ओर जा रही होंगी, यह पतन का रास्ता है। इसके अलावा यदि सुलेख के शब्द एक-दूसरे से सट कर संकीर्णता को व्यक्त करते हों, तब भी यह पतन का ही द्योतक है। अक्षर छोटे हों तो निश्चित रूप से शनि का ही प्रभाव मानना चाहिए। अन्य ग्रहों के सम्बंध में भी यह तरीका अपनाया जा सकता है।

तात्कालिक शनि की उपस्थिति वहाँ अधिक रहती है, जो स्थान या परिसर घर में सर्वाधिक उपेक्षित हो या अलग-अलग हो। घर के नौकर जहाँ स्थायी रूप से निवास करते हैं, वहाँ भी शनि का प्रभाव रहता है, इसलिए मुख्य भवन के द्वार

वायव्य	उत्तर	ईशान
वायु	कुबेर	शिव
पश्चिम — वरुण		इन्द्र — पूर्व
नैर्ऋति	यम	अग्नि
नैर्ऋत्य	दक्षिण	अग्नि

दिशाओं के स्वामी

वायव्य	उत्तर	ईशान
चन्द्रमा	बुध	गुरू
शनि		सूर्य
केतु राहु	मंगल	शुक्र
नैर्ऋत्य	दक्षिण	अग्नि

पश्चिम — पूर्व

नैसर्गिक ग्रह स्थापना

के ठीक सामने कोई वीरान कमरा या नौकर का स्थायी निवास स्थान नहीं रखना चाहिए। परिसर के अन्दर यदि गोदाम बना हो तो उस स्थान पर शनि उपस्थित रहता है। यदि यह स्थान-नैर्ऋत्य कोण (दक्षिण-पश्चिम) में हो तो यह बृहस्पति के शुभ प्रभाव को क्षीण करता है। इसके लिए आवश्यक है कि शनि स्थानों के मुख्य द्वार को कभी भी ईशान के ठीक सामने नहीं होना चाहिए। यदि किसी प्रकार शनि का प्रभाव रहता भी हैं तो इसके निवारण के लिए चाहिए कि ईशान कोण में भूमिगत जल टैंक बना दिया जाए। दो अतीव शुभ ग्रहों के प्रभावे से शनि की प्रतिकूलता लगभग समाप्त हो जाती है।

राहु : दक्षिण दिशा का स्वामी राहु अशुभ ग्रहों की पंक्ति में अग्रणी है। वास्तविकता तो यह है कि नैर्ऋत्य कोण को इसलिए इतना दबाया जाता है क्योंकि उस स्थान पर पापकर्तरी योग का निर्माण होता है। पश्चिमी दिशा का स्वामी शनि है और दक्षिण दिशा का स्वामी राहु। दो पाप ग्रहों के प्रभाव के चलते नैर्ऋत्य कोण अनेक अशुभता लिए होता है। जन्मकुण्डली में जो भाव पापकर्तरी योग में रहता है, उसके विकास कें समस्त मार्ग अवरुद्ध हो जाते हैं। उस भाव के शुभ फल सामान्यतया मिलते ही नहीं, यदि उसका स्वामी बली हो तो भी शुभ फल जीवन के उतरार्द्ध में ही प्राप्त होते हैं।

कृष्ण वर्ण का राहु क्रूर ग्रह है। तात्कालिक रूप से परिसर की सीढ़ियां पर इसका अधिकार रहता है। यदि सीढ़ियों की दक्षिण साइड खुली हो तो इसका प्रभाव विशेष रूप से प्रतिकूल होता है। यदि घर में लम्बी गैलरी बनी हो तो वहां भी राहु का वास होता है। सीढ़ियों की अशुभता को समाप्त करने के लिए चाहिए कि यदि कुल सीढ़ियों में तीन का भाग देने पर यदि दो शेष बचते हों तो शुभ, अन्यथा संशोधित करना चाहिए। यदि यह सम्भव नहीं हो तो राहु की शान्ति के लिए अन्य उपाय पुस्तक में अन्यत्र वर्णित हैं, उसे अपनाना अधिक श्रेयस्कर रहेगा। वैसे यदि सोपान परिसर के दक्षिण में स्थिति हो तो राहु का प्रभाव कुल मिलाकर नष्टप्राय: हो जाता है। राहु की उपस्थिति के ठीक सामने केतु का स्थान है। यह नैर्ऋत्य कोण का स्वामी है।

राशियों की दिशाएँ

क्र.सं	राशि	दिशा	प्रतीक
1.	मेष	पूर्व	♈
2.	वृषभ	पूर्व	♉
3.	मिथुन	अग्नि	♊
4.	कर्क	दक्षिण	♋
5.	सिंह	दक्षिण	♌
6.	कन्या	नैर्ऋत्य	♍
7.	तुला	पश्चिम	♎
8.	वृश्चिक	पश्चिम	♏
9.	धनु	वायव्य	♐
10.	मकर	उत्तर	♑
11.	कुम्भ	उत्तर	♒
12.	मीन	ईशान	♓

नैसर्गिक और तात्कालिक ग्रहों की स्थापना के उपरान्त दोनों स्थितियों का मूल्यांकन करना चाहिए। उन स्थानों का चयन कर लेना चाहिए, जो सर्वाधिक रूप से पाप ग्रहों और शुभ ग्रहों से प्रभावित हों। जिन स्थानों पर अधिक पाप प्रभाव हो, उनके लिए उन ग्रहों की शान्ति का कर्म करना चाहिए। ज्योतिष में इसका पूर्ण विवरण उपलब्ध है। अच्छा तो यह हो कि उन तात्कालिक ग्रहों के कारणों को ही हटा दिया जाए। जैसे कि पूजास्थान के एक तरफ रसोई (मंगल) हो, दूसरी तरफ स्टोर (शनि) हो तो या तो रसोई और स्टोर का स्थान बदल देना चाहिए या फिर पूजास्थान को अन्यत्र ले जाना ही ग्राही होगा। ये उपाय सम्भव न होने पर ही ग्रहों की शान्ति के लिए प्रयास करना चाहिए।





बाथरूम की आवश्यकता

प्राय: देखा गया है कि हम अपने घर में जितना ध्यान ड्राइंगरूम या बेडरूम की साज-सज्जा और साफ-सफाई पर देते हैं, उतना ध्यान अन्य जगह पर नहीं देते। इसका कारण संभवत: यह है कि मेहमानों को ड्राइंगरूम में बैठाया जाता है और निकट के सम्बंधियों को बेडरूम भी दिखाया जा सकता है, लेकिन बाथरूम, जहाँ प्राय: मेहमानों की पहुँच नहीं होती, पूर्णत: उपेक्षित ही रह जाता है। सम्पन्न घरों में जहाँ बाथरूम में तमाम आधुनिक सुख-सुविधाएँ मौजूद हैं, वहाँ भी उचित रख-रखाव के अभाव में बाथरूम एक कबाड़खाना ही नजर आता है।

मध्यमवर्गीय परिवारों में देखा गया है कि बाथरूम का दरवाजा सड़-गल गया होता है, लेकिन उसे ठीक नहीं कराया जाता है। यही नहीं, सांकल और कुंडियाँ भी ठीक से काम नहीं करतीं। दरवाजे में बड़े-बड़े छेद और चौड़ी दरारें स्पष्ट दिखाई देती हैं। दरवाजा न तो ठीक से बंद होता है, न खुलता है, फिर भी जैसे-तैसे काम चलाने का प्रयास किया जाता है। कई बार तो सीलन की वजह से दरवाजों में दीमक लग जाती हैं। बाथरूम की यह उपेक्षा वास्तु शास्त्र की दृष्टि से उचित नहीं है। बाथरूम में कपड़े टाँगने के लिए समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

बाथरूम में छोटी-मोटी दुर्घटनाएँ क्यों होती हैं, इस पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है। दुर्घटना का सबसे बड़ा कारण फिसलन होती है। फिसलन होने के कारण उसका हर समय गीला रहना। साबुन-पानी का निकास यदि उचित न हो, तो काई जमने लगती है। काई पर पैर रखते ही व्यक्ति फिसल जाता है। इसलिए बाथरूम में गीलापन न रहने दें। जब परिवार के सभी लोग स्नान कर लें, तो उसे ठीक से साफ कर उसका पानी निकाल देना चाहिए, ताकि वह सूख जाए। उसे तत्काल साफ कीजिए, कल पर मत छोड़िए।

प्राय: देखा गया है कि बाथरूम में बैठने के लिए जो लकड़ी या प्लास्टिक का पटरा रखा जाता है, वह भी टूटा हुआ या सड़ा हुआ रहता है। कई बार उठते-बैठते समय वह आपके संतुलन को डगमगा देता है। पटरे से बाहर निकली हुई कीलें भी चोट पहुँचा सकती हैं। अत: स्नान हेतु पटरा साबुत एवं सुरक्षित होना चाहिए।

बाथरूम में साबुन सदैव साबुनदानी में ही रखना चाहिए, न कि नीचे फर्श पर। फर्श पर साबुन रखने से आप साबुन की चिकनाई की वजह से फिसलकर गिर सकते हैं।

बाथरूम में पर्याप्त रोशनी होनी चाहिए। प्राय: देखा गया है कि मकान बनवाते समय लोग सारी कंजूसी बाथरूम पर ही करते हैं। वहाँ एक छोटा-सा रोशनदान बनाकर उद्देश्य की पूर्ति का प्रयास किया जाता है, किन्तु यह मत भूलिए कि ड्राइंगरूम से भी ज्यादा रोशनी की आवश्यकता बाथरूम में है, क्योंकि वहाँ आपको ठीक से नहाना, कपड़े धोना एवं कपड़े पहनना होता है। यह भी देखा गया है कि लोग बाथरूम में जीरो वाट का बल्ब या अत्यन्त कम पॉवर वाला बल्ब लगाते हैं, जो कि ठीक नहीं है। पर्याप्त रोशनी न होने की वजह से भी प्राय: दुर्घटनाएँ होती हैं। बेहतर होगा कि बाथरूम में बल्ब की बजाय ट्यूबलाइट लगवाई जाए।

बाथरूम में बिजली के तारों की फिटिंग भी सुव्यवस्थित होनी चाहिए, ताकि करंट का खतरा न रहे।

बाथरूम में पानी के निकास के लिए जो नाली होती है, वह साफ होनी चाहिए, अन्यथा बाथरूम में पानी भरा रहेगा। यह भी ध्यान रखें कि अनावश्यक कचरा बाथरूम में न बहाएँ, अन्यथा बाथरूम की नाली बंद हो जाएगी।

बाथरूम का इस्तेमाल करने के बाद उसे थोड़ी देर खुला रहने दें, ताकि वहाँ की सीलन व बदबू निकल जाए।

हर वर्ष बाथरूम में रंग-रोगन अवश्य कराएँ। यदि बाथरूम में छत से पानी टपकता हो तो उसकी मरम्त कराना भी जरूरी है।

बाथरूम यदि केवल नहाने का है, तो उसका आकार कम-से-कम 5 गुना 5 फीट होना चाहिए। यदि उसमें शौचालय भी हो तो उसका आकार 8 गुना 8 फीट कम-से-कम होना चाहिए। बाथरूम में जितनी अधिक सुविधाएँ जुटानी हों, उसी हिसाब से उसका आकार बड़ा होता जाएगा। जैसे टब लगाना हो तो उसके लिए अधिक जगह चाहिए ही।

बाथरूम बदबू या दुर्गन्ध-रहित होना चाहिए, अन्यथा वहाँ घुसने का ही मन नहीं करेगा, नहाना तो दूर की बात है। जहाँ शौचालय, बाथरूम में ही हो, वहाँ तो इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए तथा दुर्गन्धनाशक द्रव्य डालना चाहिए।

बाथरूम को बाथरूम ही रहने दीजिए, उसे स्टोर रूम न बनाएँ। घर का फालतू सामान बाथरूम में कभी न रखिए।

बाथरूम में फव्वारा लगा हो तो स्नान करने का आनन्द ही कुछ और है और टब में स्नान करने की बात ही निराली है। सारी थकान दूर हो जाती है।

स्नान करने के बाद अपने गीले व सूखे कपड़ों को निर्धारित स्थान पर व्यवस्थित रखें। उन्हें खुले व बेतरतीब बाथरूम में पटक देना उचित नहीं है। यदि घर में मेहमान हों, तो इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

बाथरूम में जो भी चीजें आप रखें, उन्हें पूर्ण व्यवस्थित रखें। साबुन, टूथब्रश, तेल की शीशी, पाउडर, क्रीम आदि इधर-उधर बिखरे नहीं होने चाहिएँ।

नहाने से व्यक्ति शुद्ध होता है और उसका मन प्रफुल्लित होता है। बहुत-से लोग तो स्नान करते समय ईश्वर का नाम भी जपते हैं। ऐसे में जरूरी है कि वह

जगह साफ-सुथरी एवं स्वच्छ हो, ताकि नहाने के बाद मन को शान्ति एवं सुकून मिले, अन्यथा गन्दे बाथरूम में दो मिनट ठहरने का भी मन नहीं करेगा और लोटे-दो लोटे पानी डालकर ही बाहर आना मजबूरी होगी। तन के साथ मन की शुद्धि के लिए बाथरूम का साफ होना नितान्त आवश्यक है।





जैन वास्तु विज्ञान

जैन वास्तु शास्त्र परम्परागत वास्तु शास्त्र से बहुत कुछ अलग नहीं है। उसका प्रस्तुतीकरण संस्कृत में न होकर प्राकृत (पाली) में है। प्रस्तुत है यहाँ उसके कुछ मुख्य सूत्र—

कमठोपसग्गदलणं, पासजिणेसं सुदिव्ववाणीं हि।
णमिऊणं णिग्गंथं, वत्थुविज्जां णिरूवेमो।।

तीर्थंकर भगवान के मुख-कमल के निर्गत, गणधरदेव द्वारा रचित बारह अंग और चौदह पूर्व का आजस्र प्रवाह, परिपाटि क्रम से अक्षुण्ण चला आ रहा है। दृष्टिवाद नाम के बारहवें अंग से पाँच अधिकार हैं—परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्वगत और चूलिका। इनमें से जलगता, स्थलगता, मायागता, रूपगता और आकाशगता के भेद से चूलिका पाँच प्रकार की है। इसमें स्थलगता चूलिका 20989200 पदों द्वारा पृथ्वी के भीतर गमन करने का कारणभूत, मन्त्र, तन्त्र और तपश्चरण आदि का तथा वास्तुविद्या एवं भूमि सम्बंधी दूसरे शुभाशुभ कारणों का वर्णन करती है। (थलगया; धामतेत्तिएहि चेव पदे हि 20989200 भूमि-गमणकारण-मंत-तंत-तवच्छरणाणि वत्थुविज्जं भूमि-सम्बंधमण्णं पि सुहासुहकारणं वण्णेदि। धवन पुस्तक 1 पृष्ठ 113)

वास्तुविद्या के प्रणेता :

फलार्थ—वास्तु विज्ञान और भूमि के शुभाशुभ का विषय भी जिनेन्द्रदेव द्वारा उपदिष्ट एवं चार ज्ञान तथा सप्त ऋद्धियों के स्वामी गणधरदेव द्वारा रचित है। इसका मूल कारण यह है कि प्रत्येक संसारी प्राणी का जीवन बाह्य एवं अभ्यन्तर कारण-कलापों (साधनों) पर आधारित है। आत्मा के साथ लगी हुई आठ कर्मों की अजस्रधारा एवं इन्द्रिय,बल, आयु और श्वासोच्छ्वास आदि प्राणों की सन्तान परम्परा अभयन्तर साधन (कारण) हैं। देवमन्दिर, प्रासाद, भवन, गृह एवं कुटिया तथा इनसे सम्बंधित आसन, शय्या सवारी एवं वसन (वस्त्र) आदि तथा कुआँ, बावड़ी, तालाब, बाग-बगीचा आदि बाह्य साधन हैं, अर्थात् जीवनयापन हेतु जीवन और पुद्गल पदार्थ ये दोनों साधन स्वरूप हैं। इनमें शुद्ध जीव के शुद्धात्म प्रदेश पुरुषाकार स्वरूप हैं और अशुद्ध (संसारी) जीव के आत्म प्रदेश प्राप्त शरीराकृति स्वरूप होते हैं। सिद्ध और संसारी प्रत्येक आत्मा असंख्यात प्रदेश प्रमाण वाली है।

पुद्गल परमाणु षट्कोणाकृति रूप है। स्कन्ध अनन्त प्रकार की आकृतियों

वाले हैं और प्रमाण में भी अनन्तानन्त हैं। फलितार्थ यह हुआ कि जब जीव और पुद्गल दोनों आकारवान् और प्रमाणवान् हैं, तब उनकी बाह्याभ्यन्तर साधन-सामग्रियाँ भी किसी-न-किसी प्रमाण वाली होनी चाहिएँ।

शुभ और अशुभ परिणामों से उपार्जित पुण्य और पाप प्रकृतियों की आकृति तथा प्रमाणादि में भले ही स्थूल रूप से कोई विशेष अन्तर दिखाई न दे, किन्तु उनके उदय से प्राप्त होने वाले शुभ-अशुभ तथा हीनाधिक अवयव उन-उन जीवों के पुण्य-पाप स्वरूप सुख एवं दुःख के द्योतक अवश्य हैं, उसी प्रकार देवमन्दिर, धर्मशाला, औषधशाला, प्रासाद, भवन, गोपुर आदि तथा गृह से सम्बन्धित शय्या, आसन, वस्त्रादि अपने-अपने स्थान पर सप्रमाण होने पर ही जीवों के सुखी जीवन के तथा इतस्ततः और यद्वा-तद्वा हीनाधिक होने पर उनके दुःखी जीवन के द्योतक होते हैं। इतना ही नहीं, जिस प्रकार औषधि के प्रमाण आदि की हीनाधिकता रोगवृद्धि, शरीरक्षय, बुद्धि-विनाश एवं प्राणहानि में साधक बन जाती है, उसी प्रकार देवमन्दिर, विद्यालय, सभा-भवन, प्रांगण, सीढ़ियाँ तथा द्वार आदि भी यथास्थान एवं सप्रमाण न होने पर समाज, यजमान एवं शिल्पी के पक्ष में अहितकर होते हैं। ये साधन केवल मनुष्यलोक में ही आवश्यक नहीं है अपितु जिनके वैक्रियिक शरीर हैं, ऐसे देवों को भी देवमन्दिर, प्रासाद, शय्या एवं आसनादि की आवश्यकता होती है। स्वर्गादि में ये साधन-सामग्रियाँ अनादिकाल से हैं और अनन्तकाल-पर्यन्त रहेंगी। इन सभी पदार्थों के अंग उपांगों के माप का विस्तृत उल्लेख करणानुयोग के ग्रन्थों में विशेष रूप से उपलब्ध होता है।

आगमप्रणीत माप :

सिद्धान्तचक्रवर्ती श्रीनेमिचन्द्राचार्य इन मापों के भेद त्रिकोलसार ग्रन्थ में इस प्रकार कहते हैं—

माणं दुविहं लोगिग, लोगुत्तरमेत्थ लोगिगं छद्धा।
माणुम्माणोमाणं, गणि-पडितप्पडि-पमाणमिदि।
पत्थ-तुल-चुलुयएगप्पहुदी गुंजा-तुरंगमोल्लादि।।

अर्थ—मान दो प्रकार का है—1. लौकिक मान, 2. अलौकिक मान।

लौकिक मान छह प्रकार का है—मान, उन्मान, अवमान, गणिमान, प्रतिमान और तत्प्रतिमान।

प्रस्थ, तुला, चुल्लू, एकादि, गुंजाफल और घोड़े आदि का मूल्य ये लौकिक मान हैं।

मान—जिससे अनाद आदि का माप किया जाता है, ऐसे प्रस्थ आदि मान हैं।

उन्मान—तराजू आदि को उन्मान कहते हैं।

अवमान—चुल्लू आदि से जो जल आदि माप होता है, वह अवमान है।

गणिमान—एक, दो, तीन आदि को गणिमान कहते हैं।

प्रतिमान—जिससे स्वार्णादि तोला जाता है ऐसे गुंजा आदि प्रतिमान हैं।

तत्प्रतिमान—घोड़े के अवयव आदि देखकर मूल्य करने को तत्प्रतिमान कहते हैं।

इनमें से संख्या (गणित) सूचक जो गणिमान है, वही मान देवमन्दिर एवं प्रासाद आदि के माप का साधन हैं।

श्री यतिवृषभाचार्य ने तिलोयपण्णत्ती के प्रथम भाग में (गाथा 102 से 106 तक) पाँच गाथाओं द्वारा अंगुल का प्रमाण प्रदर्शित किया है। पश्चात् अंगुल के तीन भेद और उनके लक्षण कहे हैं। पश्चात् इन तीन प्रकार के अंगुलों से कौन-कौन से पदार्थ मापे जाते हैं, इसका विवेचन किया है। यथा—

उत्सेधांगुल द्वारा माप करने योग्य पदार्थ :

उस्सेह-अंगुलेणं, सुराण-णर-तिरिय-णारयाणं च।
उस्सेस-पमाणं, बउदेव-णिगेद-ण्याराणं ।।

अर्थ : उत्सेधांगुल से देव, मनुष्य, तिर्यंच एवं नारकियों के शरीर की ऊँचाई का प्रमाण और चारों प्रकार के देवों के निवास-स्थान एवं नगर आदि का प्रमाण माना जाता है।

प्रमाणांगुल से मापने योग्य पदार्थ :

दीवोदहि-सेलाणं, बेदीणं कुण्ड-जगदीणं।
वस्साणं च प्रमाणं, होदि पमाणंगुलेणेव।।

अर्थ : द्वीप, समुद्र, कुलाचन, वेदी, नदी, कुण्डल्ल, सरोवर, जगती और भरतादि क्षेत्रों का प्रमाण (माप) प्रमाणांगुल से ही होता है। उत्सेधांगुल से पाँच सौ गुणा माप एक प्रमाणांगुल का कहा है।

आत्मांगुल से मापने योग्य पदार्थ :

भिंगार-कलस-दप्पण-वेणु-पहड-जुगाण सयण-सगदाणं।
हल-मुसल-सत्ति-तोमर-सिंहासन-वाण-णाति-अक्खाणं ।।
चामर-दुंदुहि-पीढच्छत्तणं णर-णिवास-णयराणं ।
उज्जाण-पहुदियाणं, संजा आदंगुलेणेव ।।

अर्थ—झारी, कलश, दर्पण, वेणु, भेरी, युग, शय्या, शंकट (गाड़ी) हल, मूसल, शक्ति, तोमर, सिंहासन, वाण, नालि, अक्ष, चामर, दुन्दुभि, पीछ छत्र, मनुष्यों के निवास स्थान, नगर और उद्यान आदिकों की संख्या (माप) आत्मांगुल से ही समझनी चाहिए।

आचार्य प्रणीत इन गाथासूत्रों से यह प्रमाणित होता है कि देवमन्दिर, प्रासाद, प्राकार, बाग-बगीचे, आसन, शय्या, वस्त्र, शस्त्र एवं वाद्य आदि जीवनोपयोगी प्रत्येक पदार्थ माप के अनुसार ही प्रयोग करना सुख-शान्ति का साधन है और माप की अवहेलना करना मानो भयानक दुःख एवं संकटों को आमंत्रित करना है।

तिलोयपण्णत्ती आदि ग्रन्थों से अकृत्रिम जिनमन्दिर, उनके द्वार, पाण्डुक शिला, समवसरण भूमि, वीथियाँ (मार्ग), सीढ़ियाँ, जिनेन्द्रकूट आदि की लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई का विस्तृत वर्णन किया गया है, उसका कोई विशेष कारण या रहस्य अवश्य है, वह यह कि सभी पदार्थ यथास्थान एवं यथाप्रमाण ही होने चाहिएँ।

इसी भावना से प्रेरित होकर मन्दिर-गृहादि के प्रमाण आदि का वर्णन यहाँ संक्षेप में किया जा रहा है :

भूमि-चयन :

'भूमि-चयन' मन्दिर-निर्माण-विधि का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है, क्योंकि योग्य भूमि पर निर्मित जिनभवन ही लम्बे काल तक स्थित रहकर भव्य जीवों के कल्याण का साधन बनता है।

जहाँ मन्दिर का निर्माण करना हो वह भूमि शुद्ध हो, रम्य हो, स्निग्ध हो, सुगन्ध वाली हो, दूर्वा से आच्छादित हो, पोली एवं कीड़े-मकोड़े वाली न हो, श्मशान भूमि न हो, गड्ढों वाली न हो तथा अपने वर्ण सदृश गन्ध वाली औ स्वादयुक्त हो, ऐसी भूमि मन्दिर-निर्माण के योग्य कही गई है।

जो भूमि नदी के कटाव में हो, जिसमें बड़े-बड़े पत्थर हों, जो पर्वत के अग्र भाग से मिली हुई हो, छिद्र वाली, टेढ़ी, सूपाकार, दिग्मूढ़, मध्य से विकटरूप वाली, रूखी, बांबीयुक्त, चौराहे वाली, दीर्घकाय वृक्षों वाली, भूत-प्रेत आदि के निवास वाली तथा रेतीली (भूमि) हो उसे त्याग देना चाहिए।

आचार्य जयसेन ने नगर के शुद्ध प्रदेश में, अटवी एवं नदी के समीप में और पवित्र तीर्थभूमि में मन्दिर का निर्माण प्रशस्त कहा है।

वसुनन्दी आचार्य ने तीर्थंकरों के जन्म, निष्क्रमण, ज्ञान एवं निर्वाण भूमि में, अन्य पुण्याप्रदेशों में, नदी-तट, पर्वत, ग्रामसन्निवेश, समुद्रपुलिन आदि मनोज्ञ स्थानों पर जिनमन्दिरों का निर्माण प्रशस्त कहा है।

नगर में दिशा के अनुसार आवास :

गृह-निर्माण के लिए भूमि का चयन करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि गृहभूमि है व ग्राम व नगर के चारों कोनों में न हो, क्योंकि कोण के निवास हेतु शिल्पग्रन्थों में महत्तरों, जातिच्युतों एवं अन्त्यजों को उपदेशित किया गया है।

पुर भवन ग्रामाणं, ये कोणास्तेषु निवसतां दोषः।
श्वपचादयोन्त्यजास्तेष्वेव वविृद्धिमायांति ।।

अर्थ—नगर एवं ग्राम के चारों कोनों में गृह बनाकर निवास से नाना तरह के कष्ट होते हैं, किन्तु यदि नगर के कोणों में श्वपच आदि निम्न स्तर की जातियों के आवास बनें तो उनकी वृद्धि होती है।

वैश्यानां दक्षिणे भागे, पश्चिमे शूद्राकास्तथा।
आग्नेयादि क्रमेणैव, अन्त्यजा वर्णसंकरा।।
जातिभ्रष्टाश्च चौराश्च, विदिक्स्थाः शोभनाः स्मृताः।
ब्राह्मणाः, क्षत्रियाः, वैश्याः, शूद्राः प्रागादिषु क्रमात्।।

अर्थ—वैश्य का नगर के दक्षिण भाग में और अन्त्यज एवं वर्णसंकरों का वास आग्नेयादि कोणों में शुभ होता है। ग्राम या नगर के कोणों में जातिच्युत और चोरों का वास शुभद होता है। पूर्वादि दिशाओं में क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों का निवास सभी दृष्टिकोणों से लाभदायक रहता है।

शंका—अन्त्येज और जातिच्युत आदि को नगर के कोणों में बसाना चाहिए इसके लिए आगम प्रमाण क्या है?

समाधान—स्वर्गों में सन्तानोत्पत्ति न होने से वहाँ जातिच्युत एवं वर्णसंकर नहीं होते हैं, किन्तु गणिका महत्तरियों के भवन इन्द्र के भवन से एक लाख योजन दूर नगर के कोणों में निर्मित हैं, जबकि उनकी पट्ट देवांगनाओं के आसन इन्द्र के सिंहासन के आगे ही हैं। यथा—

पुव्वुत्तर-दक्खिणदिस, तद्दारा, अट्ठवास सोलुदया।
मज्झे हरि-सिंहासण-मडदेवीणासणं पुरदो ।।

1516 (त्रिलोकसार)

अर्थ–(अमरावती नगर के मध्य में इन्द्र के निवास का प्रासाद है, प्रासाद की ईशान दिशा में सुधर्मा नामक अस्थान मण्डप सभास्थान है, जो सौ योजन लम्बा, पचास योजन चौड़ा एवं पचहत्तर योजन ऊँचा है।) उस प्रासाद की पूर्व, उत्तर एवं दक्षिण दिशा में एक-एक द्वार है, जिनमें प्रत्येक की चौड़ाई आठ योजन और ऊँचाई सोलह योजन प्रमाण है। मण्डल के मध्य में इन्द्र का सिंहासन है और इस सिंहासन के आगे आप पट्ट देवांगनाओं के आसन हैं।

स्वर्गों में जो चाण्डालादि के स्थानीय किल्विषिकादि देव हैं, वे भी अन्त में ही रहते हैं। यथा—

सेण्णावदि-तणुरक्खा, पढमे विदियंतरे दु परिसतयं।
सामाणिय देवा पुण, तलिद णिवसंति तुरिएदु ।।500।।
आरोहियाभियोग्गग-किम्मिसियादी य जोग्गपासादे।
गमिय तदो लक्खदलं णंदणमिदि तब्बिसेस-णामाणि ।।

अर्थ : (इन्द्र के नगर के बाहर चारों ओर पाँच कोट हैं। पहले से दूसरा कोट 13 लाख योजन दूर, दूसरे से तीसरा 63 लाख योजन दूर, तीसरे से चौथा 64 लाख योजन दूर और चौथे से पाँचवाँ कोट 84 लाख योजन के अन्तराल पर है।) सेनापति और तनुरक्षक देव प्रथम अन्तराल में, तीनों पारिषद देव दूसरे अन्तराल में, सामानिक देव तीसरे अन्तराल में, आरोहक, आभियोग्य और किल्विषकादि नीच देव इन्द्र के नगर से (13 लाख + 63 लाख + 64 लाख=) 140 लाख योजन दूर रहते हैं। पाँचवें अन्तराल से आधा लाख योजन आगे जाकर चारों दिशाओं में नन्दनादि चार वन हैं।

स्वर्ग–स्थित गणिका महत्तरियों के नगर :

गणिकामहत्तरीणं, पुराणि तत्थेव अग्गिपहुदीसु।
विदिसासुलक्ख-जोयण-वित्थारायाम-सहियाणि ।।

595 (त्रिलोकसार)

अर्थ—(तत्तो बहुजोयणयं गंतूण-उन वरखण्डों से बहुत योजन दूर जाकर) आग्नेय आदि विदिशाओं में गणिका महत्तरियों के नगर हैं, जो एक लाख योजन लम्बे और एक लाख योजन चौड़े हैं।

इस प्रकार मन्दिर या भवन-निर्माण हेतु नगर के (कोनों को छोड़कर) मध्य में उत्तर भूमि का चयन करना चाहिए।

गृह के लिए भूमि-चयन :

मन्दिर-निर्माण योग्य जो भूमि कही गई है, वही लक्षण गृह-भूमि के लिए भी समझने चाहिएँ, इसके अतिरिक्त भी विशेष चयन निम्नलिखित प्रकार जानें—

गृह-स्वामी-भयज्चैत्ये, वल्मीके विपदः स्मृताः।
धूर्तालय समीपे तु, पुत्रस्य मरणं ध्रुवं।।

अर्थ—चैत्यभूमि गृह-स्वामी को भय देने वाली, बांबीयुक्त भूमि विपत्ति देने वाली तथा बोली, चरित्र एवं आचरण से हीन मनुष्य के आवास के समीप वाली भूमि सन्तान-नाशकारी कही गई हैं।

चतुष्पथे त्वकीर्तिः स्यादुद्वेगो देवसद्मनि।
अर्थहानिश्च सविचे श्वभ्रे विपद उत्कटा।।

अर्थ—चौराहे पर मकान बनाने से कीर्ति का नाश होता है। देवमन्दिर की भूमि पर घर बनाने से उद्वेग, मन्त्री के स्थान पर घर बनाने से धनहानि तथा गड्ढे में घर बनाने से घोर विपत्ति आती है।

मनसश्चक्षुषो-र्यत्रः, सन्तोषो जायते भुवि।
तस्यां कार्यं गृहं सर्वैरीति गर्गादिसम्मतम्।।

अर्थ—जिस भूमि से मन एवं आँख को सन्तोष प्राप्त हो उस भूमि पर घर अवश्य ही बनाना चाहिए।





वास्तु शास्त्र के अनुसार दिशा-महत्व

वास्तु एवं पूर्व दिशा :

वास्तु में पूर्व दिशा का अपना अलग महत्व है। सूर्य हमेशा पूर्व दिशा में उगता है एवं ऊषाकाल के दर्शन पूर्व में होते हैं। जिन लोगों के घर का दरवाजा पूर्व की ओर खुलता है, उनके घर में प्रात: से ही रौनक होने लगती है। घर में गंदगी नहीं रहती और परिवार के सदस्यों का स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार, पूर्व दिशा का स्वामी सूर्य है तथा वास्तु शास्त्र के अनुसार पूर्व दिशा का स्वामी 'इंद्र' है और इंद्र देवताओं का राजा है। यही कारण है कि जिनके घर का दरवाजा पूरब की ओर खुलता है, उन्हें भाग्यवान् कहा जाता है अर्थात् उस गृहस्थ पर वास्तु का प्रभाव अच्छा रहता है। जब भी गृहस्थ की जन्म-पत्रिका में गोचर में ग्रह लाभदायक स्थानों पर आते हैं, तब लाभ मिलने का प्रभाव कई गुना बढ़ जाता है। जब गोचर के ग्रह विरोध में रहते हैं, तब जातक को वास्तु का सहयोग उसी प्रकार मिलता है जैसे धूप या बरसात में मानव को छतरी से मिलता है। आज जिन गृहस्थों का मुख्य दरवाजा पूरब में है, यदि वे थोड़ी-बहुत परेशानी में हैं, तो उन्हें ज्योतिष की राय के अनुसार प्रतिदिन नहाने के बाद पूर्व दिशा के स्वामी इन्द्र को प्रणाम करना चाहिए।

पूर्व दिशा मेष, सिंह एवं धनु राशि वालों की दिशा है। यह अग्नि तत्व की दिशा है। अत: इन राशि के व्यक्तियों को अग्नि तत्व; जैसे—माचिस, अगरबत्ती, मोमबत्ती, बिजली के उपकरण तथा ऑटोमोबाइल का व्यापार करना चाहिए। अधिक सुधार के लिए इस राशि वालों को अमावस्या व चन्द्रमा का ध्यान करके उन्हें प्रणाम करना चाहिए। इससे धीरे-धीरे सुधार होगा और आय में वृद्धि होगी। यदि किसी कारण उसे सफलता नहीं मिलती है, तो यह समझना चाहिए कि उस पर अग्नि का कर्ज है और इससे मुक्ति पाने के लिए शुक्ल पक्ष में एक वृक्ष लगायें। वृक्ष के बढ़ने के साथ-साथ आय में भी सुधार होगा।

वास्तु एवं पश्चिम दिशा :

वास्तु शास्त्र के अनुसार पश्चिम दिशा का अपना एक अलग महत्व है। पश्चिम दिशा के स्वामी 'वरुण' हैं। वरुण जल के स्वामी हैं। किसी भी प्राणी का जल के बिना जीवन संभव नहीं है। जिनके शरीर में जलन है, उसे शान्त करने के

लिए जल की जरूरत पड़ती है। जल का बहाव ऊँचाई से नीचे की ओर है तथा अग्नि का स्वरूप नीचे से ऊपर की ओर है। दोनों तत्वों में यदि दूरी बनी रहे तो दोनों में एक-दूसरे के गुण का समावेश होता है, उदाहरणार्थ—जल में अग्नि का गुण यानी जल गर्म होने लगता है एवं अग्नि में जल का गुण यानी अग्नि धीरे-धीरे शांत होने लगती है।

संसार में ऐसे करोड़ों गृहस्थ हैं, जो किसी अन्य की सफलता व प्रगति देखकर खुश नहीं होते बल्कि उनमें जलन पैदा होती है। ऐसे प्राणियों के शरीर में पानी का अनुपात जो 66 प्रतिशत होना चाहिए, वह नहीं रहता। यही कारण है कि उनमें जलन व ईर्ष्या जन्म लेती है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार पश्चिम दिशा के स्वामी मिथुन राशि का स्वभाव द्विस्वभाव है। यह राशि दोनों दिशाओं में आगे-पीछे इसकी इच्छा होती है, यह वैसा रूप धारण कर लेती है।

तुला राशि चार स्वभाव वाली है। इसे धीरे-धीरे बदला जा सकता है। समय के अनुसार इसमें परिवर्तन आ सकता है। कुम्भ स्थिर राशि है, इसे समय के अनुसार परिवर्तित नहीं किया जा सकता।

जल के तीन स्वरूप होते हैं। जमा हुआ जल जैसे बर्फ तथा ऊपर उठा हुआ जैसे बादल। जल अपने भिन्न स्वरूप में प्रत्येक प्राणी की मदद करता है। जल को पाने के लिए पश्चिम की ओर कई प्रयास किए गए, परन्तु वे उसे पा नहीं सके। पानी उन्हीं के पास रहता है जो कर्जविहीन होते हैं। जिस परिवार, संस्था या दुकान में तनाव व घुटन हो, उन्हें अपने बैठक में इस प्रकार बैठना चाहिए कि उनका चेहरा पूर्व की ओर रहे। वहाँ इस तरह की समस्या खत्म हो जायेगी। प्राय: वे जातक जो पैरों से नहाते हुए सिर की ओर बढ़ते हैं, वे ज्यादा कर्जदार होते हैं। गर्मी उनके सिर में बढ़ने लगती है और कई प्रकार के रोगों से ग्रसित हो जाते हैं। अत: स्नान के समय पानी का बहाव ऊपर से नीचे की ओर होना चाहिए। इस प्रकार विवाह या किसी शुभ कार्य के समय यदि वर का चेहरा पूरब की ओर रहता है तो कन्या लक्ष्मी बनकर ससुराल में रहती है। कुछ वर्ष पहले जब छोटे-छोटे से राज्य व राजा थे तब आए दिन युद्ध हुआ करते थे। उस समय कोई राजा या राजकुमार लड़ाई के मैदान में जाने लिए तैयार होता था उसका तिलक महारानी या राजमाता करती थी। उसकी खास वजह यह थी कि पण्डित, ब्राह्मण या पुजारी पर उनका भरोसा नहीं रहता था,जो आजकल बिना ज्ञान के पूजा करवाकर गृहस्थों के जीवन को दु:खी किए हुए हैं।

'सिंह' जंगल का राजा है। आज तक क्या किसी ने उसका 'राजतिलक' किया है अथवा बलि दी है। कमजोर के सभी दुश्मन होते हैं और बलवान के सभी साथी। दीपक की लौ हवा का झोंका बुझा देता है, वही उक्त झोंका जंगल की आग में मदद करती है। अत: हर गृहस्थ को चाहिए कि सिंह के समान बनें, रोज पश्चिम दिशा में स्नान के बाद पूरब तें उगते सूरज को प्रणाम करें। प्रणाम ऐसा हो कि आपने किया व सूर्य ने देखा। इस नियमित क्रिया का असर एक वर्ष में महसूस

होगा, क्योंकि सूर्य एक वर्ष में सभी राशियों का चक्कर पूरा कर लेता है। इस प्रकार वास्तु एवं पश्चिम दिशा का सम्बंध है।

वास्तु एवं उत्तर दिशा :

वास्तु शास्त्र में उत्तर दिशा का स्वामी कुबेर है। सभी देवी-देवताओं के खजाने को ठीक उसी प्रकार रखते हैं; जैसे सभी गृहस्थ अपने नकदी, सोना व चाँदी को रखते हैं। कुबेर रक्षक है। अत: रक्षा का कार्य उसे ही सौंपा जाता है, जो बलवान होता है, उदाहरण के तौर पर देश व राज्यों की रक्षा का कार्य गृहमंत्री को सौंपा जाता है। जिस शहर, गाँव, राज्य अथवा राष्ट्र में उच्चाधिकारी अपनी स्वयं की रक्षा के लिए सिपाही की सेवायें ले रहा है, वहाँ की रक्षा ईश्वर के अलावा कोई भी नहीं कर सकता है।

आज जिन-जिन बैंकों में हमारा सोना, चाँदी, आभूषण आदि जमा हैं, वे हमसे उसका किराया लेते हैं। बैंक के माध्यम से जब भी हम किसी को धन भेजते हैं तो बैंक कर्मी कमीशन काट लेते हैं। जबकि ऐसा नहीं होना चाहिएं। इसके लिए हम सभी जिम्मेदार हैं। प्रत्येक राशि जैसे मेष राशि बैंक, वृषभ राशि बैंक में जमा करवा दें एवं जिस स्थान पर जब चाहिए उसे भेज दें। उनसे किसी तरह का खर्च नहीं लिया जाएगा। सभी बैंक सदैव खुले रहेंगे। वास्तु शास्त्र में धन का स्थान उत्तर दिशा में है, जिसका स्वामी कुबेर है। जहां-जहां वास्तु का निर्माण हो रहा है, वहाँ पर सभी देवी-देवताओं का वास हो रहा है। जहाँ सभी देवी-देवताओं का निवास हो, वहाँ अपनी संतानों के पालन-पोषण के लिए धन जमा करना चाहिए। सभी देवी-देवता मानव योनि में आए तथा हम सब मानव उनकी संतान हैं। अपनी संतानों की रक्षा अपने संचित धन द्वारा कैसे हो रही है, इस पर कुबेर निगरानी रखते हैं। उदाहरणार्थ—उत्तर में रक्षक के रूप में हिमालय खड़ा है तथा हर पल बर्फ पिघलकर नदियों के रूप में बहती हुई समुद्र में मिल रही है। उसी समुद्र से जल भाप बनकर बादल बनता है एवं धरती की प्यास बुझाता है। ज्योतिष में उत्तर दिशा के स्वामी कर्क, वृश्चिक एवं मीन राशियाँ हैं। इसमें कर्क राशि का स्वभाव चर है, वह बदल सकती है। अत: किसी भी प्राणी में प्रेम से बदलाव लाया जा सकता है। वृश्चिक स्थिर राशि है। जल भी स्थिर स्वभाव का होता है, अत: इस राशि के व्यक्ति कुए, तालाब आदि का निर्माण कराएँ तो उन्हें हर तरह का लाभ मिल सकता है। मीन राशि द्विस्वभाव वाली है। इसका रंग पीला है। वह दोनों प्रकार से रहती है। अत: इस राशि के व्यक्ति को हल्दी, मेथी तथा अन्य पीली वस्तुओं के उत्पादन में जल की व्यवस्था सुनिश्चित करनी चाहिए। धन की रक्षा की जिम्मेदारी पुरुष पर निहित होती है, इसलिए हिमालय पर शिवजी तथा समुद्र में विष्णु जी भगवान हैं। दोनों के पास काल हैं जिसे नाग कहते हैं। एक के गले में तथा दूसरे के सिर के ऊपर नाग का छत्र है। यदि कोई गृहस्थ दूसरे के धन को लेने का विचार करेगा तो उस स्थिति में यही काल उस धन को बचाएगा।

वास्तु एवं दक्षिण दिशा :

वर्तमान में जिस गृहस्थ के यहाँ चोरियाँ बढ़ रही हैं, उनके घर या दुकान अथवा कारखाने में चोरी रोकने के लिए उपाय करना चाहिये। सर्वप्रथम जातक को अपने घर की दक्षिण दीवार को मजबूत करना चाहिये, साथ-साथ अपने पूर्वजों की फोटो दक्षिण दिशा में लगाएँ और उसका रुख उत्तर की ओर हो। जब घर के व्यक्ति इस पवित्र फोटो दर्शन करें, तो उनका रुख दक्षिण की ओर रहे।

मानव योनि के सभी प्राणियों का जन्म बन्दर के रूप में होकर बाद में सुधरता गया है। बन्दर का सुधरा रूप हनुमानजी का है। इसलिये हनुमानजी का फोटो दक्षिण दिशा में लगायें और उसका रुख उत्तर की रहे। प्राय: मन्दिरों में इस बात पर ध्यान नहीं दिया जाता है और हनुमान जी का रुख दक्षिण दिशा में रहता है। जब माँ जानकी को रावण ने दक्षिण दिशा में कैद किया तो हमारी भूमि कर्जदार हो गई थी। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम उत्तर से दक्षिण की ओर आए थे और सीता को लेकर उत्तर दिशा में है, जिसके रक्षक कुबेर हैं। उत्तर में प्राय: सभी स्थानों पर श्रीराम के मन्दिरों में उनका शृंगार सम्पन्नता का रहता है और दक्षिण में वनवास का। वास्तु शास्त्र यहाँ इस बात की तरफ इंगित करता है कि अपनी निगाहें सही स्थन पर लाकर देखें। उदाहरणस्वरूप एक गिलास में आधा पानी भरें, ज्ञानी व्यक्ति कहेगा कि गिलास आधा भरा है परन्तु मूर्ख व्यक्ति को इस तरह कहेगा कि गिलास आधा खाली है।

उत्तर दिशा में हमारा धन जमा है, जब हम दक्षिण दिशा में खड़े होकर उत्तर दिशा की ओर देखेंगे तो वह दिखाई देगा। उत्तर में धन के रूप में विशाल हिमालय खड़ा है जो शिवजी का ससुर है। शिवजी हमेशा कैलाश पर्वत पर रहते हैं यानी हिमालय उनकी ससुराल हुई। इसी तरह भगवान विष्णु को भी ससुराल प्रिय है। लक्ष्मी की उत्पत्ति समुद्र से हुई है और विष्णु जी समुद्र में शेषनाग पर विश्राम कर रहे हैं। यदि कोई गृहस्थ अपनी भार्या को लक्ष्मी के रूप में देखना चाहता है या कोई गृहिणी अपेन पति को विष्णु के स्वरूप में देखना चाहता है या कोई गृहिणी अपने पति को विष्णु के स्वरूप में देखना चाहती है, तो किसी पूर्णिमा के दिन किसी शंख अथवा कौड़ी में अपनी राशि के रंग का धागा बाँधना चाहिए। गौरतलब बात यह है कि लक्ष्मी और शंख की ही उत्पत्ति समुद्र से हुई है, जो उन्हें अत्यन्त प्रिय है।

वास्तु एवं ईशान दिशा :

वास्तु में ईशान दिशा का अपना अलग महत्व है। जल का सही स्थान उत्तर-पूर्व दिशा में है। अत: प्रत्येक मनुष्य को ईशान यानी उत्तर-पूर्व दिशा में जल को रखना चाहिये। यदि किसी कारण यह सम्भव नहीं हो तो जल उत्तर-पश्चिम दिशा में रखें, जिसे वाम्य दिशा भी कहते हैं। जिन गृहस्थों के यहाँ इस तरह की व्यवस्था है वहाँ पर परिजनों पर जल का कर्ज कम होने लगता है। इस तरह परिवार में सभी के चेहरों पर पानी दिखाई पड़ने लगेगा। उनकी बातों में वजन भी होगा।

पानी के तीन रूप हैं—द्रव, ठोस व गैस। जो जल बह रहा है जैसे-नदियों में, वह द्रव के रूप में है। दूसरा ठोस जो बर्फ के रूप में हिमालय पर जमा है तथा तीसरा गैस जो आकाश में बादलों के रूप में विराजमान है।

जिन परिवारों में जल उत्तर-पूर्व दिशा में जा रहा है, उन परिवारों के बच्चे पढ़ाई में अच्छे नम्बरों से पास होंगे। उन गृहस्थों को पढ़ाई में, अपने बच्चों के शिक्षण के लिये, किसी भी प्रकार का अनुदान नहीं देना पड़ता है। इसका मुख्य कारण सही दिशा में जल का रहना है। इससे घर में सुधार होता है।

ईशान दिशा के स्वामी सदाशिव हैं। इसलिये जो गृहस्थ अपने घर में शिवजी की पूजा करता है, अथवा कर रहा है, उसे अपने घर में स्थित शिवलिंग का स्वरूप इस प्रकार रखना चाहिए कि शिवजी पर चढ़ाया जाना वाला पवित्र जल पूर्व दिशा अथवा ईशान की ओर ही जाये।

उज्जैन में स्थित महाकालेश्वर जी के शिव मन्दिर में जल पूर्व दिशा में जाता है। जो गृहस्थ अपने परिवारों के साथ महाकालेश्वर जी के मन्दिर में शुद्ध जल चढ़ाते हैं, उनकी इच्छा वे पूर्ण करते हैं।

शिवजी को जो गृहस्थ जल चढ़ाने जायें उन्हें वहाँ पर दक्षिण-पूर्व दिशा में अपनी-अपनी राशि की अगरबत्ती की भभूति भी चढ़ानी चाहिए। शिवजी पर भस्म चढ़ायी जाती है अत: ऐसी व्यवस्था की गई है कि प्रत्येक मानव को उनकी राशि की अगरबत्ती शिवजी के विभिन्न मन्दिरों में मिलतीं हैं। व्यवस्था होने तक गृहस्थ अपने-अपने गाँव, शहर या राज्यों से अपनी-अपनी राशि की अगरबत्ती ले जाकर शिवजी को जल चढ़ाकर जो पूर्व दिशा में बहे, अगरबत्ती जलानी चाहिये।

विद्यार्थियों को चाहे वे किसी स्तर के हों अपनी पढ़ाई करते समय इस रूप में बैठना चाहिए कि उनका चेहरा ईशान दिशा की ओर रहे। इससे उनका ध्यान पढ़ाई की ओर लगेगा तथा उन्हें सफलता मिलेगी। ईश्वर की कृपा से विद्यार्थी 'शान' से अपनी गृहस्थी बसाकर सुखमय जीवन व्यतीत कर सकते हैं तथा मानव योनि का आनन्द उठा सकते हैं।

लेखक, वैज्ञानिक, डॉक्टर तथा वकील इन सभी को अपनी पढ़ाई करते समय ईशान दिशा में अपना चेहरा करना चाहिये। न्यायमूर्ति की कुर्सी पर विराजमान व्यक्ति मुकदमे का अध्ययन करते समय अपना मुख व कागज आदि ईशान दिशा में रखें।

जिस गृहस्थ के घर का वर्तमाना प्रमुख दरवाजा ईशान दिशा कोण पर खुलता है, उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में यदि कार्य शुरू किया तो उन्हें सफलता मिलेगी। ट्यूशन क्लास लेने वाले शिक्षकों को चाहिये कि वे अपने विद्यार्थियों को इस प्रकार बैठायें कि उनका चेहरा उत्तर-पूर्व में रहे तथा शिक्षक का चेहरा दक्षिण-पश्चिम में रहे। इस प्रकार की व्यवस्था करने से शिक्षक अपने विद्यार्थी को सम्पूर्ण ज्ञान दे सकेंगे।

माता-पिता यदि अपनी सन्तान को सही दिशा दें तो उनकी सन्तान ज्ञानवान

एवं आज्ञाकारी होगी। आज अधिकतर गृहस्थ अपनी सन्तान से परेशान हैं। जिसका मुख्य कारण सही दिशा का ज्ञान न होना है। सही दिशाबोध होने के बाद परेशानियाँ खत्म हो जायेंगी।

वास्तु एवं आग्नेय दिशा :

वास्तु शास्त्र में पंचतत्वों का महत्व है, पंचतत्व में अग्नि भी एक तत्व है। बिना अग्नि के कोई भी जीवन पूर्ण नहीं हो सकता। अग्नि के देवता सूर्य हैं। अत: अग्नि का अपना अलग एक स्थान है, जिसे आग्नेय दिशा कहते हैं।

हम वायु के बीच रहते हैं, अत: बिना वायु के हमारा जीवन संभव नहीं है। ठीक उसी प्रकार जैसे पानी के बिना मछली जीवित नहीं रह सकती। वही स्थिति अग्नि की है। अग्नि में भी कुछ अनजान प्राणी रहते हैं, जो हमें दिखाई नहीं देते।

आग्नेय दिशा में अग्नि किसी भी रूप में विराजमान रहती है, वहाँ पर अग्नि के जीव, जो अदृश्य रहते हैं, अपने आप आ जाते हैं तथा अपना कार्य करने लगते हैं, उसी प्रकार जैसे चींटियाँ मीठी वस्तु के पास स्वत: ही आ जाती हैं। हवा में खुशबू हमें नहीं दिखाई देती है, उसी प्रकार यह अग्नि भी हमें दिखती नहीं है।

यदि सूर्योदय न हो तो मानव का क्या हाल होगा। वास्तु शास्त्र के अनुसार यही स्थिति आग्नेय दिशा की है, अर्थात् जो ठण्डी वस्तु दक्षिण-पूर्व दिशा में रख दी जाए, वह धीरे-धीरे गर्म होने लगे।

जिस प्राणी या वस्तु में अनुपात के अनुरूप गर्मी रहती है, वह प्राणी या वस्तु बराबर कार्य करते हैं। हमारे शरीर का तापमान 98.4 से यदि कम हो जाये तो हमें कई प्रकार के रोग हो जाते हैं, जिनका शरीर ठण्डा पड़ने लगता है, उनमें मृत्यु के आसार दिखाई देने लगते हैं।

यदि हमारे शरीर में स्थित अग्नि सामान्य से अधिक हो जाये तो भी अनेक प्रकार की बीमारी होने की संभावना रहती है, इसलिये डॉक्टर सबसे पहले मरीज के शरीर का तापमान कम करने का प्रयास करते हैं।

आग्नेय दिशा में लेटे हुए मरीज का तापमान कम नहीं होगा। ऐसे समय में तुरंत वास्तु शास्त्र का ध्यान करके मरीज को सबसे पहले पश्चिम दिशा में लिटा देना चाहिये, जो वरुण की दिशा है। परिणामस्वरूप गृहस्थ का बुखार अपने आप सामान्य हो जायेगा।

इसी प्रकार जब किसी गृहस्थ का शरीर ठण्डा पड़ने लगता है तथा नाड़ी शान्त होने लगती है तो डॉक्टर उसके शरीर में गर्मी लाने का प्रयास करता है। मरीज की छाती को डॉक्टर पूरी ताकत से रगड़ता है जिससे गर्मी आती है। ऐसा करने से उसे कई बार सफलता मिलती है तथा कई बार नहीं भी मिलती। ऐसे समय में गृहस्थ के परिवार वाले ईश्वर का ध्यान करने लगते हैं। डॉक्टर या घर के सदस्यों ने यदि ऐसे मौके पर मरीज को वास्तु शास्त्र के अनुसार तुरन्त आग्नेय दिशा में लिटा दिया तो उसे तुरन्त गर्मी मिलेगी एवं उसके शरीर में जीवन के लक्षण दिखाई देंगे। यह प्राय: हार्ट अटैक के समय होता है। जिसे हार्ट अटैक का

झटका महसूस हो उसे तुरन्त आग्नेय दिशा में इस तरह लिटा देना चाहिये कि मरीज का सिर आग्नेय दिशा में हो, अर्थात् जब हम उसे देखें तो हमारा चेहरा आग्नेय दक्षिण-पूर्व में रहे।

यदि किसी उद्योगपति का कारखाना बंद है,तो सर्वप्रथम अपने कम्पाउंड को नाप कर ठीक कर लेना चाहिये, तदुपरांत आग्नेय दिशा में मोटर, मशीनें आदि लगवायें, इससे बंद कारखाना पुन: शुरू हो जायेगा।

जिस गृहस्थ के घर का दरवाजा दक्षिण-पूर्व की ओर खुलता है, उन्हें ध्यान रखना चाहिये कि उनके यहाँ आने वाला, मेहमान या परिवार का सदस्य क्रोध लेकर आता है अत: उसे शान्त करने के लिए पश्चिम दिशा में बैठायें तथा पीने को ठंडा पानी दें, इसके बाद ही उससे किसी भी प्रकार की चर्चा करें, सफलता अवश्य मिलेगी।

प्रतिदिन घर में यदि तनाव रहता हो तो गृहस्थ को चाहिये कि उत्तर-पश्चिम की दिशा में किसी ड्रम में पानी भरकर रखे तथा पानी आग्नेय दिशा के ठीक सामने 180 डिग्री के अंश पर रहे इससे घर का अशान्त वातावरण शान्त हो जायेगा।

यदि किसी व्यक्ति की दुकान का शटर या मुख्य दरवाजा आग्नेय दिशा की ओर खुलता है तो उस व्यक्ति को गर्म वस्तुओं का व्यापार करना चाहिये इससे पर्याप्त लाभ अर्जित होगा।

आग्नेय दिशा का स्वामी अग्नि है, अत: जिन्हें इस दिशा से अधिक से अधिक लाभ लेना है, उन्हें अपना अग्नि का कर्ज उतारना चाहिये, जो उन पर है। जो गृहस्थ अग्नि का कर्ज उतारना चाहता है, उसे अग्नि के भोजन की व्यवस्था करनी चाहिये। अग्नि का भोजन है— 'लकड़ी'। अत: मनुष्य को लकड़ी के लिये अधिक से अधिक पेड़ लगाने चाहियें। इससे रोजगार एवं व्यापार में इच्छानुसार सफलता मिलेगी।

गृहस्थ को अपने सोने वाले कमरे में आग्नेय दिशा में सदैव आग जलाकर रखनी चाहिये, इससे कमरे का संतुलन बराबर रहेगा, अच्छी नींद तथा प्रगतिशील विचार आयेंगे। इसके अतिरिक्त परिवार में बीमारियाँ एवं कर्ज आदि नहीं रहेगा।

वास्तु एवं नैर्ऋत्य दिशा :

दक्षिण-पश्चिम दिशा का नाम नैर्ऋत्य दिशा है। इस दिशा का मानव एवं प्राणियों के जीवन में विशेष महत्व है मानव के अतिरिक्त सभी योनि के प्राणी इस दिशा का महत्व समझते हैं। इस दिशा में जो भी बैठता है अथवा सही सामान रखता है, उसका शरीर एवं घर दोनों पवित्र रहते हैं। अपने घर एवं शरीर की सफाई भी इसी दिशा में बैठकर करनी चाहिये। अपने घर की सफाई जो गृहिणी स्वयं करती है, उसका घर, शरीर एवं आत्मा पवित्र रहती है।

जिन प्राणियों का घर, मन एवं आत्मा स्वच्छ रहते हैं, उनमें कभी भी किसी भी स्वरूप में, किसी भी प्रकार के विकार नहीं आते। वास्तु शास्त्र के अनुसार ऐसा व्यक्ति ही सच्चा गृहस्थ कहलाता है। इस दिशा में गृहस्थ को सभी प्रकार के सफाई के सामान; जैसे—झाड़ू, पोंछा लगाने का कपड़ा आदि रखने चाहियें।

गृहस्थ यदि अपना मन एवं आत्मा शुद्ध करना चाहे तो उसे अपने शरीर को शुद्ध करने के पश्चात् मन एवं आत्मा को शुद्ध करने के लिए दक्षिण-पश्चिम की दिशा में चेहरा करके नैर्ऋत्य दिशा को मन से प्रणाम करना चाहिये। इससे धीरे-धीरे उसकी मन एवं आत्मा शुद्ध होगी।

सूर्य आत्मा का स्वामी है, वह स्थिर है। सूर्य ने कुन्ती के साथ पाप किया था, इसीलिये सूर्य की आत्मा को शुद्ध करने के उद्देश्य से पृथ्वी घूमती हुई प्रतिदिन उसके सामने यह दिशा लाती है।

चन्द्र मन का स्वामी है, अत: प्राणियों का मन साफ करने के उद्देश्य से चन्द्रमा प्रति माह इस दिशा में आता है। जिस प्रकार कुआँ स्थिर है तथा प्राणी पानी के लिए स्वयं कुएँ के पास जाता है।

जहाँ-जहाँ गंदगी हो जाती है, उसे साफ करने के लिए जल जो ठोस स्वरूप में बर्फ है, अपना स्वरूप बदलकर जल तरल बन जाता है तथा बाद में सूर्य के सहयोग से वह बादल बनकर जहाँ-जहाँ पर गंदगी है, उसे दूर करने के लिए सब स्थानों में जाता है।

तन व मन की सफाई के लिये जो गृहस्थ इस दिशा में जाकर अपने शरीर की सफाई कर लेते हैं, वे शुद्ध हो जाते हैं तथा जो गृहस्थ इस दिशा में नहीं ज़ा पाते हैं उन्हें परिवार के अन्य सदस्यों की मदद से उसे दिशा में ले जाना चाहिये। जहाँ तक हो सके चल कर ही जाना चाहिये, जैसे जल पहले बर्फ के रूप में रहता है, जो चाँदी के समान उज्ज्वल है, यही जल जब संसार की गंदगी को साफ करता है तो उसका रंग काला हो जाता है। अत: इस जगह पर गन्दे कपड़े आदि रखे जाते हैं, मैले कपड़े धारण करके ही अपने शरीर को साफ करें।

दक्षिण-पश्चिम की ओर जिन गृहस्थों के घर का प्रमुख दरवाजा होता है, वे महान् हैं, इसलिए उनके यहाँ जो भी मिलने आयेगा उसका तन, मन एवं आत्मा शुद्ध हो जाती है। इस प्रकार की व्यवस्था वाले घर की गृहिणी को कभी भी भूल कर किसी की भी टीका-टिप्पणी या बदनामी नहीं करनी चाहिये।

दक्षिण-पश्चिम दिशा में जिन गृहस्थों की दुकान या कम्पनी का मुख्य दरवाजा खुलता है वे यदि सफाई की वस्तु का निर्माण या व्यापार करें तो उन्हें बहुत बड़ी सफलता मिलेगी।

वास्तु एवं वायव्य दिशा :

वास्तु शास्त्र के अनुसार वायव्य दिशा का अपना अलग महत्व है। वायव्य दिशा के स्वामी वायु हैं। पृथ्वी के सभी प्राणी वायु में उसी प्रकार रहते हैं; जैसे--जल में मछली। जब गृहस्थों पर वायु के कर्ज का बोझ बढ़ता है तो उनमें अनेक प्रकार के वायु विकार उत्पन्न होते हैं, इसलिए उन गृहस्थों को समझ लेना चाहिये कि उन पर कर्ज मर्यादा से अधिक है। ऐसे जातक को शुक्राचार्य के गणों से बचाने के लिए वायु के कर्ज को कम करने का प्रयास करना चाहिये। इससे उनके जीवन में धीरे-धीरे सुधार होने लगेगा। प्रत्येक गृहस्थ को प्रतिदिन अपनी दिनचर्या का हिसाब

करना चाहिये तथा स्नान आदि के बाद सच्चे मन से वायव्य दिशा को प्रणाम करना चाहिये।

वायव्य दिशा के स्वामी वायु हैं। वायु के पुत्र हनुमानजी हैं। हनुमानजी बन्दर के रूप में हैं। अब विज्ञान भी इस बात पर जोर दे रहा है कि हमारे पूर्वज बन्दर थे, जिन्हें हम जाने-अनजाने में प्रणाम में प्रणाम कर रहे हैं। किसी भी धर्म को मानने वाले गृहस्थ हों, वे सभी विज्ञान को मानते हैं। जो विज्ञान मानते हैं, दे रात एवं दिन को मानते हैं, जो रात एवं दिनि को मानते हैं, वे सूर्य एवं चन्द्र को मानते हैं। जो सूर्य को मानते हैं वे रविवार को मानते हैं। जो चन्द्र को मानते हैं, वे सोमवार को मानते हैं। इस प्रकार जो सोमवार व रविवार को मानते हैं, वे सब कर्म से मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार एवं शनिवार को मानते हैं। इसी प्रकार सभी धर्मों में आज जो वार अर्थात् जैसे आज रविवार है तो उसे रविवार ही माना है। सोमवार को सोमवार ही माना है। जल को जल, हवा को हवा, पृथ्वी को पृथ्वी, आकाश को आकाश, माता को माता, पिता को पिता, भाई को भाई, पत्नी को पत्नी, बहन को बहन, पति को पति, सन्तान को सन्तान माना है।

किसी भी धर्म में कर्ज को अच्छा नहीं माना गया है। अफसोस सिर्फ इस बात का है कि आज जो हमें ज्ञान देना चाहते हैं, वह अन्त:करण से भोग के भूखे हैं एवं हमें त्याग की शिक्षा मात्र इसलिए दे रहे हैं कि जब तक हम त्याग करेंगे उन्हें भोग के साधन मिलते रहेंगे।

प्रवचनकर्त्ता की भूख किस तत्व की अधिक है यह अलग-अलग समय पर निर्भर है जो अलग-अलग होती है, जैसे—गृहस्थ को अलग-अलग समय पर भूख लगती है, कभी अभय की भूख (जब हम किसी कारण से डरे रहते हैं) कभी आँखों की भूख, कभी कानों की भूख, कभी त्वचा की भूख, कभी नाक की भूख, कभी बुद्धि की भूख, कभी नाम की भूख इत्यादि।

इसलिए जिस जातक को वायु का रोग है, उन्हें वायु का कर्ज उतारना चाहिए। उन्हें दुर्गन्ध वाले स्थानों की सफाई ठीक उसी प्रकार करनी चाहिए जिस प्रकार हम अपने शरीर की सफाई करते हैं। गृहस्थ कितने भी अच्छे व ऊँचे स्थान पर पहुँच जाये, परन्तु वह मलद्वार की सफाई स्वयं ही करता है तथा जब तक उसकी बुद्धि कार्य करेगी, तब तक करता रहेगा। मलद्वार ऐसा द्वार है, उसे चाहे जितना साफ करो, कुछ समय बाद वह फिर वैसा ही हो जाता है।

यही स्थिति हमारे मन तथा आत्मा की है, चाहे जितना सुधारो फिर बिगड़ जाती है। जिस शरीर से यह पवित्र आत्मा निकल जाती है, वह शरीर मिट्टी का हो जाता है, जबकि यदि हमारी आँखें, कान, नाक तथा मुँह न रहें, तो भी हम जीवित रह सकते हैं, परन्तु यदि वायु नहीं है, तो शरीर का कोई भी अंग साथ नहीं देगा।

जिनके मकान का दरवाजा वायु कोण में खुले, वे भाग्यवान् हैं। उन्हें किसी भी संकट के समय पवन पुत्र हनुमान का स्मरण करना चाहिए तथा उन्हें उनकी

दिशा में मानसिक प्रणाम करना चाहिए। हनुमानजी को स्मरण करने के लिए दो दिन निश्चित किए गए हैं, मंगल व शनि। ये दोनों दिन हनुमान जी का आदेश मानते हैं।

मंगल का रंग लाल है, इसलिए जिनकी जन्म पत्रिका में मंगल का दोष है, उन्हें मूंगा पहनना चाहिए तथा अधिक लाभ के लिए, अपने शरीर का खून दान देना चाहिए, जिसे रक्त-दान कहते हैं। मंगल आपकी राशि में प्रत्येक 18 माह के बाद आता है, इसलिए आपको प्रत्येक 18 माह के बाद आता है, इसलिए आपको प्रत्येक 18 माह में एक बार रक्त-दान देना ही चाहिए।

शनि की जो सेवा करना चाहते हैं, उन्हें न तो शनि मन्दिर में जाना चाहिए औन न ही तेल का दान करना चाहिए। मानव-जीवन को जो दान दे रहा है, वह पाप का रूप है। शनि मन्दिर किसी न किसी गृहस्थ की सम्पत्ति है एवं उस मन्दिर में झगड़े चल रहे हैं, चाहे वह मन्दिर विश्व में कहीं पर भी हो। अत: इन स्थानों पर सोच-समझ कर ही दान देना चाहिए।

ज्योतिष में शनि व शुक्र आपसी मित्र हैं, इसलिए जो गृहस्थ इस पृथ्वी पर 'नमक-हराम' है, उन सब पर शनि की तीसरी दृष्टि है। जिस पर शनि की तीसरी दृष्टि है, वह कभी भी शनि की दृष्टि से बच नहीं सकता है। सबसे पहले शनि उन्हें अपने अधीन कर लेता है अथवा अपने दुश्मन मंगल के पास पहुँचा देता है। इसका कारण यह है कि शनि व मंगल में सामयिक मित्रता है, जैसे सफर के समय बस, रेल, हवाई जहाज, पानी का जहाज आदि में गृहस्थ की सामयिक मित्रता अन्य गृहस्थ से हो जाती है। सामयिक मित्रता में प्रेम अधिक होता है, इसलिए नमक-हराम प्राणी को शनि अपने मित्र मंगल के पास भेज देता है।

मंगल लड़ाई-झगड़े का स्वामी है। विभिन्न राष्ट्रों में जगह-जगह मंगल की वजह से लड़ाई-झगड़े हो रहे हैं। मंगल का नियंत्रण भूमि पर है, इसलिए भूमि पर शासन का लालच पृथ्वी को खून पिला रहा है। आज के स्वार्थी मानव से बचो, मंगल का पुलिस पर नियंत्रण है, इसलिए नमक-हराम व्यक्ति के पास पुलिस जाती है। जब उसका पेट भर जाता है, तब उसे शनि को सौंप देती है। शनि के प्रतीक काले रंग वाले वस्त्र धारण करने वाले होते हैं अर्थात् वकील व जज जिनके पास मंगल रूपी पुलिस नमक-हराम व्यक्तियों को सौंप देती है।

शनि पेट भरने के बाद उसे अपने मित्र शुक्र के पास भेज देता है, जिसका गण डॉक्टर है।

इसलिए यदि कोई गृहस्थ शनि से बचता है, वह अपने में सुधार लाये। शनि कर्मों का स्वामी है, इसलिए, काले, खाकी एवं सफेद कोट से बचने के लिए गृहस्थ को गलत कार्यों से दूर रहना चाहिये।

जिस गृहस्थ की दुकान, कार्यालय या कारखाने का प्रमुख दरवाजा वायव्य दिशा में खुलता है, उन्हें पंखे, कूलर, खुशबू, इत्र, मिठाई, फिल्म, संगीत आदि से सम्बंधित सामान का व्यापार करना चाहिये, जो उन्हें पीढ़ी दर पीढ़ी सफलता की ओर अग्रसरित करेगा।





वास्तु शास्त्र एवं पंचतत्व

दिशा, विदिशाओं एवं पंचतत्वों के आधार पर ही वास्तु के अनुपम सिद्धान्तों का निर्धारण किया गया है।

जिस प्रकार शरीर में जब इन पाँचों तत्वों का तारतम्य अथवा समरसता बाधित हो जाती है, तो शक्तियों के क्षीण होने के कारण शारीरिक एवं मानसिक तनाव एवं अस्वस्थता व्याप्त हो जाती है। इसी प्रकार भवन में इनकी समरसता के बाधित होने पर भवन में निवास करने वाले को शारीरिक एवं मानसिक अस्वस्थता का सामना करना पड़ता है।

आइए, इन पाँचों तत्वों की शक्ति का स्वरूप, क्रिया एवं इन्द्रियों के बारे में जानें—

तत्व	शक्ति का स्वरूप	क्रिया	इन्द्रियाँ
अग्नि	सूर्य	देखना	आँख
वायु	वायु	छूना	चमड़ी
आकाश	शब्द	शब्द	कान
पृथ्वी	गुरुत्वीय / चुम्बकीय	सूंघना	नाक
जल	वर्षा	स्वाद	जीभ

दिशाओं में इन पाँचों तत्वों का निर्धारण अग्रानुसार है—

उत्तर-पूर्व	—	जल
दक्षिण-पूर्व	—	अग्नि
दक्षिण-पश्चिम	—	पृथ्वी
उत्तर-पश्चिम	—	वायु
केन्द्र	—	आकाश

भवन में पाँचों तत्वों का निम्नानुसार निर्धारण किया गया है—

उत्तर-पूर्व—अर्थात् ईशान कोण जल के लिए निर्धारित है। पानी का कुआँ अथवा स्रोत तथा भूमिगत जल भण्डार इस दिशा में रखें।

दक्षिण-पूर्व—अर्थात् आग्नेय कोण अग्नि के लिए निर्धारित है। अपना रसोईघर, रसोई भण्डार, वाष्पभण्डार (बायलर) तथा भट्टी इस दिशा में रखें।

उत्तर-पश्चिम—अर्थात् वायव्य वायु के लिए निर्धारित है। यहाँ पर अतिथियों के लिये कमरा या बढ़िया सामान रखें।

दक्षिण-पश्चिम—अर्थात् नैर्ऋत्य कोण पृथ्वी के लिए निर्धारित है। यह सब तत्वों से स्थिर है। जहाँ तक हो सके इसे प्रयोग में लायें।

केन्द्र—आकाश के लिए निर्धारित है। इस स्थान पर कम से कम काम अथवा व्यवहार रखें।

आइए, अब इन पाँचों तत्वों के बारे में एवं इनके वास्तु शास्त्र में महत्व के बारे में विस्तार से जानें!

पृथ्वी :

पृथ्वी तत्व का स्पष्ट तात्पर्य भूखण्ड की भूमि एवं भवन में रखी जाने वाली भारी वस्तुओं से है।

किसी भी निर्माण से पूर्व भूखण्ड का तात्विक, गुणात्मक एवं आकार की दृष्टि से परीक्षण किया जाता है।

भवन-निर्माण हेतु सदैव जीवित भूमि का ही चयन किया जाना चाहिए। वह भूमि जिस पर उगने वाले पेड़-पौधे सदैव हरे-भरे रहते हों, जीवित भूमि कहलाती है।

जिस भूमि में दीमक हों, हड्डी हो अथवा भूमि फटी हुई हो, उसे भवन-निर्माण हेतु चयनित नहीं करना चाहिए। वास्तु शास्त्र के एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ वृहत्संहिता में कहा गया है—

शस्त्रोषधि-द्रुम-लता-मधुरा-सुगन्धा,
स्निग्धा समा न सुषिरा च मही नराणाम।
अप्यध्वनि श्रम-विनोदमुपागतानाम्,
धत्ते श्रियं कियतु शाश्वत-मन्दिरेषु।।

अर्थात् अनेक प्रकार के औषधि वृक्षों एवं लताओं से सुशोभित, मधुर स्वाद वाली, उत्तम गन्ध वाली, गड्ढों एवं छिद्ररहित ही श्रेष्ठ भूमि है, जो मनुष्य के श्रम को शान्त कर मनुष्यों को आनन्द प्रदान करती है अत: ऐसी भूमि पर ही मन्दिर अथवा भवन-निर्माण श्रेयष्कर है।

भूखण्ड की भूमि की जाँच :

भूखण्ड की भूमि की जाँच निम्न प्रकार से की जाती है—

(1) भूमि के प्रकारानुसार,

(2) पृष्ठानुसार,

(3) भूमि के ढालानुसार।

भूमि के प्रकारानुसार भूमि की जांच फल एव उपयुक्तता

	ब्राह्मणी भूमि	क्षत्रिया भूमि	वैश्या भूमि	शूद्रा भूमि
1. वर्ण	श्वेत	रक्त	हरित-पीत (हरा-पीला)	कालापन लिए हुए
2. गन्ध	देसी घी के समान	रक्त के समान	मधु अथवा अन्न के समान	मदिरा के समान
3. स्वाद	मधुर	कसैला	अम्लीय	कड़वा
4. स्पर्श	सुखद	कठोर	कोमल	अति कठोर
5. उत्पादकता	इस प्रकार की भूमि पर कुश, दुर्ग एवं हवनीय वृक्ष होते हैं।	इस प्रकार की भूमि पर शर रक्तवर्णीय पुष्प व वृक्ष होते हैं।	इस प्रकार की भूमि पर अन्न एवं फलयुक्त वृक्षादि होते हैं।	इस प्रकार की भूमि पर झाड़ झंखाड़ आदि होते हैं।
6. भूमि का फल	इस प्रकार की भूमि सर्वप्रकार से आध्यातिम्क सुखदायक होती है।	इस प्रकार की भूमि राज्य, वर्चस्व एवं पराक्रम बढ़ाने वाली होती है।	इस प्रकार की भूमि धन—धान्य व ऐश्वर्य में वृद्धि करने वाली होती हैं।	इस प्रकार की भूमि कलह व झगड़ा करने वाली होती है।
7. उपयुक्ता	इस प्रकार की भूमि विद्यालय, मन्दिर, धर्मशाला, साहित्यक संस्थाओं आदि के निर्माण के लिए उपयुक्त है।	इस प्रकार की भूमि राजकीय कार्यलय, सैनिक छावनी, शस्त्रागार सैनिक कालोनी आदि निर्माण हेतु उपयुक्त है।	इस प्रकार की भूमि दुकानों व व्यापारियों के निवास आदि के निर्माण आदि के निर्माण के के लिए उपयुक्त होती है।	यह भूमि निवास हेतु त्याज्य हैं।

(1) भूमि के प्रकारानुसार भूमि की जांच

भूमि को वास्तु शास्त्र में चार प्रकार की बताया गया है—

(क) ब्राह्मणी भूमि,

(ख) क्षत्रिया भूमि,

(ग) वैश्या भूमि,

(घ) शूद्रा भूमि।

भूमि के प्रकारानुसार भूमि की जाँच, फल एवं उपयुक्ता

(2) भूमि के पृष्ठानुसार भूमि की जाँच

भूखण्ड का मध्य भाग पृष्ठ भाग कहलाता है। पृष्ठानुसार भूमि को निम्नलिखित चार प्रकारों में बाँटा गया है—

(क) गजपृष्ठ भूमि

(ख) कूर्मपृष्ठ भूमि

(ग) दैत्यपृष्ठ भूमि

(घ) नागपृष्ठ भूमि

(क) गजपृष्ठ भूमि—जब भूखण्ड की भूमि दक्षिण, पश्चिम, नैर्ऋत्य तथा वायव्य कोण में ऊँची हो एवं ईशान कोण में नीची हो, तो ऐसी भूमि गजपृष्ठ भूमि कहलाती है। इस प्रकार के भूखण्ड पर निवास करने से **धनलाभ तथा स्वास्थ्य एवं आयु में वृद्धि होती है।**

(ख) कूर्मपृष्ठ भूमि—जब भूखण्ड की भूमि चारों ओर नीची एवं मध्य में ऊँची हो, तो ऐसी भूमि कूर्मपृष्ठ भूमि कहलाती है। इस प्रकार के भूखण्ड पर निवास करने से उत्साह, **सुख एवं धन-धान्य में वृद्धि होती है।**

(ग) दैत्यपृष्ठ भूमि—जब भूखण्ड की भूमि ईशान, आग्नेय तथा पूर्व दिशा में ऊँची, परन्तु पश्चिम दिशा में नीची हो तो ऐसी भूमि दैत्यपृष्ठ भूमि कहलाती है, इस प्रकार के भूखण्ड पर निवास करने से धन एवं पारिवारिक सुख-शान्ति की हानि होती है, साथ ही परिवार में भी किसी सदस्य की कमी हो जाती है।

(घ) नागपृष्ठ भूमि—जब भूखण्ड की भूमि पूर्व एवं पश्चिम दिशा में लम्बी, उत्तर पूर्व दक्षिण दिशा में ऊँची तथा बीच में नीची हो, तो ऐसी भूमि नागपृष्ठ भूमि कहलाती है। इस प्रकार के भूखण्ड पर निवास करने से मृत्यु-भय, जनहानि, पत्नी तथा बच्चे की हानि तथा शत्रुवृद्धि होती है।

(3) भूमि के ढालानुसार भूमि की जाँच :

भूखण्ड अथवा निर्मित भवन हेतु भूमि के ढाल के बारे में निम्न ग्रन्थों में निम्नलिखित नियम वर्णित हैं—

(क) यदि *भूमि का ढाल पूर्व दिशा की ओर* हो, तो ऐसी भूमि पर निवास

करने वाले व्यक्ति को *लक्ष्मी का लाभ होता है, साथ ही उसके वंश की वृद्धि* होती है।

(ख) यदि भूमि का ढाल ईशान कोण की ओर हो, तो ऐसी भूमि पर निवास करने वाले को ज्ञान एवं सुख-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।

(ग) यदि *भूमि का ढाल उत्तर दिशा की ओर* हो, तो ऐसी भूमि पर निवास करने वाले की *आयु, वंश एवं धन में वृद्धि* होती है।

(घ) यदि *भूमि का ढाल वायव्य कोण की ओर* हो, तो ऐसी भूमि पर निवास करने वाले को व्यर्थ के विवाद घेर लेते हैं एवं परिवार में रोग घर कर लेता है। परिवार में किसी सदस्य की अकाल-मृत्यु भी हो सकती है, परन्तु वायव्य कोण में ढाल होने के साथ यदि *नैर्ऋत्य कोण एवं आग्नेय कोण ऊँचा* है, तो वायव्य कोण का ढाल *शुभफलदायक* होता है।

(च) यदि भूमि का ढाल पश्चिम दिशा की ओर हो, तो ऐसी भूमि पर निवास करने वाले को अनेक व्याधियाँ घेर लेती हैं। सन्तान की मृत्यु हो सकती है अथवा सन्तान का विकास अथवा सन्तान-वृद्धि रुक जाती है।

(छ) यदि भूमि का ढाल नैर्ऋत्य कोण की ओर हो, तो ऐसी भूमि पर निवास करने वाले को धन एवं मान की हानि होती है। साथ ही घर में आकस्मिक मृत्यु, बुरे-व्यसन एवं दीर्घकालीन रोग का प्रभाव रहता है।

(ज) यदि *भूमि का ढाल दक्षिण दिशा की ओर* हो, तो ऐसी भूमि पर निवास करने वाले का *मरण अथवा मारक योग* होता है अथवा दीर्घकालीन भयंकर रोग के कारण अत्यन्त व्यय होता है।

(झ) यदि *भूमि का ढाल आग्नेय कोण की ओर* हो, तो ऐसी भूमि पर निवास करने वाले को अग्निभय, दुष्ट प्रकृति एवं शत्रुभय होता है, परन्तु यदि *भूखण्ड का नैर्ऋत्य कोण ऊँचा* है, तो यह भूखण्ड *शुभफलदायक* होता है।

भूमि का शल्य दोष :

भूमि के अन्दर दोषपूर्ण वस्तुओं अर्थात् शल्य का उपस्थित होना ही भूमि का शल्य दोष कहलाता है।

जिन दोषपूर्ण वस्तुओं के सम्पर्क से द्रव्य, क्षेत्र एवं वातावरण आदि दूषित होते हैं, वास्तु शास्त्र में उन पदार्थों को शल्य की संज्ञा दी है।

भूमि में पाये जाने वाले मुख्य शल्य खोपड़ी, हड्डी, चर्म, बाल, राख, कोयला, लोहा आदि पदार्थ हैं। मनुष्य की खोपड़ी और हड्डियों को इन सब शल्यों में सबसे निकृष्ट और अत्यन्त हानिकारक शल्य माना गया है।

सम्पूर्ण भवन वास्तु अनुसार बनाकर निवास करने वाले को जब समस्त शुभफल प्राप्त न होकर लक्षण प्रदर्शित हों, तो भूमि में शल्य दोष समझना चाहिए—

सामाजिक कलह, धार्मिक उन्माद, राजभय, अग्निभय, रोगप्रकोप, मित्रनाश, शत्रुवृद्धि, धन, पशु एवं सन्तान-हानि, परिवार में अकाल मृत्यु एवं अकारण पारिवारिक क्लेश आदि।

शल्य-दोष निवारण का उपाय :

यूँ तो वास्तु शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में शल्य-शोधन अर्थात् शल्य-दोष निवारण के अनेक उपाय वर्णित हैं, परन्तु यहाँ हम शल्य-दोष निवारण का एक ऐसा उपाय बता रहे हैं जिसको कि भवन-निर्माण से पूर्व अथवा निर्मित भवन में भी किया जाना सम्भव है।

भवन-निर्माण से पूर्व भूखण्ड में अथवा निर्मित भवन में उस स्थान पर जहाँ कि खाली स्थान छोड़ा गया हो अर्थात् पूर्व अथवा उत्तर दिशा में गृह-स्वामी अथवा गृह-स्वामिनी की लम्बाई के बराबर गहराई तक गड्ढा खोदकर उसमें से मिट्टी को भवन स्थान पर नई एवं शुद्ध मिट्टी भरकर गड्ढा पाट देने से शल्योद्धार हो जाता है। यह कार्य अनटोके करें अर्थात् यह गड्ढा क्यों खोदा जा रहा है अथवा इसकी मिट्टी क्यों फिंकवाई जा रही है यह रहस्य आप स्वयं तक ही रखें। यदि कोई अन्य व्यक्ति इस रहस्य को पूर्व से ही जानता है, तो उसे भी यह सलाह दी जाती है कि वह इस कार्य के दौरान टोका-टाकी करके अपने ज्ञान का प्रदर्शन न करे।

यदि शल्य भूखण्ड में दस फुट से अधिक गहराई में है, तो यह शल्य दोष प्रभावी नहीं होता है।

भवन में पृथ्वी तत्व :

इस अध्याय के प्रारम्भ में यह चर्चा की गई है कि पृथ्वी तत्व के लिए दक्षिण-पश्चिम अर्थात् नैर्ऋत्य कोण निर्धारित है। यह सभी तत्वों से स्थिर है, अत: यह स्थान सभी स्थिर वस्तुओं के लिए निश्चित है।

निर्मित भवन में पृथ्वी तत्व का मुख्य नियम यही है ***दक्षिण-पश्चिम कोण को अन्य सभी दिशाओं एवं विदिशाओं की अपेक्षा ऊँचा एवं भारी रखना होता है।***

भवन के बाहर चारदीवारी की दीवार उत्तरी एवं पूर्वी दीवार की अपेक्षा मोटी एवं भारी होनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं है तो इस चारदीवारी के निकट भारी सामान रख सकते हैं।

कबाड़घर, अर्थात् घर की अनुपयोगी वस्तुओं को रखने के लिए बनाया गया कमरा, भवन के बाहर चारदीवारी से सटा हुआ दक्षिण-पश्चिम कोण में बनाया जाना चाहिए, इससे भी पृथ्वी तत्व अपनी निर्धारित दिशा में स्थापित होता है।

भवन के अन्दर गृहस्वामी का शयनकक्ष नैर्ऋत्य कोण में होना चाहिए। चूँकि नैर्ऋत्य कोण स्थिरता का प्रतीक है, अत: गृहस्वामी इस भवन में दीर्घकाल तक निवास करता है। यदि गृह-स्वामी कोई टूरिंग से सम्बन्धित व्यापर अथवा नौकरी करता है, तो उसे अपना शयनकक्ष नैर्ऋत्य कोण में कदापि नहीं बनाना चाहिए। उसके लिए वायव्य कोण में शयनकक्ष बनाना उचित होगा, क्योंकि वायव्य कोण वायु अर्थात् गति का प्रतीक है एवं टूरिंग कार्य के लिए गति आवश्यक है।

भवन में शौचालय अथवा स्नानघर ठीक नैर्ऋत्य कोण में न होकर नैर्ऋत्य कोण से दक्षिण अथवा पश्चिम दिशा की ओर होने चाहिए।

भवन में टी०वी०-एन्टीना नैर्ऋत्य कोण में ही लगा होना चाहिए ताकि भवन का यह भाग, भवन के अन्य भागों से अधिक ऊँचा रहे।

निष्कर्षत: वास्तु के अनुसार पृथ्वी तत्व सम्बन्धी मुख्य निमय निम्नानुसार हैं—

(1) शूद्रा भूमि निर्माण कार्य के लिए अनुपयुक्त है, परन्तु यदि हम कोई कॉलोनी अथवा नगर की योजना बना रहे हैं तो इस प्रकार की भूमि पर सफाई कर्मचारी, चपरासी, मशीनमैन आदि के लिए निवास बना सकते हैं, परन्तु इन भवनों में वास्तु के अन्य नियमों का पालन अवश्य करें।

(2) भूमि दक्षिण, पश्चिम, नैर्ऋत्य तथा वायव्य कोण में ऊँची एवं ईशान कोण में नीची हो अथवा भूमि चारों ओर नीची एवं मध्य में ऊँची हो, तो ऐसी भूमि पर निवास करने से धनलाभ तथा स्वास्थ्य एवं आयु में वृद्धि होती है।

(3) भूमि का ढाल पूर्व, ईशान अथवा उत्तर दिशा की ओर होना चाहिए।

(4) भूखण्ड में शल्य-दोष का निवारण किया जाना चाहिए।

(5) भूखण्ड का आकार शुभ होना चाहिए अर्थात् वर्गाकार, आयताकार, वृत्ताकार, भद्रासन, चतुष्कोणाकार आदि।

(6) भूखण्ड में विस्तार यदि है, तो यह मात्र ईशान कोण ही होना चाहिए।

(7) भूखण्ड में ह्रास यदि है, तो यह मात्र ईशान कोण में ही होना चाहिए।

(8) भूखण्ड की एक दिशा में (दक्षिण दिशा के अतिरिक्त) मार्ग होना शुभफलदायक होता है। दक्षिण में मार्ग मिश्रित फल प्रदान करता है।

(9) भूखण्ड की दो दिशाओं उत्तर व पूर्व तथा उत्तर व पश्चिम दिशा में मार्ग होना शुभफलदायक होता है। दो विपरीत दिशाओं में मार्ग मिश्रित फल प्रदान करते हैं।

(10) भूखण्ड के चारों ओर मार्ग होना शुभफल प्रदान करता है, परन्तु व्यावहारिक दृष्टिकोण से इस भवन में सुरक्षा की उचित व्यवस्था होनी आवश्यक है।

(11) मार्ग वेधं न हो। वैसे उत्तर दिशा में यदि मार्ग वेध ईशान कोण की ओर, पूर्व दिशा में यदि मार्ग वेध ईशान कोण की ओर, पश्चिम दिशा में वायव्य कोण की ओर मार्ग वेध हो, दक्षिण दिशा में यदि नैर्ऋत्य कोण की ओर हो, तो वह शुभफलदायक होता है। पूर्व दिशा में मार्ग वेध होने पर भी भूखण्ड को वेध दोषयुक्त नहीं माना जाता, अत: इस भूखण्ड पर निर्माण किया जा सकता है।

(12) बन्द गली अन्तिम भूखण्ड भी निर्माण-कार्य के लिए अनुपयुक्त है। शेष नियम निर्मित भवन में पृथ्वी तत्व के अन्तर्गत बताए गए हैं।

जल मूलभूत आधार :

जल-जीवन का मूलभूत आधार है जल के अभाव में जीवन गतिहीन-सा हो जाता है। मनुष्य हो पशु हो अथवा पेड़-पौधे, जल सभी के जीवन का आधार है, जल के बिना इहलोक अथवा परलोक, कहीं भी जीवन सम्भव नहीं है।

इसीलिए हमारे प्राचीन धार्मिक, वैदिक ग्रन्थों में जलदान करने के पुण्य का वर्णन करते हुए कहा गया है कि एक कूप बनवाने से मनुष्य का अग्निष्टोम के तुल्य फल प्राप्त होता है और यही कूप यदि मरुभूमि में बनवाया जाये, तो अश्वमेघ यज्ञ के बराबर फल प्राप्त होता है, बनाये हुए कूप में यदि निरन्तर ऐसा जल रहे, जिससे लोगों को तृप्ति होती रहे, तो बनवाने वाले के सम्पूर्ण दुष्कर्म नष्ट हो जाते हैं। यदि वह कूप निर्जल प्रदेश में बनवाया जाये, तो मनुष्य को चिरकाल तक स्वर्ग जैसा सुख प्राप्त होता है। सामान्यजन के लिए कुआँ, वापी, जलाशय एवं प्याऊ निर्माण जैसा पुण्यतम कार्य कराकर सज्जन एवं पुण्यवान् पुरुष अपना इहलोक एवं परलोक दोनों सुधार लेते हैं।

गर्मियों के दिनों में रेलवे स्टेशनों पर अक्सर अच्छे-अच्छे घरों के सुसभ्य एवं सम्पन्न व्यक्ति हाथ में पानी से भरी बाल्टी और जग लेकर ट्रेन के रुकने पर यात्रियों को मुफ्त पानी बाँटते हैं और यात्री के पानी के पात्र को भी भरते हैं, ऐसा करते समय उनके चेहरे अथवा मन में यात्री पर अहसान की भावना नहीं होती वरन् वे यह कार्य अपना पुनीत कर्त्तव्य समझकर ही करते हैं।

जलदान ऐसा पुण्य कार्य है जिसके करने से सम्पूर्ण पापों का नाश हो जाता है, तब गृहस्थ संचालन के लिए तो जल की व्यवस्था करना गृह-स्वामी के लिए और भी महत्वपूर्ण और आवश्यक है।

वास्तु शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में जल से सम्बन्धित वास्तु विश्लेषण करते समय भूखण्ड के निकट एवं भूखण्ड में जलस्रोत, भवन में आने वाले शुद्ध जल एवं भवन से बाहर जाने वाले अशुद्ध जल के प्रवाह की दिशा के बारे मे विचार किया जाता है।

भूखण्ड के निकट स्थित जलस्रोत :

आवास निर्माण करने से पूर्व जल की समुचित व्यवस्था करनी होती है, क्योंकि भवन निर्माण में निरन्तर जल की आवश्यकता बनी रहती है एवं निर्माण के उपरान्त भवन में निवास करने पर भी जल का प्रयोग दैनिक जीवन में आवश्यक ही है। इसके लिए जलस्रोत के रूप में कूप, नलकूप आदि का निर्माण किया जाता है अथवा पाइप लाइन से कनेक्शन लिया जाता है।

भूखण्ड के निकट स्थित जलस्रोत की दिशा का भवन के निवासियों पर पड़ने वाला प्रभाव निम्नानुसार है—

(1) यदि भवन के पूर्व, उत्तर-पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर नदी या तालाब है, तो भवन के स्वामी के लिये शुभ होता है और भविष्य में अच्छे परिणाम

मिलते हैं, परन्तु नदी या नाले के जल का प्रवाह पश्चिम से पूर्व की ओर अथवा दक्षिण से उत्तर की ओर होना चाहिए।

(2) यदि भवन के पश्चिम उत्तर-पश्चिम में पश्चिम की ओर नदी अथवा नाला हो, तो भवन अच्छे परिणाम नहीं देता।

(3) भवन के दक्षिण, उत्तर-पश्चिम एवं दक्षिण-पूर्व में दक्षिण दिशा की ओर तालाब होना भी शुभफलदायक नहीं माना गया है।

अर्थात् भूखण्ड के निकट उत्तर, पूर्व एवं उत्तर-पूर्व के अतिरिक्त किसी अन्य दिशा अथवा विदिशा में किसी भी प्रकार का जलस्रोत—नदी, नाला, तालाब, हैण्डपम्प, कुआँ आदि नहीं होना चाहिए। बहते जल के जलस्रोत के जल का प्रवाह पश्चिम से पूर्व की ओर अथवा उत्तर से दक्षिण की ओर होना ही शुभ फल प्रदान करता है।

भवन में जलस्रोत :

भूखण्ड में किस स्थान पर किस दिशा में कूप निर्माण किया जाए, इसके बारे में विभिन्न ग्रन्थों में चर्चा की गई है। कूप अथवा नलकूप के निर्माण हेतु ईशान कोण उत्तम माना गया है, परन्तु भवन के ईशान कोण एवं भूखण्ड के ईशान कोण को मिलाने वाली रेखा पर स्थित नहीं होना चाहिए। कूप अथवा नलकूप इस रेखा से हटकर पूर्व अथवा उत्तर दिशा में स्थित होने पर उत्तम फल प्रदान करते हैं। कूप अथवा नलकूप ईशान कोण और उत्तर दिशा एवं ईशान कोण एवं पूर्व दिशा के मध्य बनाए जा सकते हैं। इनके अतिरिक्त किसी अन्य दिशा अथवा विदिशा में बनाया गया कूप अथवा नलकूप अशुभफलदायक होता है।

गृह के मुख्यद्वार के समक्ष एवं भवन के बीच में कूप अथवा नलकूप का निर्माण भी शुभफलदायक नहीं होता है।

(1) ईशान विदिशा में कुआँ बनाने से पुष्टता एवं सर्व प्रकार के ऐश्वर्य की वृद्धि होती है।

(2) पूर्व में कुआँ अथवा नलकूप खोदना हो, तो थोड़ा-सा उत्तर दिशा की तरफ खोदना चाहिये, इससे धन-सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

(3) आग्नेय विदिशा में कुआँ बनाने से पुत्र अथवा संतान को विपत्तियों का सामना करना होता है।

(4) दक्षिण में कुआँ अथवा नलकूप होने पर स्त्री-कष्ट होता है अर्थात् गृह-स्वामी की पत्नी की मृत्यु अथवा उससे बिछोह हो जाता है।

(5) नैर्ऋत्य विदिशा में कुआँ होने से गृह-स्वामी के लिए अनिष्टकारक होता है।

(6) पश्चिम दिशा में कुएँ का होना कुछ ग्रन्थों में सम्पत्तिदायक बताया गया है।

(7) वायव्य विदिशा में कुआँ बनाने से शत्रुभय में वृद्धि होती है एवं मित्र-सुख में ह्रास होता है।

(8) उत्तर दिशा में पूर्वी भाग की ओर बनाया गया कुआँ खोदना हो, तो उस तरफ खोदना चाहिये। ऐसा कुआँ सुखदाता होता है।

अर्थात् नलकूप अथवा कुआँ बनाने हेतु सर्वोत्तम दिशा उत्तर-पूर्व (ईशान कोण) ही है, परन्तु ध्यान रखें कि भवन के ईशान कोण की सीध में नहीं होना चाहिए। इससे थोड़ा पूर्व अथवा उत्तर की ओर हटकर बनाया गया हो।

यदि पाइप लाइन से जल भवन में ले जाना हो, तो भी पाइप लाइन ईशान कोण से उत्तर अथवा पूर्व की ओर से ही भवन में जानी चाहिए।

भवन में पानी की टंकी :

भवन में जल संग्रहण हेतु पानी की टंकी बनाई जाती है। यह टंकी भूमिगत हो सकती है अथवा भवन की छत पर भी। यदि पानी की टंकी भूमिगत बनाना चाहते हैं, तो वायव्य, नैर्ऋत्य, आग्नेय और दक्षिण दिशा में कदापि न बनवाएँ, क्योंकि ये स्थान अनुपयुक्त हैं। भूमिगत पानी की टंकी के लिए सर्वोत्तम स्थान ईशान कोण है। उत्तर, पश्चिम व पूर्व दिशा में भी भूमिगत टंकी होनी उपयुक्त है। पानी की टंकी छत पर बनानी हो, तो वायव्य व उत्तर दिशा के मध्य या वायव्य व पश्चिम दिशा के मध्य बनाएँ, ये स्थान उपयुक्त हैं। ईशान, आग्नेय ओर नैर्ऋत्य कोण में छत पर कदापि टंकी न बनवाएँ।

जल के प्रवाह के विषय में यह ध्यान रखा जाता है कि भवन में जल ईशान कोण से भवन में आए एवं भवन का समस्त जल ईशान कोण से भवन से बाहर गिरे। कुआँ, ट्यूबवैल, स्वीमिंग पूल आदि ईशान कोण में रहना चाहिए। स्नानगृह का जल भी उत्तर-पूर्व में जाना चाहिए। उत्तर-पूर्व (ईशान) कोण जल के लिए सर्वथा उपयुक्त होता है। शुद्ध साफ जल उत्तर-पूर्व में परन्तु, सैप्टिक टैंक और सीवर लाइन का प्रवाह या स्थापना उत्तर-पश्चिम में होनी चाहिए।

भवन-निर्माण हेतु भूमि का जल-बहाव तथा फल :

जल बहाव की दिशा	फल
पूर्वी ईशान में	सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि
ईशान में	अत्यन्त लाभप्रद
पूर्व में	शुभफलदायक
उत्तरी ईशान में	वंशवृद्धि, धनागम
उत्तर में	अत्यन्त लाभप्रद
उत्तरी वायव्य में	घरेलू तनाव
वायव्य में	अन्न-नाशकारक
पश्चिमी वायव्य में	शत्रुवृद्धि, स्वास्थ्य एवं अर्थ-क्षति
पश्चिम में	शोक-संतापदायक
पश्चिमी नैर्ऋत्य	पुरुष के लिए स्वास्थ्य एवं चरित्र का पतन
नैर्ऋत्य में	क्लेश, रोग, धनहानि तथा मृत्युकारक, सदैव चोरी का भय

दक्षिणी नैर्ऋत्य	स्त्रियों के लिए मृत्युभय, स्वास्थ्य ह्रास
दक्षिण में	मृत्युभय
दक्षिणी आग्नेय में	पुत्रनाश, दुर्घटना एवं चोरी का भय
आग्नेय में	अग्नि से हानि
पूर्वी आग्नेय में	वंशक्षय एवं दुर्घटना भय

निष्कर्षत: वास्तु के अनुसार जल तत्व से सम्बन्धित मुख्य नियम यही है कि जलस्रोत ईशान कोण से पूर्व अथवा उत्तर की ओर हटकर होना चाहिए। भवन में जल ईशान कोण से ही आना चाहिए एवं स्नानगृह आदि का जल भवन से बाहर भी ईशान कोण में जाना चाहिए, परन्तु सैप्टिक टैंक और सीवर लाइन का प्रवाह या स्थापना उत्तर-पश्चिम में होनी चाहिए।

वायु दिशा :

वास्तु शास्त्र में वायु तत्व के लिये उत्तर-पश्चिम अर्थात् वायव्य कोण निश्चित है। वायु की महत्ता जीवन में सर्वविदित है। समस्त प्राणियों के जीवन का आधार वायु है। अत: भवन में वायु का उचित संचरण आवश्यक है। भवन में निवास करने वालों को निरन्तर शुद्ध वायु (प्राण वायु) मिलती रहे, तो ही वे स्वस्थ रह सकते हैं। स्वच्छ वायु का सेवन स्वास्थ्य एवं दीर्घायु के लिए महत्वपूर्ण तत्व होता है। भवन-निर्माण के समय भवन में वायु संचरण के लिए उचित स्थान निर्धारित करना चाहिए। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखकर ही वास्तु शास्त्र का यह सिद्धान्त बना कि पूर्व दिशा एवं उत्तर दिशा का भाग सर्वाधिक खुला रहे तथा सतह नीची रहे, जिससे प्रात:काल से सूर्य का प्रकाश एवं शुद्ध वायु निरन्तर प्राप्त होती रहे। इसके लिए पश्चिम-उत्तर दिशा जो वायव्य कोण के नाम से जाना जाता है। वायु के लिये विशेष रूप से ग्राह्य करना चाहिए। भवन के पश्चिम और उत्तर दिशाओं में वायु सेवन का स्थान रखना चाहिए। वायु तत्व की प्राप्ति इस दिशा की ओर से प्राप्त करना स्वास्थ्य तथा प्राणी और भवन की दीर्घायु की लिए आवश्यक है।

वायु संचरण हेतु भवन में दरवाजों, खिड़कियों, रोशनदानों, बरामदा, बालकॉनी, डैजर्ट कूलर, रूम कूलर, एयर कण्डीशनर आदि के दिशा-निर्धारण हेतु वास्तु शास्त्र के नियम वर्णित हैं।

दरवाजे की स्थिति :

भवन हो, फैक्ट्री हो अथवा दुकानें, सबसे प्रथम महत्वपूर्ण प्रश्न है मुख्यद्वार या प्रवेश द्वार किस ओर, किस दिशा में तथा किस स्थान पर बनवाया जाये? मुख्यद्वार की दिशा का निर्धारण वस्तुत: भूखण्ड के मार्ग के अनुसार किया जाता है, परन्तु उस दिशा में कौन-सा भाग मुख्यद्वार के लिए उपयुक्त है यह वास्तु शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में वर्णित है।

वास्तु शास्त्र के एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ ज्योतिर्निबन्ध में वर्णित विधि अनुसार जिस दिशा में मुख्यद्वार का निर्माण करना हो, उस दिशा के विस्तार को नौ भागों

में विभाजित करके पाँच भाग दाहिनी ओर से एवं तीन भाग बायीं ओर से छोड़ कर बचे भाग से द्वार बनाना चाहिए। वास्तु शास्त्र में प्रत्येक भूखण्ड एवं भवन में कुछ स्थान शुभ होने के कारण ग्राह्य एवं कुछ स्थान अशुभ होने के कारण त्याज्य माने जाते रहे हैं। प्रत्येक भूखण्ड के चारों ओर चार दिशाएँ—पूर्व, पश्चिम, मध्य बिन्दु से लेकर ईशान कोण तक का भाग उच्चकोटि का अर्थात् शुभ एवं मध्य बिन्दु से आग्नेय कोण तक का भाग निम्नकोटि अर्थात् अशुभ माना जाता है। इसी प्रकार भूखण्ड के दक्षिणी विस्तार के मध्य बिन्दु से लेकर आग्नेय कोण तक का भाग उच्च कोटि का अर्थात् शुभ एवं मध्य बिन्दु से नैर्ऋत्य कोण तक का भाग निम्न कोटि अर्थात् अशुभ माना जाता है। भूखण्ड के पश्चिमी विस्तार के मध्य बिन्दु से लेकर वायव्य कोण तक का भाग उच्चकोटि अर्थात् अशुभ माना जाता हैं। भूखण्ड के पश्चिमी विस्तार के मध्य बिन्दु से लेकर वायव्य कोण तक का भाग उच्चकोटि का अर्थात् शुभ एवं मध्य बिन्दु से नैर्ऋत्य कोण तक का भाग निम्नकोटि अर्थात् अशुभ माना जाता है। भूखण्ड के उत्तरी विस्तार के मध्य बिन्दु से लेकर ईशान कोण तक का भाग उच्चकोटि का अर्थात् शुभ एवं मध्य बिन्दु से वायव्य कोण तक का भाग निम्नकोटि अर्थात् अशुभ माना जाता है। अर्थात् उत्तरी ईशान, पूर्वी ईशान, दक्षिणी आग्नेय और पश्चिमी वायव्य उच्चकोटि के एवं उत्तरी वायव्य, पूर्वी आग्नेय, दक्षिणी और पश्चिमी नैर्ऋत्य निम्नकोटि के माने ज़ाते हैं।

उच्चकोटि के मुख्यद्वार :

उत्तरी ईशान में मुख्यद्वार उच्चकोटि का होता है, उत्तरी ईशान कोण में द्वार बनाने से भवन के स्वामी को अनेक प्रकार से लाभ पहुँचता है।

उत्तरी ईशान कोण में मुख्यद्वार बनाने से भारी सामान स्वत: ही दक्षिण-पश्चिम दिशा में रखा जाएगा, अत: उत्तर-पूर्व का भाग दक्षिण-पश्चिम से हल्का रहेगा। यह वास्तु शास्त्र का आधारभूत सिद्धान्त है, जो कि अत्यन्त शुभफलदायक होता है।

पूर्वी ईशान में मुख्यद्वार उच्चकोटि का होता है, पूर्वी ईशान कोण में द्वारा बनाने से भवन में निवास करने वाले अत्यन्त मेधावी, ज्ञानवान् और विद्वान होते हैं। पूर्वी ईशान कोण में मुख्यद्वार होने से भारी सामान दक्षिण में रखा जाता है और आने-जाने का रास्ता उत्तर की ओर होता है जोकि शुभ फलदायक होता है।

दक्षिणी आग्नेय में मुख्यद्वार उच्चकोटि का होता है। दक्षिण आग्नेय कोण में मुख्यद्वार बनाने से शुभ फल प्राप्त होते हैं, क्योंकि इस भवन में फर्नीचर आदि भारी सामान दक्षिण दिशा में और आने-जाने का मार्ग पूर्व दिशा में रहता है जो कि सर्व प्रकार कल्याणकारी होता है।

पश्चिमी वायव्य में मुख्यद्वार उच्चकोटि का होता है। इस कोण में मुख्यद्वार बनाना शुभ फलदायक एवं कल्याणकारी होता है।

निम्नकोटि के मुख्यद्वार :

पूर्वी आग्नेय में मुख्यद्वार निम्नकोटि का होता है। इस ओर द्वार बनाने के

परिणाम अच्छे नहीं होते हैं। दक्षिणी नैर्ऋत्य में मुख्यद्वार निम्नकोटि का होता है। दक्षिणी नैर्ऋत्य कोण में मुख्यद्वार बनाना आर्थिक हानिकारक व स्त्रियों के लिए अस्वास्थ्यकारी होता है। अत: दक्षिणी नैर्ऋत्य कोण में द्वार कदापि न बनाएँ।

पश्चिमी नैर्ऋत्य में मुख्यद्वार निम्नकोटि का होता है। इस कोण में मुख्यद्वार बनाने से आर्थिक हानि के साथ-साथ परिवार के मुखिया की पदावनति भी हो जाती है। अत: पश्चिमी नैर्ऋत्य कोण में द्वारा कदापि न बनाएँ।

उत्तरी वायव्य में मुख्यद्वार निम्नकोटि का होता है। इस कोण में मुख्यद्वार बनाने से भवन में निवास करने वालों की मन:स्थिति सदैव अस्थिर एवं चंचल बनी रहती है।

मुख्यद्वार सम्बन्धी नियम :

(1) भूखण्ड की चारदीवारी का मुख्यद्वार यदि दक्षिण में है, तो भवन का मुख्यद्वार घर के दक्षिणी ओर के कक्ष में इस प्रकार बनवाया जाए कि मुख्यद्वार कक्ष के पूर्वी अर्द्धभाग में पड़े। यह स्थिति भवन के निवासियों को शुभदायी रहेगी।

(2) भूखण्ड की चारदीवारी का मुख्यद्वार पश्चिम में है, तो भवन का मुख्यद्वार भवन के पश्चिमी ओर बने कक्ष में इस प्रकार बनवाया जाए कि मुख्यद्वार कक्ष के उत्तरी अर्द्धभाग की ओर पड़े, इससे मुख्यद्वार और प्रभावी स्थिति में होगा और धन-धान्य-समृद्धि की वृद्धि होती रहेगी।

(3) भूखण्ड की चारदीवारी का मुख्यद्वार यदि उत्तर में है, तो उस भवन का मुख्यद्वार भवन के सबसे उत्तरी छोर पर बने कक्ष में बनवाया जाए। ध्यान रखें कि द्वार उस कमरे के पूर्वी अर्द्धभाग में पड़ता हो, यह अत्यन्त शुभफलदायी रहेगा।

(4) भूखण्ड की चारदीवारी का मुख्यद्वार पूर्व में है, तो भवन का मुख्यद्वार घर के पूर्वी छोर के कक्ष में बनवाया जाना चाहिए। ध्यान रखें कि भवन का मुख्यद्वार उस कक्ष के उत्तरी अर्द्धभाग में पड़ता हो। इस प्रकार बनाये गये द्वार से मुख्यद्वार अत्यन्त प्रभावी स्थिति में आ जाता है और शुभ और कल्याणकारी परिणाम देता है।

(5) घर के अन्दर द्वार, खिड़कियाँ तथा आलमारियाँ एक-दूसरे के सामने बनवायें।

(6) घर में द्वार बनवाते समय ध्यान रखें कि द्वार की चौखटें घर की मुख्य दीवार से लगती हुई न हों, दीवार और द्वार की चौखट के बीच कम से कम चार इन्च का अन्तर अवश्य ही रहे।

(7) यदि घर का मुख्यद्वार पश्चिम में हो, तो पूर्व दिशा में एक द्वार बनवाना अनिवार्य है। इसी प्रकार घर का मुख्यद्वार यदि दक्षिण में स्थित है, तो उस घर में उत्तर में एक द्वार बनवाना अनिवार्य है, यह सिद्धान्त आवासीय

भवनों के लिए आवश्यक है, इससे घर में निवास करने वालों की गति पूर्वोन्मुखी एवं उत्तरोन्मुखी रहेगी।

(8) द्वार के ऊपर द्वार तथा द्वार के सामने द्वार व्यय कराने वाला और दरिद्रता देने वाला होता है।

(9) जिस मकान में बहुत-से द्वार और आलिन्द हों वहाँ द्वार का कोई नियम नहीं होता अर्थात् चाहे जिस ओर दरवाजे बनवायें।

(10) द्वार में लगाए गए कपाट (किवाड़) दो पल्लों वाले एवं अन्दर की ओर खुलने वाले होने चाहिएँ।

(11) कपाट (किवाड़) अपने आप खुल जायें या बन्द हो जायें तो भयदायक होता है। चौखट एक ओर छोटा दूसरी ओर बड़ा हो जाये, तो भी अशुभ फलदायक होता है।

भवन में द्वारों की संख्या :

कुछ लोग भ्रमित रहते हैं कि भवन में दरवाजों की संख्या सम होनी चाहिए अथवा विषम। द्वार यदि मकान में उपरोक्त बताए स्थान पर वास्तु अनुसार बनाये गये हैं, तो उनकी संख्या सम हो या विषम, कोई अन्तर नहीं पड़ता। अत: द्वारों की संख्या को महत्व देना आवश्यक नहीं है, परन्तु यदि भूखण्ड की उत्तर दिशा में खाली स्थान न छोड़कर घर में गिनती के आठ द्वारों का निर्माण कराया गया हो, तो ऐसी स्थिति में सम संख्याएँ फल नहीं देतीं।

इसी प्रकार यदि किसी भवन में कुएँ, चूल्हे एवं सीढ़ियों का निर्माण शास्त्र सम्मत करवाया गया हो और दरवाजों की संख्या भी सम संख्या में रखी गयी हो, तो इसका फल शुभ नहीं होता। यदि भवन में कुएँ, चूल्हे तथा सीढ़ियाँ शास्त्र के अनुसार बनवाये गये हों, तो दरवाजों की संख्या चाहे सम हो या विषम कोई अन्तर नहीं पड़ेगा, इसी प्रकार भवन में खिड़कियाँ ओर आलमारियों की संख्या चाहे सम संख्या में हो अथवा विषम में, इससे कोई दोष नहीं होता।

वास्तु शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में भवन में द्वारों की संख्या सम्बन्धी दिए गए मुख्य निर्देश निम्नानुसार हैं—

(1) यदि किसी भवन में एक ही प्रवेश द्वार बनाना हो, तो शुभ फल प्राप्त करने के लिए पूर्व दिशा अथवा उत्तर दिशा में बनवाना चाहिए, परन्तु यदि भवन दक्षिणमुखी अथवा पश्चिममुखी है, तो उसमें कभी एक ही प्रवेश द्वार न बनवाएँ।

(2) यदि भवन में दो प्रवेश द्वार बनाने हों, शुभफल प्राप्त करने के लिए द्वारों को पूर्व दिशा एवं दक्षिण दिशा, पूर्व दिशा एवं पश्चिम दिशा अथवा उत्तर दिशा व दक्षिण दिशा में ही बनवाना चाहिए। दक्षिण दिशा एवं पश्चिम दिशा में दो द्वार कदापि नहीं बनवाने चाहिएँ अर्थात् भवन में एक प्रवेश द्वार पूर्व दिशा अथवा उत्तर दिशा में होना अनिवार्य है।

(3) यदि भवन में तीन दिशाओं में द्वार बनान हो, तो उत्तर दिशा व पूर्व दिशा मे तो द्वार बनाना आवश्यक है। तीसरा द्वार सुविधानुसार पश्चिम अथवा दक्षिण दिशा में बनाया जा सकता है।

(4) यदि भवन में चारों दिशाओं में द्वार बनाने हैं तो इसी अध्याय में पूर्व में बताए गए उच्चकोटि के स्थान पर ही प्रवेश द्वार बनाना चाहिए। किसी भी परिस्थिति में नैर्ऋत्य कोण में मुख्यद्वार न बनवाएँ।

द्वार वेध :

भवन के मुख्यद्वार के समक्ष यदि कोई बाधा होती है तो उसे द्वारबोध की संज्ञा दी जाती है, जैसे किसी द्वार के समझ खम्भा, सीढ़ी, द्वार, कोण, बड़ा पेड़, मशीन या कोल्हू आदि। भवन के मुख्यद्वार के समक्ष द्वारवेध नहीं होना चाहिए, परन्तु यदि द्वारवेध भवन की ऊँचाई के दोगुनी से अधिक दूरी पर स्थित है तो द्वारवेध दोष प्रभावी नहीं होता है।

वास्तु शास्त्रों में वर्णित द्वारवेध के मुख्य नियम निम्न हैं—

(1) यदि मार्ग सीधा मुख्यद्वार पर आकर समाप्त होता है, तो यह भी द्वारवेध कहलाता है एवं यह गृह-स्वामी के लिए अशुभ होता है।

(2) मुख्यद्वार के समझ बड़े वृक्ष का होना भी द्वारवेध माना गया है, यह बच्चों के लिए दोषकारक होता है।

(3) मुख्यद्वार के समझ सदैव कीचड़ का रहना भी द्वारवेध माना गया है, यह शोककारक होता है।

(4) मुख्य द्वार के समक्ष सदैव पानी का बहता रहना द्वारवेध माना गया है, यह धन का अपव्यय कराने वाला होता है।

(5) मुख्य द्वार के समक्ष कूप होना द्वारवेध माना गया है, इससे मिर्गी रोग हो सकता है।

(6) मुख्य द्वार के समक्ष किसी देवता का मन्दिर होना भी द्वारवेध माना गया है, इससे गृह-स्वामी विनाश की ओर अग्रसरित होता है।

भवन एवं वेध वस्तु के मध्य राजमार्ग (सड़क) होने से, तो वेधदोष प्रभावी नहीं होता। भवन के पीछे अथवा बगल में वेध वसतु होने से भी वेधदोष प्रभावी नहीं होता, मात्र वेध होता है। जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है भवन की ऊँचाई के दोगुनी दूरी पर स्थित वेध वस्तु का प्रभाव भी भवन की ऊँचाई के दोगुनी दूरी पर स्थित वेध वस्तु का प्रभाव भी भवन पर निवास करने वालों पर नहीं पड़ता है।

भवन में खिड़कियाँ :

वायु का संचरण भवन में खिड़कियों के माध्यम से होता है। खिड़कियों से सम्बन्धित वास्तु शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों में वर्णित मुख्य नियम निम्नासार हैं—

(1) खिड़कियाँ द्वार के समक्ष होनी चाहिएँ जिससे चुम्बकीय चक्र पूर्ण हो सके, इससे गृह में सुख-शान्ति रहती है।

(2) खिड़कियों का निर्माण सन्धि भाग में नहीं होना चाहिए।

(3) पश्चिमी, पूर्वी और उत्तरी दीवारों पर खिड़कियों का निर्माण शुभ होता है।

(4) उत्तर दिशा में अधिक खिड़कियाँ परिवार में धन-धान्य की वृद्धि करनी हैं। लक्ष्मी व कुबेर की कृपादृष्टि बनी रहती है।

(5) खिड़कियाँ सदैव दीवार में ऊपर-नीचे न बनाकर एक ही लाइन में बनानी चाहिए।

(6) गृह में खिड़कियों का मुख्य लक्ष्य, भवन में शुद्ध वायु के निरन्तर प्रवाह के लिए होता है।

(7) खिड़कियाँ अन्दर की ओर खुलनी चाहिए।

(8) खिड़कियाँ दो पल्लों की बनाएँ। एक या तीन पल्ले की नहीं।

(9) खिड़कियाँ सम संख्या (2, 4, 6) में बनानी चाहिएँ। ऐसा शास्त्र वचन है, परन्तु लेखक के अनुभव के अनुसार इस नियम का कोई आधार प्रतीत नहीं होता एवं विषम संख्या में खिड़कियाँ होने से भवन-स्वामी अथवा भवन के निवासियों को कोई विशेष परेशानी का सामना करते नहीं पाया गया, परन्तु खिड़कियों से सम्बन्धित शेष नियमों का पालन अवश्य करना चाहिए।

(10) वायु प्रदूषण से बचने के लिए घर में जिन दिशाओं से शुद्ध वायु प्रवेश करती है उसके विपरीत दिशाओं में एग्जास्ट फैन लगाना चाहिए। खिड़कियों की संख्या सम होनी चाहिए।

भवन में बालकानी एवं बरामदा :

भवनों में बालकॉनी एंव बरामदे का स्थान महत्वपूर्ण होता है। बालकॉनी, बरामदा, टैरेस आदि भवन में खुले स्थान के अन्तर्गत आते हैं।

भूखण्ड में उत्तर, पूर्व एवं उत्तर-पूर्व (ईशान) में खुला स्थान अधिक रखना चाहिए जबकि दक्षिण और पश्चिम में खुला स्थान कम होना चाहिए। इसी प्रकार भवन में बालकॉनी एवं बरामदे के रूप में उत्तर-पूर्व में खुला स्थान सर्वाधिक होना चाहिए ताकि उसमें रहने वाले सुख-समृद्धि पा सकें। टैरेस व बरामदा खुले स्थान के अन्तर्गत आता है, अतएव सुख-समृद्धि हेतु उत्तर-पूर्व में ही निर्मित करना चाहिए, क्योंकि प्रात:कालीन सूर्य-रश्मियाँ एवं प्राकृतिक हवा खिड़कियों के साथ-साथ बरामदे एवं बालकॉनी से भी प्राप्त होती है।

बालकॉनी एवं बरामदे का स्थान भूखण्ड की दिशा पर निर्भर है, परन्तु प्रयास यह होना चाहिए कि प्रात:कालीन सूर्य-रश्मियों का प्रवेश एवं प्राकृतिक हवा का बहाव घर में प्राप्त होता रहे। यदि दोमन्जिला भवन है, तो पूर्व एवं उत्तर दिशा की ओर भवन की ऊँचाई कम रखनी चाहिए एवं ऊपरी मंजिल में बालकॉनी अथवा बरामदा उत्तर व पूर्व दिशा में ही बनाना चाहिए।

अग्नि दिशा :

जीवन में पाँच तत्वों के मध्य अग्नि का अपना विशेष ही महत्व है। अग्नि का तात्पर्य ताप, तेज अथवा ऊर्जा से है। अग्नि के आविष्कार से पूर्व मानव कच्चा खाना अर्थात् कच्चे शाक, कन्द, मूल एवं मांस का सेवन किया करता था। जब से मानव ने अग्नि का आविष्कार किया तब से वह अपने भोजन को पका कर खाने लगा है।

वास्तु शास्त्र में अग्नि की दिशा दक्षिण-पश्चिम अथवा आग्नेय कोण निर्धारित है अर्थात् भवन में अग्नि, ताप एवं ऊर्जा सम्बन्धी समस्त कार्यों में ही करना चाहिए; जैसे—रसोईघर भवन के आग्नेय कोण में, रसोईघर में चूल्हा रसोईघर के आग्नेय कोण में स्थापित होना चाहिए। इसी प्रकार स्नानघर में गीजर आदि विद्युत सम्बन्धी उपकरण स्नानघर के आग्नेय कोण में रखे जाने चाहिएँ।

आकाश दिशा :

वास्तु शास्त्र में आकाश से आशय भवन आँगन से है। भवन का मध्य भाग ब्रह्मा का स्थान माना गया है जिसे वास्तु शास्त्रानुसार खुला रखा जाता है। खुले आकाश से नैसर्गिक ऊर्जाओं का प्रभाव निर्बाध रूप से प्राप्त होता रहता है। प्राय: यह सुनने में आता है कि अमुक भवन में प्रेत-बाधा एवं प्रेत-आवास है। इसके कारण भवन में आकाश एवं वायु तत्व का सही निर्धारण नहीं होता है। यह वैज्ञानिक आधार है। मानसिक रोग में भी यही कारण दृष्टिगोचर होते देखे गये हैं। जिस प्रकार ब्रह्माण्ड में आकाश तत्व की प्रधानता है, उसी प्रकार भवन में भी इसकी महत्ता को विस्मृत नहीं कर सकते हैं। भवन में आँगन रखने से खुला आकाश तो मिलता ही है, सूर्य की किरणें व हवा का आवागमन भी सम्यक् ढंग से होता है, जिससे भवन में वास करने वालों को भी लाभ होता है। भवन में कक्षों की ऊँचाई कक्ष के अनुपात से निर्धारित करनी चाहिए ताकि वायु का प्रवाह सही बना रहे। अधिक एवं न्यून ऊँचाई के कारण आकाश तत्व प्रभावित होता है। दक्षिण-पश्चिम में भवन ऊँचा रखा जाता है, ऐसा करने से दोपहरबाद की सूर्य की हानिकारक रश्मियों से रक्षा होती है और वर्षा ऋतु में पश्चिम की ओर से प्रवाहित होने वाली हानिकारक वायु से भी रक्षा होती है।

अनेक विद्वानों का यह तर्क है कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश इस सृष्टि पर सर्वत्र व्याप्त हैं। किसी भी दिशा से इनका उपभोग किया जा सकता है। यह सत्य है कि समस्त संसार में इन सभी तत्वों का संचरण होता है, परन्तु उपभोग को लेने के लिए जिस तत्व की जो दिशा शास्त्रों में निर्धारित है, उसी ओर से प्राप्त करने में आसानी होती है जैसे आकाश तत्व की प्राप्ति हेतु आकाश दिशा अर्थात् ऊँचाई की ओर ही आश्रित होना होगा न कि पृथ्वी की ओर। इस प्रकार भवन-निर्माण में जिन तत्वों को, जिन दिशाओं से ग्रहण करने के निर्देश हैं, उसी के अनुसार भवन में उन्हीं दिशाओं से ग्रहण करने से ही लाभ होगा अन्यथा हानि होनी निश्चित ही है।

किसी भी भवन, नगर, शहर, देश आदि की वास्तु विश्लेषण करते समय मात्र दिशाओं एवं इन्हीं पाँच तत्वों का विशेष ध्यान रखा जाता है। इस अध्याय में हमने वास्तु शास्त्र के विभिन्न ग्रन्थों के अनुसार पंच तत्वों एवं उनकी महत्ता के साथ-साथ इनके लिए निश्चित दिशाएँ एवं इनका भवन में प्रयोग बताया है।





भूमिपूजन व कलश स्थापना विधि

यथाविधि गौर-गणेश-कलश-नवग्रह-षोडशमातृका पूजन करें। (कलश प्रतिष्ठा पद्धति से यह पूजन कराया जा सकता है) इसके बाद--नाग-कच्छप आदि की पूजा क्रमश: निम्न प्रकार से करें—

(नाग-कच्छप पूजन करें)

नवग्रह से उत्तर पूर्व (ईशान कोण में) रोली या हल्दी से अष्टदल कमल बनाकर एक ताँबे का लोटा स्थापित करें। लोटे के गले में रक्षा सूत्र (कलावा) लपेट दें। लोटे के भीतर सोने का साँप तथा चाँदी का कछुआ रख दें। अक्षत लेकर कच्छप तथा नाग का आह्वान करें—

ॐ वास्तोस्पते प्रति जानीह्यस्मान् स्वावेषा अनमीवो भवान:।
यत्वे महे पतितन्नायुष सुशन्नो भवद् द्विपदे शं चतुष्पदे।।

ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो येके च पृथिवी मनु।
ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्य: सर्पेभ्यो नम:।।
ॐ यस्य कुर्मो गृहे हविस्तमग्ने वर्धया त्वम्।
तस्मै देवा अधिब्रवन् नयञ्च ब्रह्मणस्पति:।।

ॐ कूर्मायनम:।।

ॐ खड्गो वैष्वदैव: श्वा कृष्ण: कर्णो गर्दभस्तरक्षुस्ते।
रक्षसामिन्द्राय सूकर: सिद्ध ॐ हो मारुत: कृकलास:
पिपका शकुनिस्ते शख्याय विष्वेषां देवानां पृषत:।।

ॐ वाराहाय नम:।।

ॐ मनोजूतिर्जषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन् तनो
त्वरिष्टं यज्ञ ॐ समिमन्दधातु।
विश्वेदेवा स इह मादयन्तामोम् प्रतिष्ठ।

अक्षत लोटे में छोड़ दें। यथाविधि कच्छप और नाग की पूजा करें। लोटे में पंचरत्नी छोड़ दें। एक कटोरी में घी-लावा-दूध-दूब (सेवार) लेकर निम्न मन्त्र पढ़ें—

ॐ सर्वलक्षण सम्पन्न सर्वेश कमलाधिप।
अर्धम् गृहाण देवेश विष्णुरूप नमोऽस्तुते।।
हिमकुन्द प्रतीकाश नागानन्त महाफणीन्।
शंखचूड़ महापद्म गृहाणधर्म् नमोऽस्तुते।।

कटोरी का दूध लावा आदि लोटे के भीतर छोड़ दें। अक्षत-पुष्प लेकर प्रार्थना करें—

ॐ वास्तोष्पतिम् जगद्देवं सर्वसिद्धि विधायकम्।
स्थापयामि देवेशं वास्तुदेवं महाबलम्।।
देवदेवं गणाध्यक्षं पाताल तल वासिनम्।
शान्तिकर्तार मीशानं तं वास्तुं प्रणतोऽस्म्यहम्।।
कूर्मदेवं नमस्तुभ्यं सर्वकामफलप्रद।
गृहेऽस्मिन् स्थिरोभूत्वा मम स्वस्तिकरो भव।।
त्रिविक्रमाया मित विक्रमाय महावराहाय सुरोत्तमाय।
श्रीशार्ङ्गचक्रासिकगदाधराय नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद।।

अक्षत फूल लोटे पर चढ़ा दें—और उसका मुख ताँबे की कटोरी से बन्द कर दें।

1. ॐ ब्राह्मणे नम:।2. ॐ विष्णवे नम:।3. ॐ रुद्राय नम:।4. ॐ ईश्वराय नम:।5. ॐ सदाशिवाय नम:।।

पूजा करके हाथ में जल लेकर छोड़ दें और हाथ जोड़ लें—

अनेन पूजनेन देवा: प्रीयन्तां न मम।
क्षेममकर्तार: पुष्टिकर्तार: वरदा भवन्तु।।

(स्थलपूजन करें)

जिस स्थान पर नींव रखनी हो उस स्थान पर कुशा या आम्र पल्लव से जल छिड़कें—

ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन।
महेरणाय चक्षसे।
योव: शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेहन:।।
उशतीरिव मातर:।
तस्मा अरंग मामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपोजन यथा च न:।।

अक्षत लेकर भूमि की प्रार्थना करें—

ॐ आगच्छ सर्वकल्याणि वसुधे लोकधारिणि।
उद्धृतासि वराहेण सशैल वन कानने।।
कूर्मपृष्ठोपरिस्थां च शुक्लवर्णां चतुर्भुजाम्।
शंखपद्मधरां चक्र शूलयुक्तां धरां भजे।।
ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशनी।
यच्छान: शर्म सप्रथा:।

अक्षत भूमि पर छोड़कर भूमि की पूजा करें। तीन बार जल छोड़ें। गन्ध-अक्षत-फूल-धूप-दीप-नैवेद्य-जल-पान-सुपारी-पैसा चढ़ा दें। एक कटोरी में जल-गन्ध-अक्षत-फूल लेकर निम्न मन्त्र पढ़ें—

ॐ पृथिवी ब्रह्म दत्तासि काश्यपेनाभिवन्दिता।
रक्षसामिन्द्राय सूकर: सिद्ध ॐ हो मारुत: कृकलास:

पिप्पका शकुनिस्ते शख्याय विश्वेषां देवानां पृषत:।।
ॐ वाराहाय नम:।।
ॐ मनोजूतिर्जषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन् तनो
त्वरिष्टं यज्ञ ॐ समिमन्दधातु।
विश्वेदेवा स इह मादयन्तामोम् प्रतिष्ठ।

अक्षत लोटे में छोड़ दें। यथाविधि कच्छप और नाग की पूजा करें। लोटे में पंचरत्नी छोड़ दें। एक कटोरी में घी-लावा-दूध-दूब (सेवार) लेकर निम्न मन्त्र पढ़ें—

ॐ सर्वलक्षण सम्पन्न सर्वेश कमलाधिप।
अर्धम् गृहाण देवेश विष्णुरूप नमोऽस्तुते।।
हिमकुन्द प्रतीकाश नागानन्त महाफणीन्।
शंखचूड़ महापद्म गृहाणार्धम् नमोऽस्तुते।।

कटोरी का दूध-लावा आदि लोटे के भीतर छोड़ दें। अक्षत-पुष्प लेकर प्रार्थना करें—

वास्तोष्पतिम् जगद्देवं सर्वसिद्धि विधायकम्।
स्थापयामि देवेशं वास्तुदेवं महाबलम्।।
देवदेवं गणाध्यक्षं पाताल तल वासिनम्।
शान्तिकर्तार मीशानं तं वास्तुं प्रणतोऽस्म्यहम्।।
कूर्मदेवं नमस्तुभयं सर्वकामफलप्रद।
गृहेऽस्मिन् स्थिरोभूत्वा मम स्वस्तिकरो भव।।
त्रिविक्रमाया मित विक्रमाय महावराहाय सुरोत्तमाय।
श्रीशार्ङ्गचक्रासिगदाधराय नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद।।

अक्षत फूल लोटे पर चढ़ा दें और उसका मुख ताँबे की कटोरी से बन्द कर दें।

गृहाणार्धमिमं देवि प्रसन्ना वरदा भव।।
वसुधे हेम गर्भासि शेषस्योपरि शायिनि।
तव पृष्ठे वसाम्येतत् गृहणार्धम् धरित्रि मे।।

यह पढ़कर कटोरी का जल आदि भूमि पर चढ़ा दें। अक्षत:-पुष्प लेकर प्रार्थना करें—

ॐ उपचाराणि मांस्तुभ्यं ददामि परमेश्वरि।
भक्तया गृहाण देवेशि त्वामहं शरणं गत:।।
ब्रह्मणानिर्मिते देवि विष्णुना शंकरेण च।
पार्वत्या चैव गायत्र्या स्कन्दं वै श्रवणेन च।।
देवेन पूजिते देवि धर्मस्य विजिगीषया।
सौभाग्यं देहि पुत्रांश्च धनवृद्धिकरीभव।।
यथाचलो गिरिर्मेरु रावास मचलं कुरु।
आरोपितं गृहाधारं तथा त्वमचलाभव।
क्षेमकर्त्री तुष्टिकर्त्री पुष्टिकर्त्री वरदात्रीभव।

एक खैर की खूँटी लेकर अपने सामने रखें और प्रार्थना करें—

ॐ यथा चलो गुरुर्मेरु रावा समचलं मम।
आरोपितं गृह स्तंभ तथा त्व मचलं कुरु।।

(कन्नी-वसूली की पूजा करें)

मिस्त्री (राजगीर) से कन्नी-दसूली लेकर गंगाजल से धोकर उसमें रक्षासूत्र (कलावा) बाँधकर अपने सामने रखें। अक्षत लेकर प्रार्थना करें—

ॐ अज्ञानात् ज्ञानतो वापि दोषा स्युश्च यदुद्भवा:।
नाशयत्व हितान् सर्वान् विश्वकर्मन् नमोऽस्तुते।।

कन्नी-वसूली की पूजा करके, प्रार्थना करें—

ॐ त्वष्ट्रा त्वम् निर्मित: पूर्वं लोकानां हितकाम्यया।
पूजितोऽसि खनित्रि त्वं सिद्धिदो भव नो ध्रुवम्।।

यथाशक्ति गोदान-स्वर्णदान आदि कर सकें तो करें और अब पुरोहित यजमान को तिलक करें—

ॐ आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गण:।
तिलकंतु प्रयच्छन्तु धर्मकामार्थं सिद्धये।।
ॐ येन बद्धोबली राजा दानवेन्द्रो महावल:।
तेन त्वां प्रतिवघ्नामि रक्षे माचल माचल।।

विसर्जन—फूल लेकर हाथ जोड़ें—

ॐ यज्ञेन यज्ञ मय जन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमा न्यासन्।
तेहनांक महिमान: सचन्त यत्र पूर्वे साध्या: सन्ति देवा:।।
प्रमादात् कुर्वतां कम प्रच्यवेता ध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद् विष्णो: सम्पूर्णम् स्यादिति श्रुति:।।
यस्य स्मृत्या च नमोक्तया तपोयज्ञ क्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्।।
सर्व परिपूर्ण काम: विष्णुम् स्मरेत्।
श्री विष्णु: ! श्री विष्णु:! श्री विष्णु:।।

यजमान को फल-फूल और अक्षत निम्न मन्त्र पढ़ते हुए दें—

ॐ मन्त्रार्था: सफला: सन्तु पूर्णा: सन्तु मनोरथा:।
शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणा मुदयस्तव।।

गृहस्वामी जिस आसन पर बैठा है, उसके नीचे जल छोड़कर उस जल को माथे से लगाकर व आसन से उठकर ब्राह्मणों एवं बड़े-बूढ़ों के चरण-स्पर्श करें।

वास्तुशान्ति विधि :

वास्तु शास्त्र के सिद्धान्तों के अनुरूप भवन-निर्माण करके उसमें रहने जाने से पूर्व वास्तुशान्ति करानी चाहिए और शुभ मुहूर्त में गृह प्रवेश करना शुभफलप्रद रहता है। वास्तुपूजा के बिना भवन में रहने पर बाधाएँ, कष्ट व अशान्ति रहती है।

गृह प्रवेश के दिन से पूर्व शुभ दिन में गृहस्वामी को सपत्नीक पूर्व या उत्तराभिमुख

शुभासन पर पूजा सामग्री सहित बैठकर सर्वप्रथम स्वयं की शुद्धि करनी चाहिए।

इसके लिए ताँबे या चाँदी के लोटे से थोड़ा शुद्ध जल अपने बायें हाथ की हथेली पर रखकर दाहिने हाथ से अंगूठा, मध्यमा और अनामिका जोड़कर, बायें हाथ की हथेली पर रखे जल को अपने ऊपर छिड़कें। जल छिड़कते समय अधोलिखित मन्त्र को पढ़ें—

ॐ अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
य स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स ब्रह्माभ्यन्तार: शुचि:।।

(अब आसन शुद्धि करें)

ॐ पृथ्वी त्वया धृता लोका देवित्वं विष्णुनां धृता।
त्वं च धारय यां देवि पवित्रं कुरु चरणनम्।।

आसन शुद्धि के बाद पत्नी को दाहिने हाथ पर विठाना चाहिए। मांगलिक तिलक करके पति–पत्नी का ग्रन्थि बन्धन करें—

ॐ यदाबध्नन दाक्षायण्य हिरण्यॐ श्तानीकाय सुमनस्यमाना:।
तन्म आ बन्धामि शतं शारदायायुष्य जरदष्टि यर्थासम्।।

(इसके बाद आचमन करें)

तीन बार जल से आचमन करें—

प्रथम बार	—	ॐ केशवाय नम:	(आचमन करें)
दूसरी बार	—	ॐ नाराणाय नम:	(आचमन करें)
तीसरी बार	—	ॐ माधवाय नम:	(आचमन करें)

आचमन के बाद निम्नलिखित मन्त्र बोलकर हाथ शुद्ध करें—

ॐ हृषिकेशाय नम: ।

उत्तरे श्रीपति: रक्षेत् तु महेश्चर:।।
ऊर्ध्व रक्षतु धाता वोऽधोऽनन्तश्चा रक्षतु।
एवं दशदिशो रक्षेद् वासुदेवो जनार्दन:।।
रक्षाहीनं तु यत्स्थानं रक्षत्वीशो ममाद्रिधृक्।
यदत्र संस्थितं भृत स्थानमाश्रित्य सर्वद्रा।।
स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु।
अपक्रामन्तु ते भूता ये भूता भूतले स्थिता:।।
ये भूता विघ्नकर्त्तारस्ते नश्यन्तु: शिवाज्ञया।
अपक्रमान्तु भूतानि पिशाचा: सर्वतो दिशम्।।
सर्वेषामविरोधेन पूजाकर्म समारभे।

बाद में उक्त दोने को गणेशजी के निकट रख दें। उक्त कलावे को हवन करने के बाद आचार्य यज्ञकर्त्ता के दायें हाथ में तथा उसकी पत्नी के बायें हाथ में बाँध दें।

स्वस्तिवाचनम् :

आचार्य यज्ञकर्त्ता के हाथ में अक्षत दे दें। पूजाकर्त्ता बायें हाथ पर अक्षत को रखकर दाहिने हाथ से प्रत्येक शान्तिपाठ के अन्त में गणेशजी पर अक्षत छोड़ें—

ॐ स्वस्ति नः इन्द्रो वृद्धश्रवाऽस्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ।।
पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः।
अग्निर्जिह्वा मनवः सूर चक्षसो विश्वेनो देवा अवसागमन्निह।।
भद्रं कर्णेभि शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गस्तुष्टुवार्ठ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।।
शतमिन्नु शरदो सन्ति देवा यत्रा नश्क्रा जरसं तनूनाम्।
पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः।।
अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः।
विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजना अदितिर्जातमदिर्जनित्वम्।।
दीर्घायु त्वाय बलाय वर्चसे सुप्रजोत्वाय।
सहसा अथो जीव शरदः शतम्।।
ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षर्ठ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
शान्तिरोषधयः शान्तिः।वनस्पतयः शान्तिः विश्वेदेवाः शान्तिः
ब्रह्म शान्तिः सर्वर्ठ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।
सुशान्तिर्भवतु।

किसी भी उपासना से पूर्व गणेश जी का स्मरण कार्य की निर्विघ्न समाप्ति के लिए आवश्यक है; इसलिए गणेश उपासना करें। आइये, अब गणेश उपासना की चर्चा करें।

(गणेश उपासना)

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः।।
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि।।

भाव यही है कि एक दिन गजकर्णधारी लम्बोदर आप विघ्न हरने वाले हो! आपका नाम उच्चारण अनिष्टनाशक है।

(अब उपासना श्रद्धा सहित करें!)

ॐ गणपतये नमः।

आसनं समर्पयामि।	(आसन दें।)
पाद्यं समर्पयामि।	(पाद्य अर्पित करें।)
अर्घ्यं समर्पयामि।	(अर्घ्य समर्पित करें।)
आचमनीयं समर्पयामि।	(आचमन हेतु जल समर्पित करें।)
स्नानं समर्पयामि।	(स्नान हेतु जल समर्पित करें।)
गन्धं समर्पयामि।	(सुगन्धित द्रव्य से तिलक करें।)
धपं-दीपं दर्शयामि।	(धूप-दीप अर्पण करें।)
नैवेद्यं समर्पयामि।	(प्रसाद चढ़ाएँ।)
दक्षिणा समर्पयामि।	(दक्षिणा चढ़ाएँ।)

नमस्करोमि। (नमस्कार करें।)

गणेश उपासना के बाद कलशस्थापनम् सम्बन्धी उपासना करें। अब कलश स्थापन की रीति बतायेंगे।

कलशस्थापनम् :

चन्दनादि से अष्टदलकमल बनाकर, उस पर धान रखकर कलश स्थापन करें।

भूमि स्पर्श करें—

विश्वाधारासि धरणी शेषनागोपरि स्थिरता।
घृता चादिवराहेण सर्वकामफलप्रदा।।

कलश स्पर्श करें—

हेमरूपादि सम्भूतं ताम्रजं सुदृढं नवम्।
कलशं धौतकल्माषं छिद्रवर्णविवर्जितम्।।

कलश में जल भरें—

जीवन सर्वजीवानां पावनं पावनात्मकम्।
बीजं सर्वौषधीनां च तज्जलं पूरयाम्यहम्।।

सूत्र लपेटें—

सूत्रं कार्पाससम्भूतं ब्राह्मणा निर्मितं पुरा।
येन बद्धं जगत्सर्वं वेष्टनं कलशस्य च।।
कलश औषधि सर्ववृक्षाणां तृणगुल्मलतास्तथा।
दूर्वासर्पसंयुक्ता सर्वौषधयः पुनातृ माम्।।

कलश पुष्प—

विविधपुष्पसंजातं देवानां प्रीतिवर्धनम्।
क्षिप्तं यत्कार्यसम्भूतं कलशे निक्षिपाम्यहम्।।

कलश पंच पल्लव—

अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षन्यग्रोधपल्लवास्तथा।
पञ्च ते पल्लवाः प्रोक्ताः कलशे निक्षिपाम्यहम्।।

पंचरत्न—

कनकं कुलिशं नीलं पद्मरागं च मौक्तिकम्।
एतानि पञ्चरत्नानि कलशे निक्षिपाम्यहम्।।

पूंगीफल—

पूंगीफलमिदं दिव्यं पवित्रं पापशोधनम्।
पुत्रसौख्यादि-फलदं कलशे निक्षिपाम्यहम्।।

हिरण्यगर्भ—

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्तपुण्यफलदं कलशे प्रक्षिपाम्यहम्।।

सप्तमृत्तिका—

अश्वस्थानाद्गजस्थानाद्वल्मीकात्सङ्गमाद्ह्रदात्।
राजद्वाराच्च गोगोष्ठाद् मृदमानीय निक्षिपेत्।।

पूर्णपात्र—

विधानं सर्ववस्तुनां सर्वकार्यार्थसाधनम्।
पूर्णस्तु कलशो येन पात्रं तत्कलशोपरि।।

नारियल में लाल वस्त्र लपेट कर पूर्णपात्र पर रखें।

श्रीफल—

श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्।
इष्णन्निषाणामुं म इषाणा सर्वलोकम्म इषाण।।

वरुण आह्वान—

अस्मिन् कलशे वरुणंसाङ्गपरिवारंसायुधंसशक्तिकमावाहयामि।
ॐ भूर्भुवः स्वः भो वरुण! इहागच्छ इह तिष्ठ। स्थापयामि पूजयामि।

देवावाहन—

सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः।
आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः।।
कलशस्य मुख विष्णु कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।।
कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो हयथर्वणः।।
अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।
अत्र गायत्री सावित्री शान्ति पुष्टिकारी तथा।
आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारका।।

यज्ञकर्त्ता को चाहिए कि कलशाधिष्ठित आवाहित देवताओं की पंचोपचार या षोडशोपचार से पूजा करें।

प्रार्थना—

देवदानव-संवादे मथ्यमाने महोदधौ।
उत्पन्नोऽसि यदा कुम्भ! विधृतो विष्णुना स्वयम्।।
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिरताः।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।।
शिवः स्वयं त्वमेवाऽसि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः।
आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः।।
त्वयि विष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः।
त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमीहे जलोद्भव।।
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा।।
प्रसन्नो भव। वरदो भव। अनया पूजया
वरुणाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्तां न मम।

इति कलशस्थापनम्।

नवग्रहस्थापनम्

श्वेत वस्त्र बिछाकर उस पर नव-कोष्ठ बनायें। मध्य में सूर्य की पूजा करें, सूर्य से दक्षिण भाग में मंगल (सूर्य व मंगल लाल), अग्नि कोण में चन्द्रमा (श्वेत), ईशान कोण में बुध (हरा), उत्तर में गुरु (पीला), पूर्व में शुक्र (श्वेत), सूर्य से पश्चिम में शनि (काला), नैर्ऋत्य कोण में राहु (काला), वायव्य कोण में केतु (काला), ग्रह के अनुसार वेदी का निर्माण करें। ग्रह देव के अनुसार ध्वजा दें। नीचे लिखे मन्त्र द्वारा स्थापन व पूजन करें—

संकल्प—

अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अद्य वास्तुशान्त्याख्ये कर्माणि आदित्यादि ग्रहाणां सपरिवाराणां स्थापनप्रतिष्ठां पूजनं च करिष्ये।

(मध्य में सूर्य) कलिङ्गदेशोद्भव काश्यपगोत्र सूर्य ॐ भूर्भुवः स्वः सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ। सूर्याय नमः। (अग्निकोण में) यमुनातीरदेशोद्भव आत्रेयगोत्र ॐ भूर्भवः स्वः चन्द्र इहागच्छ इह तिष्ठ। सोमाय नमः (दक्षिण में) अवन्तिदेशोद्भव भारद्वाजगोत्र ॐ भूर्भवः स्वः भौम इहागच्छ इह तिष्ठ। भौमाय नमः (ईशान कोण में) मगधदेशोद्भव आत्रेयगोत्र ॐ भूर्भुवः स्वः बुध इहागच्छ इह तिष्ठ। बुधाय नमः (उत्तर में) सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरस गोत्र ॐ भूर्भवः स्व बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ। बृहस्पतये नमः (शुक्र पूरब में) भोजकटदेशोद्भव ॐ भूर्भुवः स्वः शुक्र इहागच्छ इह तिष्ठ। शुक्राय नमः (शनि, पश्चिम में) राष्ट्रदेगोद्भव काश्पगोत्र ॐ भूर्भुवः स्वः शनैश्चर इहागच्छ इह तिष्ठ। शनैश्चराय नमः (राहु, नैर्ऋत्य कोण में) राठिनदेशोद्भद पैठिनसगोत्र ॐ भूर्भुवः स्वः राहो इहागच्छ इह तिष्ठ। राहवे नमः (वायव्य कोण में) अन्तर्वेदिदेशोद्भव जैमिनिगोत्र ॐ भूर्भुवः स्वः केतो इहागच्छ इह तिष्ठ, केतवे नमः।

पञ्चोपचार से नवग्रहों की पूजा करने के पश्चात् प्रार्थना करें—

ब्रह्मा मुरारिस्त्रि पुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्रः शनि-राहु-केतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु।।

अनया पूजया सूर्यादि-नवग्रहाः प्रीयन्तां न मम—यह कहकर अक्षत छोड़ें।

इति नवग्रहस्थापन समाप्तम्।

दशदिक्पालपूजनम् :

जहाँ वेदी बनी हो, वहाँ वेदी पर ही कलश स्थापन करके पूर्ण पात्र के ऊपर दिक्पालों की पूजा करें। वेदी न बनी हो तो कलश के अग्रभाग में आम्राल्लव पर नीचे लिखे मन्त्र से पूजा करें—

ॐ लं इन्द्राय सपरिवाराय नमः। ॐ वां वह्ने सपरिवाराय नमः।
ॐ यं यमाय सपरिवाराय नमः। ॐ नै नैर्ऋत्याय सपरिवाराय नमः।
ॐ वं वरुणाय सपरिवाराय नमः। ॐ वां वायवे सपरिवाराय नमः।
ॐ कुबेराय सपरिवाराय नमः। ॐ ऐशानाय सपरिवाराय नमः।
ॐ बं ब्राह्मणे सपरिवाराय नमः। ॐ अं अनन्ताय सपरिवाराय नमः।



पञ्चोपचार या दशोपचार से पूजा करें। नीचे लिखे वाक्य का उच्चारण करके पुष्प और अक्षत छोड़ें—

अनया पूजया दशदिक्पालदेवताः प्रीयन्ताम्। प्रसन्ना वरदा भवन्तु कल्याणमस्तु।

इति दशदिक्पालपूजनम्।

गौर्यादिमातृकापूजनम्

यज्ञकर्त्ता को चाहिए कि गौर्यादि मातृका वेदी पर रक्त वस्त्र बिछाकर (16) सोलह कोष्ठ बनाये। यज्ञकर्त्ता हाथ में अक्षत, पुष्प और पूंगीफल लेकर प्रत्येक मन्त्र द्वारा वेदी के कोष्ठ में रखे।

गौरी — हेमाद्रितनयां देवीं वरदां भैरवप्रियाम्।
लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्।।

पद्मा — पद्माभां पद्मवदनां पद्मनाभां परिस्थिताम्।
जगत्प्रियां पद्मवासां पद्मामावाहयाम्यहम्।।

शची — दिव्यरूपां विशालाक्षीं शुक्लकुण्डलधारिणीम्।।
रक्तमुक्ताद्यलङ्कारां शचीमावाहयाम्यहम्।।

मेधा — मेधां विष्णुप्रियां नित्यं जगन्मोहनकारिणीम्।
मम यज्ञे महाभागां मेधामावाहयाम्यहम्।।

सावित्री — जगत्सृष्टिकरीं धात्रीं देवीं प्रणवमातृकाम्।
देवगर्भामृतुमयीं सावित्रीं स्थापयाम्यहम्।।

विजया — सर्वास्त्रधारिणीं देवीं सर्वाभरणभूषिताम्।
सर्वदेवनुतां ध्यातां विजयां स्थापयाम्यहम्।।

जया — सुरारिमथिनीं देवीं देवानामभयप्रदाम्।
त्रैलोक्यवन्दितां देवीं जयामावाहयाम्यहम्।।

देवसेना — मयूरवाहनां देवीं खड्गशक्तिधनुर्धराम्।
आवाहये देवसेनां तारकासुरमर्दिनीम्।।

स्वधा — कव्यमादाय सततं पितृभ्यो या प्रयच्छति।
पितृलोकार्चितां देवीं स्वधामावाहयाम्यहम्।।

स्वाहा — हविर्गृहीत्वा सततं देवेभ्यो या प्रयच्छति।
तां दिव्यरूपां वरदां स्वाहामावाहयाम्यहम्।।

मात् — आवाहयाम्यहं मात्: सकला लोकपूजित:।
सर्वकल्याणरूपिण्यो वरदा दिवयभूषिता:।।

लोकमातृ — आवाहयेल्लोकमातृर्जयन्ती: प्रमुखा शुभा:।
नानाभीष्टप्रदा: शान्ता: सर्वलोकहितावहा:।।

घृति — सर्वहर्षकारीं देवीं भक्तानामभयप्रदाम्।
हर्षोत्फुल्लास्यकमलां घृतिमावाहयाम्यहम्।।

पुष्टि — पोषयन्तीं जगत्सर्वं स्वदेहप्रभवायव्ययम्।
बहुपुष्टिकरीं देवीं पुष्टिमावाहयाम्यहम्।।

तुष्टि — आवाहयामि सन्तुष्टिं सूक्ष्मवस्त्रान्वितां शुभाम्।
सन्तोषो भविता चाऽत्र रक्षणायाऽध्वरे शुभे।।

कुलदेवी — आत्मनो देवतां देवीमैश्वर्यसुखदायिनीम्।
वंशवृद्धिकरीं नित्यां धनदेवीं कुलाम्बिकाम्।।

ऊपर लिखे मन्त्रों द्वारा गौर्यादि मातृका का आह्वान, स्थापन तथा षोडशोपचार या दशोपचार से पूजा करके प्रार्थना करें—

गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया।
देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः।।
धृति पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता।
पूजां गृहाण सुमुखि! प्रसन्ना भव सर्वदा।।

इति गौर्यादिमातृकापूजनम्।

घृतमातृकापूजनम् :

घृतमातृका वेदी पर श्वेत वस्त्र बिछाकर पीढ़े पर रखें। उस पर घी तथा सिन्दूर से सात रेखा खींचें। रेखालम्ब आवृत्ति के प्रत्येक रेखा पर नीचे लिखे मन्त्रों द्वारा आह्वान, स्थापन तथा पूजन करें।

श्री — सुवर्ण पद्महस्तां तां विष्णोर्वक्षस्थले स्थिताम्।
त्रैलोक्यवल्लभां देवीं श्रियमावाहयाम्यहम्।।

लक्ष्मी — शुभलक्षसम्पनां क्षीरसागरसम्भवाम्।
चन्द्रस्य भगिनीं सौम्यां लक्ष्मीमावाहयाम्यहम्।।

धृति — संसारधारणपरां धैर्यलक्षणसंयुताम्।
सर्वसिद्धिकरीं देवीं धृतिमावाहयाम्यहम्।।

मेधा — सदसत्कार्यकरणक्षमां बुद्धिविशालिनीम्।
मम कार्ये शुभकरीं मेधामावाहयाम्यहम्।।

पुष्टि — सोमरूपां सुवर्णाभां विद्युज्जवलितकुण्डलाम्।
जननीं पुष्टिकरिणीं पुष्टिमावाहयाम्यहम्।।

श्रद्धा — भूतग्रासमिदं सर्वमजेन श्रद्धया कृतम्।
श्रद्धया प्राप्यते सत्यं श्रद्धामावाहयाम्यहम्।।

सरस्वती — प्रणवस्यैव जननीं रसनाग्रस्थितां सदा।
प्रगल्भदात्रीं चपलां वाणीमावाहयाम्यहम्।।

प्रार्थना—

श्रीश्च लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा सरस्वती।
माङ्गल्येषु प्रपूज्यन्ते सप्तैता घृतमातरः।।

इति घृतमातृकापूजनम्।

अन्य देवपूजन :

निम्न देवों का भी एक स्थान पर आह्वान पूजन करें। पहले की भाँति हर पूजनोपचार में "ॐ भूर्भुवस्वः" लगा लें—

ब्राह्मणे नमः, विष्णवे नमः, शिवाय नमः दुर्गायै नमः, कीर्त्यादि सप्तघृतमातृकाभ्यो नमः, ब्राह्मी आदि स्थल मातृकाभ्यो नमः, ब्रह्मादि सर्वतोभद्र मण्डल देवताभ्यो नमः, असिताङ्ग भैरवादि लिङ्गतोभद्र देवतोभ्यो नमः, ईश्वरादि अधि देवताभ्यो नमः, अग्न्यादि प्रत्यधि देवताभ्यो नमः, पंच ओंकाराय नमः,

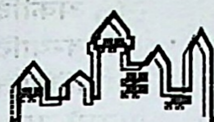
गणपत्यादि पंच लोकपालेभ्यो नमः, इन्द्रादि दश दिक्पालेभ्यो नमः, गौर्यादि षोडश मातृकाभ्यो नमः, गजाननादि चतुः षष्ठि योगिनीभ्यो नमः, अर्कादि सप्तवासदेभ्यो नमः, प्रतिपदादि पञ्चदश तिथिभ्यो नमः, अश्विन्यादि सप्तविंशति नक्षत्रेभ्यो नमः, मेषादि द्वादशराशिभ्यो नमः, विष्णुयादि सप्तविंशति योगेभ्यो नमः, बवादि एकादश करणेभ्यो नमः, गंगायै नमः यमनुायै नमः, सरस्वस्तयै नमः, सप्त समुद्रेभ्यो नमः, सप्त पितृभ्यो नमः, विश्वेभ्यो नमः, ग्राम देवेभ्यो नमः इष्ट देवताभ्यो नमः, कुल देवताभयो नमः, वास्तु देवताभ्यो नमः, स्थान देवताभ्यो नमः, सर्वेभ्यो तीर्थेभ्यो नमः, सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः, सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। भो देवताः सायुधाः सपरिवाराः सवाहनाः इहागच्छत।

पुनः पूजन कर पुष्पाञ्जलि से प्रार्थना करें—

अनेन पूजनेन भो देवास्सुप्रीता वरदा भवन्तु।

इसके बाद बाहर मुख्यद्वार के कलश, केले का खम्भा, वन्दनवार तथा मुख्य द्वार की पूजा गन्ध, पुष्पादि पञ्चोपचार से करनी चाहिए और इसके बाद नलपूजन करना चाहिए।





वास्तु शास्त्र एवं गृह-प्रवेश विचार

वास्तु शास्त्र के नियमों के अनुसार जब सुन्दर भवन बनकर तैयार हो जाता है, तो गृह-स्वामी उसमें शीघ्रातिशीघ्र प्रवेश के लिए बेचैन होने लगता है। गृह-स्वामी को चाहिए कि उसमें प्रवेश करने से पूर्व किसी विद्वान् पण्डित से शुभ मुहूर्त निकलवाकर, आवास करने के शुभ मुहूर्त में प्रवेश कर आवास करना चाहिए। ऐसा करना शुभप्रद एवं मंगलमय होता है, यही गृह-प्रवेश कहलाता है।

ग्राम, नगर देवमन्दिर तथा राजमहल, इनके निर्माण व प्रवेश के वक्त वास्तु पूजा का कराया जाना अत्यावश्यक होता है। वास्तुपूजा के बिना उसमें आवास करना अशुभ तथा कष्टकारी रहता है। जो व्यक्ति श्रद्धा तथा विधि-विधानपूर्वक वास्तु का पूजन करता है, उसे गृह सम्बन्धी किसी भी प्रकार का संकट नहीं होता है तथा सौ वर्ष तक सुखपूर्वक जीता है।

यदि कोई गृह-स्वामी वास्तुपूजा के बिना नवीन घर में प्रवेश करता है, तो उसे अनेक रोगों एवं कष्टों को भोगना पड़ता है। गाँव, नगर, राजमहल तथा देवमन्दिर में 64 पद का तथा शेष सभी प्रकार के भवनों में प्रवेश के शुभ अवसर पर 81 पदात्मक की पूजा करनी चाहिए।

अपूर्वसंज्ञं प्रथमप्रवेशं यात्रावसाने च स पूर्वसंज्ञम्।
द्वन्द्वाह्वयश्चाग्निभयादिजातस्त्तेवं प्रवेशस्त्रिविधः प्रविष्टः।।

नवीन गृह प्रवेश को महर्षि वशिष्ठ के मतानुसार 'अपूर्वसंज्ञक' कहते हैं। यात्रा के अन्त में जो गृह-प्रवेश होता है, उसे 'सपूर्व प्रवेश' कहते हैं। अग्नि आदि में जलने-टूटने के पश्चात् जो भवन निर्मित हुआ हो, उसमें जो प्रवेश होता है, उसे 'द्वन्द्वाह्व' कहते हैं, इस प्रकार तीन प्रकार का गृह प्रवेश माना जाता है।

वधू प्रवेशो न दिवा प्रशस्तः राजप्रवेशो न निशि प्रशस्तः।
दिवा च रात्रौ च गृहप्रवेशः सत्कीर्तिदस्या त्रिविधः प्रवेशः।।

दिन में वधूप्रवेश शुभ नहीं माना जाता, यात्रा के अन्त में जो राजा द्वारा गृह-प्रवेश होता है, वह रात्रि में शुभ नहीं है। सामान्यतः जो गृह-प्रवेश होता है, वह दिन व रात दोनों वक्त शुभ रहता है।

नये घर में प्रवेश उत्तरायण में ही करना चाहिए। यात्रा की समाप्ति पर राजा का गृह-प्रवेश भी उत्तरायण में शुभ रहता है, द्वन्द्वात्मक प्रवेश भी उत्तरायण में ही किया जाना चाहिए। पहले दिन वास्तुपूजन तथा बलिदान करके माघ, फाल्गुन,

वैशाख, ज्येष्ठ में गृह-प्रवेश होता है तथा कार्तिक, मार्गशीर्ष में गृह-प्रवेश मध्यम माना जाता है।

गृहारम्भ के लिए कहे गए नक्षत्र एवं वार के समय यदि सूर्य उत्तरायण में हो, तो ईंट, पत्थर एवं मिट्टी के घर में प्रवेश करना शुभ होता है। तृण-निर्मित घर में किसी भी दिन प्रवेश कर सकते हैं।

जिस नक्षत्र पर पापग्रह हों तथा जो नक्षत्र पापग्रहों से विद्ध हों, ये सभी उपरोक्त त्रिविध प्रवेश में त्याज्य माने गए हैं। लगातार वृद्धि हेतु शुक्ल में प्रवेश शुभ एवं उत्तम माना गया है। कृष्ण पक्ष में दसवीं तिथि के पश्चात् गृह-प्रवेश सर्वथा निषिद्ध है।

चित्रा, रोहिणी, अनुराधा, तीनों उत्तरा, मृगशिरा, शतभिषा, धनिष्ठा, रेवती नक्षत्रों में त्रिविध प्रवेश करने से धन, आयु आरोग्य, पुत्र, पौत्र तथा वंश की वृद्धि होती है।

धनिष्ठा, रेवती, रोहिणी, शतभिषा तथा तीनों उत्तरा ये नक्षत्र हों, चन्द्रमा क्षीण न हो, रिक्ता के अतिरिक्त तिथि हो, तो गृह-प्रवेश शुभ कहलाता है।

बृहस्पति तथा शुक्र उदयी हों, रविवार, मंगलवार एवं रिक्ता तिथियों को त्यागकर धनिष्ठा, रेवती, पुष्य, शतभिषा, मृगशिरा, अनुराधा, चित्रा तथा तीनों उत्तरा नक्षत्र हों, तो ऐसे अवसर पर दिन या रात में प्रवेश शुभ रहता है।

मेष लग्न में गृह-प्रवेश करने से सुखद, शुभ यात्रा, कुम्भ लग्न में रोग, मकर में धान्य-हानि, कर्क में नाश, इनके अलावा शेष सभी लग्न शुभ रहते हैं। निन्दित लग्न भी शुभ नवांशक से युक्त हों, या तुला, मकर, कर्क, मेष ये राशियाँ भी यदि गृहपति की राशि से उपचय होकर लग्न में हों, तो प्रवेश शुभ माना जाता है।

कार्यारम्भेषु सर्वेषु नववेश्म प्रवेशने।
ग्रहशान्ति विधानेन कृत्वाऽभीष्टं समश्नुते।।

इन वचनों के अनुसार, वास्तुशान्ति में ग्रहयोग का भी सही विधान होने से ग्रहयोग युक्त वास्तुशान्ति करनी चाहिए तथा ग्रहों का पूजन व हवन भी पूर्व में गणपति, मातृका पुण्याहवाचन आदि सम्पूर्ण पूजन-अर्चन पूर्व ही कर लेना उचित है। विश्वकर्म प्रकाश के अनुसार, 'वास्तु होमं ततः कुर्यात्!' यानी ग्रह-हवन के बाद वास्तुहवन करना चाहिए।

निर्माणेमन्दिराणां च वेशे त्रिविधेऽपि च।
वास्तु-पूजा च कर्त्तव्य यस्मात्तां कथथाम्यतः।।

भवन-निर्माण तथा तीनों तरह के प्रवेश (अपूर्व, सपूर्व, द्वन्द्वाह) के वक्त वास्तु-पूजा की जानी चाहिए। गृह-प्रवेश दिन से पूर्व शुभ दिन में प्रातः पूजनकर्त्ता (यजमान) (पत्नी सहित अथवा बिना पत्नी के) पूर्व अथवा उत्तराभिमुख शुभासन पर पूजन सामग्री सहित बैठें। आचार्य (पुरोहित) कुमकुमादि से यजमान के मस्तक पर मांगलिक तिलक करें। मांगलिक, तिलक एवं ग्रन्थि-बन्धन के बाद यजमान पवित्री धारण करें तथा निम्नांकित मन्त्र द्वारा आसन की शुद्धि करें—

पृथ्वित्वया घृता लोका देति ! त्वं विष्णुना घृता।
त्वं च धारय मां देवि ! पवित्रं कुरु चासनम्।।

आसन शुद्धि के बाद पूजनकर्त्ता तीन बार जल से आचमन करें—*ॐ केशवाय नम:, ॐ नारायणाय नम:, ॐ माधवाय नम:।* आचमन के पश्चात् *ॐ हृषीकेशाय नम:* बोलकर हस्त प्रक्षालन (हाथ धोयें) करें।

दूर्वायुक्त जल से पूजनकर्त्ता स्वयं को तथा पूजन सामग्री को निम्नांकित मन्त्र से पवित्र करें—

ॐ अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोऽपि वा।
य: स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स: बाह्याभ्यन्तर: शुचि:।।

अपने शरीर तथा सामग्री को पवित्र करने के पश्चात् अर्चन कलश (जलपूर्ण) एवं अक्षत पुञ्ज पर रक्षादीप का स्थापन तथा पूजन करें। उल्टे हाथ में पीली सरसों रखकर सीधे हाथ से दसों दिशाओं में सरसों बिखेरकर दिशा-वृद्धि करनी चाहिए। पूजनकर्त्ता को चाहिए कि अपने गुरु, इष्ट देव एवं कुल देवों का करबद्ध ध्यान एवं वन्दन करें। इस वक्त विद्वान वेद के 'आवो भद्रा' आदि मन्त्रों से शान्ति पाठ करें।

शान्ति पाठ के उपरान्त हाथ में जो अक्षत पुष्प हों, उन्हें गणेश जी को अर्पण करें। गणपति आदि देवों का स्मरण करके प्रणाम करें (आचार्य आदि सुमुखश्चैकदन्तश्च श्लोकों का उच्चारण करें।) श्री गणपति जी, श्री विष्णु जी, श्री उमा-महेश्वर, माँ सरस्वती, शची पुरन्दर, स्थान देवता, इष्ट देवता, कुल-देवता, माता-पिता, आचार्यादि ब्राह्मण तथा इस कर्म के प्रधान देवता श्री वास्तु देव को प्रणाम करें।

सीधे हाथ में जल, गंधाक्षत, फूल, दूर्वा, दक्षिणा लेकर देशकाल का स्मरण करने के अन्त में यह कहते हुए कि मेरे पुत्र-पौत्रादि सहित इस नूतन भवन में लम्बे समय तक सुखपूर्वक निवास हेतु सर्वापति सहित, अनेक प्रकार के रोगादि से मुक्ति, सर्वोपद्रव शान्ति, सम्पत्ति, आरोग्य, आयु, धन-धान्य द्विपद, चतुष्पद, पुत्र-पौत्रादि का वृद्धिपूर्वक, रजत, सुवर्ण, ताम्र (ताँबा) त्रपु, पाषाण, काँस्य, सीसा, लोहा आदि आठ भूमि शल्य दोष, आय-व्ययादि अन्य भवन के अन्तर्गत विधि हिंसा दोष परिहार द्वार यह घर क्षेत्र अनवरत भूमि में अधिष्ठित देवों के उपरोध अनितापसर्ग निवृत्तिपूर्वक वास्तु की शुभता सिद्धि द्वारा श्री परमेश्वर के प्रीत्यर्थ गृह-प्रवेश के लिए सग्रहमख, वास्तुशान्ति तथा गृहप्रवेश कर्म करूँगा।

पुन: जल लेकर तदङ्गान्तर्गत स्वस्ति पुण्याहवाचन, मातृका, वसोर्धारा पूजन, आयुष्य मन्त्र जप तथा सांकल्पिक विधि द्वारा नान्दी श्राद्ध करूँगा। सर्वप्रथम निर्विघ्नता सिद्धि हेतु गणेशाम्बिका का पूजन करूँगा। हाथ में अक्षत पुष्प लेकर गणेश गौरी का आह्वान तथा षोडशोपचार से पूजन करें तथा मन्त्र पुष्पाञ्जलि समर्पित करके, निम्नांकित प्रार्थना करें—

विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय,
लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय।
नागाननाय सितसर्प विभूषिताय।
गौरी सुताय गणनाथ ! नमो नमस्ते।।

पूजन के बाद 'अनेनार्चनेन श्री गणेशाम्बिके प्रीयेताम्' बोलकर भूमि पर जल

छोड़ दें। इसी तरह आगे समस्त पूजा पुण्याहवाचन से आचार्यादि वरण तक वैदिक तथा पुराणोक्त मन्त्रों द्वारा ग्रहशान्ति के अनुसार करें। पंचगव्य घर के प्रत्येक भाग में छिड़कें तथा पंचभू संस्कारपूर्वक कुशकण्डिका विधि से अग्नि स्थापन करें। इसके पश्चात् भवन के बीच वेदी बनाकर और ग्रह के ईशान कोण से चारों कोणों में लोहे के चार काँटे (नागफनी) निम्नालिखित मन्त्र का उच्चारण करके गाड़ने चाहिएँ—

विशन्तु भूतले नागा, लोकपालाश्च सर्वत:।
अस्मिन् गृहेऽवतिष्ठन्तु आयुर्बलकरा: सदा।।

इन चारों शंकुओं के निकट इसी क्रम से दही, उड़द व दीप सहित बलिदान अर्पित करें।

रुद्रेभ्यश्चैव सर्वेभ्यो ये चाऽन्ये तत्समाश्रिता:।
बलिं तेभ्य: प्रयच्छामि पुण्यमोदनमुत्तमम्।।

ईशान कोण से वायव्य कोण तक इस प्रकार मन्त्रों का उच्चारण करें। इसके बाद वास्तुमण्डल पर (81 या 64 पद वाले) रजत या सुवर्ण शलाका द्वारा पूर्व से पश्चिम तक 10 रेखाएँ एवं उत्तर से दक्षिण तक 10 रेखाएँ इस प्रकार कुल 20 रेखाएँ बनाकर उनका गंध, अक्षत से पूजन करना चाहिए।

पूर्व से पश्चिम	उत्तर से दक्षिण
1. ओ३म् शांतायै नम:	ओ३म् हिरण्यायै नम:
2. ओ३म् यशौवत्यै नम:	ओ३म् सुव्रतायै नम:
3. ओ३म् कान्तायै नम:	ओ३म् लक्ष्म्यै नम:
4. ओ३म् सुरथायै नम:	ओ३म् इडायै नम:
5. ओ३म् सुभद्रायै नम:	ओ३म् विशोकायै नम:
6. ओ३म् नन्दायै नम:	ओ३म् ज्वालायै नम:
7. ओ३म् सुमत्यै नम:	ओ३म् जयायै नम:
8. ओ३म् सत्यै नम:	ओ३म् प्रियायै नम:
9. ओ३म् प्राणवाहिन्यै नम:	ओ३म् विमलायै नम:
10. ओ३म् विशालायै नम:	ओ३म् विधृत्यै नम: ।

इसके बाद वास्तुमण्डल पर (ईशान कोण के पद से) शिख्यादि देवों का आह्वान एवं स्थापन करें जिनके नाम निम्नवत् हैं—

1. ओ३म् शिखिने नम:	2. ओ३म् सूर्याय नम:
3. ओ३म् पर्जन्याय नम:	4. ओ३म् जयन्ताय नम:
5. ओ३म् कुलिशायुधाय नम:	6. ओ३म् भृशाय नम:
7. ओ३म् सत्याय नम:	8. ओ३म् वायवे नम:
9. ओ३म् आकाशाय नम:	10. ओ३म् वित्थाय नम:
11. ओ३म् पूष्णे नम:	12. ओ३म् यमाय नम:
13. ओ३म् गृहक्षताय नम:	14. ओ३म् भृङ्गराजाय नम:
15. ओ३म् गन्धर्वाय नम:	16. ओ३म् मृगाय नम:

17. ओ३म् दौवारिकाय नम:
18. ओ३म् पितृभ्यो नम:
19. ओ३म् पुष्प दन्ताय नम:
20. ओ३म् सुग्रीवाय नम:
21. ओ३म् असुराय नम:
22. ओ३म् वरुणाय नम:
23. ओ३म् पापाय नम:
24. ओ३म् शेषाय नम:
25. ओ३म् अहर्य नम:
26. ओ३म् रोगाय नम:
27. ओ३म् मल्लाराय नम:
28. ओ३म् मुख्याय नम.
29. ओ३म् सर्पाय नम:
30. ओ३म् सोमाय नम:
31. ओ३म् दित्यै नम:
32. ओ३म् अदित्यै नम:
33. ओ३म् जयाय नम:
34. ओ३म् सावित्राय नम:
35. ओ३म् अर्यम्णे नम:
36. ओ३म् रुद्राय नम:
37. ओ३म् विवस्वते नम:
38. ओ३म् सवित्रे नम:
39. ओ३म् मित्राय नम:
40. ओ३म् विबुधाधिपाय नम:
41. ओ३म् पृथ्वीधराय नम:
42. ओ३म् राज्यक्ष्मणे नम:
43. ओ३म् ब्रह्मणे नम:
44. ओ३म् आपवत्साव नम:
45. ओ३म् विदायै नम:
46. ओ३म् चरक्यै नम:
47. ओ३म् पापराक्षस्यै नम:
48. ओ३म् पूतनायै नम:
49. ओ३म् अर्यम्णे नम:
50. ओ३म् एकन्दाय नम:
51. ओ३म् जृम्भकाय नम:
52. ओ३म् पिलिपिच्छाय नम:
53. ओ३म् उग्रसेनाय नम:
54. ओ३म् डामराय नम:
55. ओ३म् कालाय नम:
56. ओ३म् एक पटे नम:

इसके पश्चात् पूर्वादि दिशा तथा विदिशाओं में दश दिक्पालों का आह्वान करना चाहिए—

पूर्व	इन्द्राय नम:
पश्चिम	वरुणाय नम:
उत्तर	कुबेराय नम:
दक्षिण	यमाय नम:
आग्नेय	अग्नेय नम:
नैर्ऋत्याम्	निर्ऋत्ये नम:
वायुकोण	वायवे नम:
ईशान	ईशानाय नम:
ऊर्ध्वम्	ब्राह्मणे नम:
अध:	अनन्ताय नम:

बहुत-से विद्वानों के मत से यहाँ आठ दिक्पालों का भी आह्वान व स्थापन अर्चन-स्थापन करते हैं। इसके पश्चात् 'शिख्यादि वास्तुमण्डल देवताभ्यों नम:' ऐसा उच्चारण करके स्थापन व गन्धादि से अर्चन करना चाहिए तथा वास्तु[illegible] पर कलश स्थापन विधि से कलश स्थापित करें। कलश पर कृकलास वास्[illegible] प्रतिमा का अग्न्युत्तारणपूर्वक प्राण-प्रतिष्ठा कर स्थापन करें। सामग्री के अनुसार

ही अथवा षोडशोपचार आदि के द्वारा वैदिक तथा पौराणिक मन्त्रों से आह्वान, ध्यान तथा पूजन करें।

भगवन् देव देवेश ब्रह्मादि देवतात्मक।
तव पूजां करिष्यामि प्रसाद कुरु मे प्रभो!।

षोडशोपचार, आह्वान, आसन, पाद्य, अर्घ्य, स्नान, आचमन, वस्त्र, गन्ध, अक्षत, परिमल, पुष्प, धूप-दीप, द्रव्य, ताम्बूल, नैवेद्य, दक्षिणा आरती तथा पुष्पांजलि भेंट करके वास्तु की प्रार्थना करनी चाहिए।

पूजितोऽसि मया वास्तो! होमाद्यैरर्चनैः शुभैः।
प्रसीद पाहि विश्वेश! देहि मे गृहजं सुखम्।।
नमस्ते वास्तु पुरुष! भूशय्याभिरत प्रभो।
मद्‌गृहं धन-धान्यादि समृद्धं कुरु सर्वदा।।
सशैल सागरां पृथ्वीं यथावहसि मूर्धनि।
तथा मां वह कल्याण! सम्पत्सन्ततिभिः सह।।
यथा मेरुगिरि! शृंगं देवानामालयः सदा।
तथा ब्रह्मादिदेवानां गृहे मम स्थिरो भव।।

वास्तु-पूजन के बाद गणेशाम्बिका तथा सूर्यादि नवग्रहों की प्रसन्नता हेतु प्रत्येक का 8-8 अथवा 28-28 बार हवन करें तथा इसके बाद (45 संख्या से वास्तु) वास्तु देवताओं के लिए निम्नांकित मन्त्रों से 108 बार हवन करना चाहिए—

(क) ओ३म् वास्तोस्पते प्रति जानीह्य स्मान्स्वावेशो अनमी वो भवानः। यत्वे महे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे।

(ख) ओ३म् वास्तोस्पते प्रतरणो नऽएधि गयस्कानोभिरश्वेभिरिन्दो अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान्प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे।

(ग) ओ३म् वास्तोस्पते शम्मया सर्ठ, सदा ते सक्षीमहि हिरण्यागातु मत्या। पाहि क्षेम उतयोगे वरन्नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः स्वाहा।।

(घ) ओ३म् अमीवहा वास्तोस्पते विश्वारूपाण्याविशन् सखा सुशेव एधि नः स्वाहा।

उपरोक्त चारों मन्त्रों के द्वारा हवन करने के बाद 6 आहुतियाँ बिल्व की इस मन्त्र से अग्नि को अर्पित करें—

ओ३म् वास्तोस्पते ध्रुवास्थूणां सत्रं सौभ्यानां द्रप्सोभेत्ता, पुरां शाश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे स्वाहा।

इन मन्त्रों के द्वारा स्रुवा में अवशिष्ट घी की प्रणीता पात्र में छोड़ें। इसके बाद आवाहित अन्य देवताओं के लिए आहुति प्रदान कर अग्नि-पूजन करें। शाकल्य एक पात्र में इकट्ठा करके स्विष्ट कृत हवन करें। 9 व्याहृतियों से घी की बलि प्रदान करनी चाहिए।

भूरादि 9 आहुतियों के बाद इन्द्रादि दश दिक्पाल एवं अजरादि क्षेत्रपाल के निमित्त सदीप, दधि, माष (उड़द) भक्त बलिदान दें तथा इनकी प्रार्थना करें। क्षेत्रपाल बलि को चौराहे तक पहुँचायें तथा यजमान हाथ-पैर धोयें।

पूर्ण आहुति—यदि पूर्ण आहुति करना अभीष्ट हो, तो संकल्प कर आचार्य सुपारी, नारियल आदि से पूर्णाहुति के मन्त्रोचारण कर स्रुचि के नारियल अथवा सुपारी को अग्नि की देवी अथवा कुण्ड में सीधी स्थापित कर दें तथा वसोर्धारा गिरावें, फिर वसोर्धारा के मन्त्रों का उच्चारण करें। अग्नि प्रदक्षिणा भस्म, धारण, पूर्ण पात्र दान तथा प्रार्थना के बाद वास्तुमण्डल के पश्चिमी भाग में पायस बलि प्रदान करायें तथा नैर्ऋत्य कोण में वास्तु के लिए प्रधान बलि अर्पित करनी चाहिए।

विवाहिद क्रियायां च शालायां वास्तुपूजने।
नित्य होमे वृषोत्सर्गे पूर्णाहुति न कारयेत्।।

गृह प्रोक्षण—इस हवन कर्म के बाद दूध, जल, दूर्वा, पंचगव्य, उदुम्बर, कुशा तथा जौ, इन सभी को काँस्य-पात्र में मिश्रित कर खूँटी आदि प्रत्येक स्थान पर प्रोक्षण करें तथा गेह के पूर्व, दक्षिण, पश्चिमोत्तर सन्धियों का स्पर्श करें।

सन्धि स्पर्श—सन्धि स्पर्श के वक्त निम्नांकित वाक्य बोलने चाहिएँ—

ओ३म् श्री श्चचत्वायश्च पूर्व सन्धौ गोपायेताम् (पूर्व)
ओ३म् अन्नंचत्वा ब्राह्मणा भव पश्चिमे सन्धौ गोपायेताम् (पश्चिम)
ओ३म् ऊर्क्चत्वा सूनताचोत्तरे सन्धै गोपायेताम् (उत्तर)
ओ३म् यज्ञस्थत्वा दक्षिणा च दक्षिणे सन्धौ गोपायेताम् (दक्षिण)

पृथ्वी पूजा त्रिसूत्री वेष्ठन तथा दुग्धार—सुन्दर सुसज्जित आभूषणयुक्त स्त्री स्वरूपा पृथ्वी का ध्यान कर ओ३म् धरायै नम: पंचोपचार से पूजन करके त्रिसूत्री के घर की पूर्व दिशा के ईशान कोण से प्रारम्भ करके 3 बार भवन के चारों ओर वेष्ठन करें तथा पावमान एवं रक्षोघ्न सूक्त से अथवा दुग्धमिश्रित जल से पूर्व पात्र द्वारा ईशान कोण से आरम्भ कर अविच्छिन्न धार (परिक्रमा करने की तरह) समर्पित करें।

ध्वज पताकओं की स्थापना—पूर्व दिशा में बैठकर आचमन प्राणायाम के बाद देशकाल संकीर्तन करते हुए इस घर में वास्तुशान्ति कर्म के अन्तर्गत ध्वज-पताकादिकों की स्थापना तथा उनमें अधिष्ठित देवताओं का पूजन करूँगा, ऐसा बोलना चाहिए।

दिशा	रंग	देवता
पूर्व	पीत (पीला) वर्ण	ओ३म् इन्द्राय नम:
पश्चिम	श्वेत वर्ण	ओ३म् वरुणाय नम:
उत्तर	हरित वर्ण	ओ३म् कुबेराय नम:
दक्षिण	कृष्ण वर्ण	ओ३म् यमाय नम:
अग्नि कोण	रक्त वर्ण	ओ३म् अग्नेय नम:
नैर्ऋत्य	नील वर्ण	ओ३म् निर्ऋत्ये नम:
वायव्य	धूम्र वर्ण	ओ३म् वायवे नम:
ईशान	श्वेत वर्ण	ओ३म् ईशानाय नम:
ईशान तथा पूर्व के मध्य	पद्म वर्ण	ओ३म् ब्रह्मणे नम:
नैर्ऋत्य तथा पश्चिम के मध्य	मेघ वर्ण	ओ३म् अनन्ताय नम:
ईशान कोण	पांच रंग का महाध्वज	ओ३म् सर्वेभ्यो देवेभ्यो नम:

उपरोक्त सभी ध्वजपताकाओं का पूजन-अर्चन करके प्रत्येक ध्वजपताका के पास सदीप, दधि, उड़द भक्तों को बलि अर्पित करके महाध्वज की प्रार्थना करनी चाहिए।

अमुं महाध्वजं चित्रं सर्वविघ्नविनाशकम्।
महामण्डप मध्ये तु स्थापयामि सुरार्चने।।

"अनया पूजया इन्द्रादि दशदिक्पाला: प्रीयन्ताम्" यह वाक्य उच्चारण कर भूमि पर जल गिरायें।

गृह-प्रवेश—वक्त तथा मुहूर्त के अनुसार, प्रवेश के समय गणेशजी का विधिपूर्वक पूजन-अर्चन करके, जल पूरित कलश, गंध आदि अर्चन पल्लव-मलादि से सुशोभित ब्राह्मणों द्वारा स्वस्ति वाचन, वैदिक मन्त्र, मंगल गान, वाद्यादि से युक्त सपरिवार, कलश को दोनों हाथों से दायें कन्धे पर लेकर द्वार पर तथा द्वार शाखाओं का गंधादि से पूजन कर नमस्कार करें—

द्वारशाखा	पूर्व में	ओ३म् गणपतये नम:
द्वारशाखा	दक्षिण में	ओ३म् छात्रे नम:
द्वारशाखा	वाम में	ओ३म् विधात्रे नम:

पुरुष दायें पैर को तथा पत्नी बायें पैर को आगे बढ़ाकर गृह-प्रवेश करें और ईशान कोण अथवा पूर्व के मध्य भाग में कलश स्थापन करें।

स्तम्भ पूजन—निम्नवत् गंधादि से स्तम्भ पूजन कर प्रार्थना करें—

धारयत्वं महाभागा निर्मितो विश्वकर्मणा।
स्थापित: शुभदो नित्यं मम गेहक्षमों भव।।

दीप स्थान में	दीप पूजन:	'दीपाय नम:' गंधाक्षत से अर्चन करें
रसोईघर में	चूल्हा पूजन:	गन्धर्वाय नम: अर्चन करें
	पात्रो का पूजन	ज्येष्ठाय नम: अर्चन करें
	जलस्थान-पूजन	वरुणाय नम: अर्चन करें
	मिक्सी अथवा चक्की	सुभगाय नम: अर्चन करें
	उलूख-मूसल	रौद्रपीठाय नम: अर्चन करें
		बलभद्र प्रियाय अर्चन करें
शय्या पूजन	(पृष्ठ भाग)	ओ३म् कामाय नम: अर्चन करें
	(मध्य भाग)	प्रहरणाव नम: अर्चन करें
	(दक्षिण वाम भाग)	ओ३म् पन्नगाय: नम: अर्चन करें
		ओ३म् किन्नराय नम: अर्चन करें

संमाजिका, बर्तन साफ करने के स्थान आदि का भी गंधाक्षत से पूजन करें।

गर्त कर्म—गृह-प्रवेश तथा पूजन के बाद गृह प्रवेशकर्त्ता ईशान कोण से आठवें पद में आग्नेय दिशा में (आकाश पद में) भूमि को घुटने तक खुदवाकर जल, गोबर, मिट्टी से लीपकर उसके बीच श्वेत चन्दन, पुष्प से सजायें तथा सप्त धान्य, दही आदि छोड़कर जलपूरित कलश (कच्ची मिट्टी का कलश) का गन्ध पुष्पादि से पूजन कर दोनों हाथों से ओ३म् वरुणाय नम: उच्चारण करके घुटने के बल

स्थापित करें तथा जल से गड्ढा पूर्ण करें। वृष वास्तु की प्रतिमा को पेटी में रखकर उस स्थान में छोड़ दें तथा पुष्पांजलि समर्पित करके प्रार्थना करनी चाहिए।

जन्म की राशि, जन्म-लग्न से द्वादश राशिगत गृह प्रवेश लग्न का फल निन्दित होता है। यदि जन्म की राशि लग्न-प्रवेश की हो, तो रोग-नाश, दूसरी हो तो धन-नाश, तीसरी धनद, चौथी बन्धुनाश, पाँचवीं पुत्र-हानि, छठी शत्रु-नाश, सातवीं स्त्री-नाश, आठवीं प्राण-नाश, नवीं फोड़ा-फुंसी, दसवीं कार्यसिद्धि, ग्यारहवीं धन-लाभ तथा बारहवीं अशुभ होती है।

लग्न से त्रिकोण (3/9) केन्द्र (1/4/7/10) तथा दूसरे, तीसरे शुभ ग्रहों (3/16/11) में पापग्रह हों, 4/8 स्थान पर शुभ ग्रह हों तथा जन्मराशि अथवा लग्न से अष्टम लग्न न हो, रविवार, मंगलवार, रिक्तातिथि चरलग्न, चैत्रमास व अमावस्या तिथि को त्यागकर गृह-प्रवेश शुभ व मंगलमय माना जाता है।

कृत्वा शुक्रं पृष्ठतो वामतोऽर्कं विप्रान्पूज्यानगतो पूर्ण कुम्भान्।
रम्यं हर्म्यं तोरणं स्त्रग्वितानैः सम्यक् स्त्रीभिर्गीतवाद्यैर्विशेत्तत्।।

सूर्य को वाम भाग में तथा शुक्र को पार्श्व भाग में करके ब्राह्मणों की पूजा करके पूर्ण कलश को आगे रखकर घर को तोरण, माला, वितान, बन्दनवार आदि उपकरणों से सजाकर स्त्रियों के मंगलगान से युक्त विभिन्न वाद्यों के शब्दों का श्रवण करते हुए गृह-प्रवेश करना उत्तम माना गया है।

वामो रविर्मृत्यु सुतार्थलाभतोऽर्के पञ्चमे प्राग्दनादि मन्दिरे।
पूर्णातिथौ प्राग्वदने गृहे शुभो नन्दादिके याम्यजलोत्तराननेे।।

पूर्वाभिमुख गृह में प्रवेश करने पर प्रवेश लग्न से जो अष्टम स्थान से पाँच राशि तक, दक्षिण मुख गृह के लिए पंचम स्थान की राशि से पाँच राशि तक, पश्चिमाभिमुख गृह के लिए द्वितीय स्थान की राशि से पाँच राशि तक सूर्य हो, तो वाम रवि कहलाते हैं।

पूर्णा (4/10/15) तिथि में पूर्व मुख गृह में नन्दा तिथि (16/11) में दक्षिण मुख गृह में, भद्रा तिथि (2/7/12) में पश्चिमाभिमुख गृह में तथा जया तिथि (3/8/13) में उत्तराभिमुख गृह में प्रवेश शुभ माना जाता है।

वक्त्रे भूरविभात्प्रवेश समये कुम्भेऽग्निदाहः कृताः
प्राच्यामुद्वसनं कृतापमगताः लाभः कृताः पश्चिमे।
श्रीर्वेदाः कालिरुत्तरे युगमिता गर्भे विनाशो गुदे
रामाः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनला कण्ठे भवेत्सर्वदा।।

गृह-प्रवेश के वक्त कुम्भचक्र बनाकर उसी के अनुसार शुभाशुभ का निर्णय करके गृह-प्रवेश करना चाहिए। सूर्य के नक्षत्र से कलश-चक्र के मुख में 1 नक्षत्र रखें, इसमें प्रवेश करने से अग्निदाह, इसके पूर्व में 4 नक्षत्र-उद्वास (गृहपति परदेश में रहे), 4 नक्षत्र दक्षिण में लाभ, 4 नक्षत्र पश्चिम में लक्ष्मी-प्राप्ति, 4 नक्षत्र उत्तर में कलह, 4 नक्षत्र गर्भ (मध्य) में गर्भ-नाश, 3 नक्षत्र गुद (बेंदी) में स्थायित्व तथा 3 नक्षत्र गले में सुस्थिरता रहती है।

गृहारम्भे कुम्भचक्रम् :

सूर्य नक्षत्राद्गणना साभिजित्

स्थानानि	संख्या	फलानि
मुखे	1	अग्निदाह:
पूर्वे	4	उद्वसनम्
पश्चिमे	4	लक्ष्मी-प्राप्ति
उत्तरे	4	कलह:
दक्षिणे	4	लाभ:
गर्भे	4	विनाश:
अध:	3	स्थिरता:
कण्ठे	3	स्थिरम्

गृह प्रवेश निषेध :

अकपाटम अनाच्छन्नमदत्त बलि भोजनम्।
गृहं न प्रविशेदेवं विपदामाकरं हि तत्।।

बिना द्वार लगा, छत-रहित, बलिदान-रहित तथा बिना ब्राह्मणों को भोजन कराये घर में प्रवेश नहीं करना चाहिए। ऐसा भवन 'विपदाओं का घर' कहा गया है।

एवं सुलग्ने स्वगृहं प्रविश्य वितान पुष्प श्रुति घोष युक्तम्।
शिल्पज्ञ-दैवज्ञ-विधिज्ञ-चौरान् राजार्चयेद् भूमि हिरण्वस्त्रै:।।

उपरोक्त विधि के मुताबिक शुभ लग्न में चंदोवा (छत) लगाकर पुष्प-मालाओं से सुसज्जित, वेदध्वनि से युक्त अपने घर में प्रवेश करें, उसके पश्चात् राजा शिल्पज्ञ (मिस्त्री, बढ़ई, चित्रकार आदि) ज्योतिष, पुरोहित एवं पुरवासियों को भूमि, स्वर्ण, वस्त्रादि उपहार में प्रदान करें।

अग्नि के कारण नष्ट-भ्रष्ट व खण्डित घर का यदि उसी स्थान पर फिर से निर्माण किया गया हो, तो श्रावण, कार्तिक, मार्गशीर्ष मासों में स्वाति, धनिष्ठा व शतभिषा नक्षत्रों में प्रवेश शुभ माना जायेगा। इसमें ग्रहों के उदयास्त का विचार कदापि नहीं करना चाहिए।

यात्रा खत्म होने पर मृगशिरा, चित्रा, रेवती, अनुराधा, रोहिणी व तीनों उत्तरा नक्षत्रों में पुन: गृह-प्रवेश करें, तो शुभ रहता है। इनके अतिरिक्त श्रवण, स्वाति, पुनर्वसु, शतभिषा, धनिष्ठा, अश्विनी, हस्त, आर्द्रा व पुष्य नक्षत्रों में प्रवेश करें, तो मृत्यु होती है। यदि मूल, ज्येष्ठा, आश्लेषा नक्षत्रों में प्रवेश करें, तो राजकुमार की मृत्यु होती है। विशाखा में गृह-प्रवेश करने से राजपत्नी की मौत होती है। कृत्तिका नक्षत्र में गृह-प्रवेश करने से अग्नि-भय होता है।

फाल्गुन, ज्येष्ठ, वैशाख में द्विस्वभाव या स्थिर लग्नों में यात्रा से लौटने के पश्चात् या नवीन गृह में प्रवेश करना शुभ रहता है। शंकु, सूत्र, शिलान्यास, द्वार स्थापन, गृहाच्छादन, स्तम्भ प्रतिष्ठा आदि से निर्दिष्ठ नक्षत्र, वार, तिथि योग, लग्नों में ही उक्त कार्य करना चाहिए।





भवन निर्माण एवं प्रवेश मुहूर्त

भू-परीक्षण, भूखण्ड की दिशा के साथ-साथ निर्माण तथा गृह-प्रवेश में शुभ मुहूर्त का ध्यान रखा जाना अत्यावश्यक होता है।

गृह-निर्माण के शुभारम्भ के लिए हमें ज्योतिष का सहारा लेना पड़ता है। सूर्य के अनुसार गृहारम्भ हेतु निम्नांकित तिथियों को ध्यान में रखना चाहिए–

1.	मेष राशि में सूर्य रहने पर	14 अप्रैल से 13 मई	शुभ
2.	वृष राशि में सूर्य रहने पर	14 मई से 13 जून	धन-वृद्धि
3.	मिथुन राशि में सूर्य रहने पर	14 जून से 13 जुलाई	मृत्यु
4.	कर्क राशि में सूर्य रहने पर	14 जुलाई से 13 अगस्त	शुभ
5.	सिंह राशि में सूर्य रहने पर	14 अगस्त से 13 सितम्बर	सेवकों की वृद्धि
6.	कन्या राशि में सूर्य रहने पर	14 सितम्बर से 13 अक्टूबर	रोग
7.	तुला राशि में सूर्य रहने पर	14 अक्टूबर से 13 नवम्बर	सुख
8.	वृश्चिक राशि में सूर्य रहने पर	14 नवम्बर से 13 दिसम्बर	धन-वृद्धि
9.	धनु राशि में सूर्य रहने पर	14 दिसम्बर से 13 जनवरी	हानि
10.	मकर राशि में सूर्य रहने पर	14 जनवरी से 13 फरवरी	धन-लाभ
11.	कुम्भ राशि में सूर्य रहने पर	14 फरवरी से 13 मार्च	रत्न-लाभ
12.	मीन राशि में सूर्य होने पर	14 मार्च से 13 अप्रैल	भय

यानी 3, 6, 9, 12 के क्रम या मिथुन, कन्या, धनु तथा मीन राशि की सूर्य संक्रान्ति में गृहारम्भ न करें। ये सूर्य संक्रान्ति की साधारण तिथियाँ हैं–

मासों में—वैशाख, श्रावण, मार्गशीर्ष, माघ, फाल्गुन, उत्तम तथा भाद्रपद व कार्तिक मास भी सामान्यत: ग्राह्य हैं।

तिथियों में—2, 3, 5, 6, 7, 10, 12, 13, 15 एवं कृष्ण पक्ष की पहली तिथि में गृह- निर्माण का शुभारम्भ करना चाहिए।

निषेध तिथियाँ—1/4/8/ 9 एवं 14 व अमावस्या तिथियों में गृहारम्भ करने से निर्धनता, धनहानि, धान्यनाश, उच्चाटन, स्त्रीनाश व राजभय होता है। अत: उक्त तिथियों में भूलकर भी गृहारम्भ नहीं करना चाहिए।

नक्षत्र—गृह-निर्माण के शुभारम्भ हेतु रोहिणी, चित्रा, मृगशिरा, स्वाति, हस्त, उत्तराषाढ़ा, अनुराधा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, शतभिषा, रेवती तथा धनिष्ठा नक्षत्र बताये गए हैं।

लग्न—मेष, मिथुन, सिंह, कन्या, वृश्चिक, कुम्भ व मीन लेकिन पंचबाण व भूमिशयन के दिन हो तथा केन्द्र व त्रिकोण स्थानों में शुभ ग्रह हों तथा तीसरे, छठे व 11वें स्थान में पाप ग्रहों के रहते हुए आठवाँ स्थान शुद्ध हो, तो नए भवन का निर्माण कार्यारम्भ शुभफलदायक रहता है।

भूमिशयन—जिस नक्षत्र में सूर्य हो, उससे 5/7/9/12/19/26 इन दिनों एवं नक्षत्रों में भूमि शयनशील रहती है। इनमें भी 4/8/5/3/6/7 घटी (कालांश) मात्र में भूमिशयन एवं शेष घटियों में भूमिशयन नहीं होता है।

भूशयन में मतभेद होने के फलस्वरूप सूर्य संक्रान्ति से 5/7/9/11/15/20/22/23/28वें दिन भूशयन दोष एवं कुछ विद्वान 7/9/15/21/24वें दिन मात्र ही भूशयन मानते हैं।

वार—गृहारम्भ के लिए सोम, बुध, बृहस्पति, शुक्र एवं शनिवार श्रेष्ठ एवं शुभ माने गए हैं। रविवार तथा मंगलवार को गृहारम्भ का त्याग करना चाहिए। इस रोज गृहारम्भ अशुभ रहता है।

गृहारम्भ में वृष वत्स गणना करके देखना चाहिए कि सूर्य के नक्षत्र से दिन के नक्षत्र तक गणना करने पर 7 तक अशुभ, उसके आगे 11 तक शुभ तथा आगे के 10 अशुभ मानें। अभिजित् सहित गणना करें।

7	11	10	28 नक्षत्र
अशुभ	शुभ	अशुभ	सूर्य जिस नक्षत्र में हो, उससे गणना करके चन्द्रमा के नक्षत्र तक का फल

गृहारम्भ में विशिष्ट के योग का भी उल्लेख मिलता है जिसमें शनिवार, स्वाति नक्षत्र, सिंह लग्न, शुक्ल पक्ष, सप्तमी तिथि, शुभ योग तथा श्रावण मास यह सब सात सकार से युक्त हैं तथा इन सातों सकारों के योग में यदि गृहारम्भ किया जाये, तो वाहन सुख, धन-धान्य की वृद्धि, पुत्र-पौत्रादि की प्राप्ति के साथ गृह-स्वामी को अनेक प्रकार का लाभ व सौभाग्य वृद्धि होती है।

शनिः स्वाति सिंह लग्नं शुक्ल पक्षश्च सप्तमी।
शुभ योगा श्रावणश्च सकाराः सप्त कीर्तिता।।

सिंह लग्न में गृहारम्भ निषिद्ध है। अकेले सिंह लग्न में गृहारम्भ न करें। लेकिन उपरोक्त योगों के साथ सिंह लग्न होने पर शुभ रहता है। गृहारम्भ शुक्ल पक्ष में करने से सुख व कृष्णपक्ष में करने से हानि होगी, अतः विचारपूर्वक ही गृहारम्भ करना चाहिए।

गृह-निर्माण के शुभारम्भ हेतु शुभ मुहूर्त देखना चाहिए। शुभ मुहूर्त की विशेष जानकारी के लिए किसी विद्वान् ज्योतिषी एवं वास्तु शास्त्रकार से सम्पर्क करना चाहिए। गृहारम्भ शुभ मुहूर्त में होने पर भी सभी बाधाओं से बचते हुए कुशलतापूर्वक गृह-निर्माण हो सकता है। शुभ मुहूर्त के अभाव में अनेक बाधाओं व आर्थिक कठिनाइयों तथा मानसिक पीड़ा का सामना करना पड़ता है। अतः शुभ मुहूर्त निकलवाकर ही गृह-निर्माण का शुभारम्भ करें ताकि वह शुभ फलदायक सिद्ध हो सके।



वास्तु शास्त्र में प्रवेश-द्वार की स्थिति

यदि द्वार अर्थात् दरवाजा न हो तो भवन या घर में कैसे प्रवेश करेंगे। इसलिए हर भवन और हर कक्ष में द्वार होने की अनिवार्यता है। वास्तु शास्त्र से द्वार-निर्माण को भी ज्योतिष और दिशाओं के आधार पर स्थान देने की संस्तुति की है। समरांगण-सूत्रधार में 'द्वार' पर विस्तृत विवेचन है। द्वार-निवेश भारतीय स्थापत्य का अति महत्वपूर्ण अंग है। इस विषय पर सूत्र-ग्रंथों में भी व्यापक समीक्षा है। यहाँ संक्षेप में सर्वप्रथम द्वार अंगों पर विचार कर लेना चाहिए। द्वार को प्रवेश, निर्गम आदि कई नामों से पुकारा जाता है। इसकी चौखट के ऊपर जो लकड़ी अथवा लिंटर निर्मित होती है उसको "उदुंबर" कहते हैं। इसी उदुंबर अथवा लिंटर के नीचे द्वार की स्थापना होती है। दोनों दीवारों का यह मध्यावकाश 'देहली' के नाम से पुकारा जाता है। संस्कृत में इसे कपाटाश्रय कहते हैं। द्वार के अन्य अंगों के नाम भी अलग-अलग होते हैं। पल्लों को द्वारपक्ष, कपाटपुट, पक्ष, विधान, वरण, द्वारसंवरण तथा दोनों पल्लों को मिलाकर कपाटयुगल कहते हैं। द्वार का तीसरा अंग कलिका अथवा अर्गला है। यह दोनों दरवाजों को बंद करने में सहायक होता है। इसके तीन नाम और हैं—अर्गलासूची (यदि इसका आकार बड़ा है), परिघा (पुर-द्वारों तथा गोपुर-द्वारों की अर्गला) तथा फुलीह जिसे गजावरण भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त प्राचीन कला में फलक, जाल तोरण, सिंह, कर्ण आदि विन्यास भी द्वार के अंग माने जाते हैं।

द्वार चौखट के घटकों में सात प्रमुख अंग विशेष ध्यान देने योग्य हैं—पेद्यापिंड-चतुष्टय, उदुंबर, द्वारशाखा, रूपशाखा, खल्वशाखा, बाह्य मंडला तथा भारशाखा। शाख्यों का अभिप्राय 'साइड फ्रेम्स' से लिया जाता है। इनके कुछ पारिभाषिक नाम भी हैं—देवी, नंदिनी, सुंदरी, प्रियानना, भद्रा।

वैसे तो द्वार के अर्थ अनेक हैं। वह दरवाजा भी है, गेट भी है और फाटक भी। भवन की लम्बाई-चौड़ाई, आकार-प्रकार तथा वातावरण-परिस्थिति के अनुकूल द्वारों की लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई तथा उनकी स्थिति के साथ-साथ उनकी भूषा, साज-सज्जा तथा सामग्री प्रयोग के लिए निर्धारण किया जाता है।

द्वार-प्रमाण :

सामान्य नियम के अनुसार दरवाजे की चौड़ाई से दुगुनी ऊँचाई होनी चाहिए। वास्तव में यह बड़ा ही वैज्ञानिक माप-विधान है, किन्तु यह सावधानी रखनी चाहिए

लग्न—मेष, मिथुन, सिंह, कन्या, वृश्चिक, कुम्भ व मीन लेकिन पंचबाण व भूमिशयन के दिन हो तथा केन्द्र व त्रिकोण स्थानों में शुभ ग्रह हों तथा तीसरे, छठे व 11वें स्थान में पाप ग्रहों के रहते हुए आठवाँ स्थान शुद्ध हो, तो नए भवन का निर्माण कार्यारम्भ शुभफलदायक रहता है।

भूमिशयन—जिस नक्षत्र में सूर्य हो, उससे 5/7/9/12/19/26 इन दिनों एवं नक्षत्रों में भूमि शयनशील रहती है। इनमें भी 4/8/5/3/6/7 घटी (कालांश) मात्र में भूमिशयन एवं शेष घटियों में भूमिशयन नहीं होता है।

भूशयन में मतभेद होने के फलस्वरूप सूर्य संक्रान्ति से 5/7/9/11/15/20/22/23/28वें दिन भूशयन दोष एवं कुछ विद्वान 7/9/15/21/24वें दिन मात्र ही भूशयन मानते हैं।

वार—गृहारम्भ के लिए सोम, बुध, बृहस्पति, शुक्र एवं शनिवार श्रेष्ठ एवं शुभ माने गए हैं। रविवार तथा मंगलवार को गृहारम्भ का त्याग करना चाहिए। इस रोज गृहारम्भ अशुभ रहता है।

गृहारम्भ में वृष वत्स गणना करके देखना चाहिए कि सूर्य के नक्षत्र से दिन के नक्षत्र तक गणना करने पर 7 तक अशुभ, उसके आगे 11 तक शुभ तथा आगे के 10 अशुभ मानें। अभिजित् सहित गणना करें।

7	11	10	28 नक्षत्र
अशुभ	शुभ	अशुभ	सूर्य जिस नक्षत्र में हो, उससे गणना करके चन्द्रमा के नक्षत्र तक का फल

गृहारम्भ में विशिष्ट के योग का भी उल्लेख मिलता है जिसमें शनिवार, स्वाति नक्षत्र, सिंह लग्न, शुक्ल पक्ष, सप्तमी तिथि, शुभ योग तथा श्रावण मास यह सब सात सकार से युक्त हैं तथा इन सातों सकारों के योग में यदि गृहारम्भ किया जाये, तो वाहन सुख, धन-धान्य की वृद्धि, पुत्र-पौत्रादि की प्राप्ति के साथ गृह-स्वामी को अनेक प्रकार का लाभ व सौभाग्य वृद्धि होती है।

शनि: स्वाति सिंह लग्नं शुक्ल पक्षश्च सप्तमी।
शुभ योगा श्रावणश्च सकारा: सप्त कीर्तिता।।

सिंह लग्न में गृहारम्भ निषिद्ध है। अकेले सिंह लग्न में गृहारम्भ न करें। लेकिन उपरोक्त योगों के साथ सिंह लग्न होने पर शुभ रहता है। गृहारम्भ शुक्ल पक्ष में करने से सुख व कृष्णपक्ष में करने से हानि होगी, अत: विचारपूर्वक ही गृहारम्भ करना चाहिए।

गृह-निर्माण के शुभारम्भ हेतु शुभ मुहूर्त देखना चाहिए। शुभ मुहूर्त की विशेष जानकारी के लिए किसी विद्वान् ज्योतिषी एवं वास्तु शास्त्रकार से सम्पर्क करना चाहिए। गृहारम्भ शुभ मुहूर्त में होने पर भी सभी बाधाओं से बचते हुए कुशलतापूर्वक गृह-निर्माण हो सकता है। शुभ मुहूर्त के अभाव में अनेक बाधाओं व आर्थिक कठिनाइयों तथा मानसिक पीड़ा का सामना करना पड़ता है। अत: शुभ मुहूर्त निकलवाकर ही गृह-निर्माण का शुभारम्भ करें ताकि वह शुभ फलदायक सिद्ध हो सके।



वास्तु शास्त्र में प्रवेश-द्वार की स्थिति

यदि द्वार अर्थात् दरवाजा न हो तो भवन या घर में कैसे प्रवेश करेंगे। इसलिए हर भवन और हर कक्ष में द्वार होने की अनिवार्यता है। वास्तु शास्त्र से द्वार-निर्माण को भी ज्योतिष और दिशाओं के आधार पर स्थान देने की संस्तुति की है। समरांगण-सूत्रधार में 'द्वार' पर विस्तृत विवेचन है। द्वार-निवेश भारतीय स्थापत्य का अति महत्वपूर्ण अंग है। इस विषय पर सूत्र-ग्रंथों में भी व्यापक समीक्षा है। यहाँ संक्षेप में सर्वप्रथम द्वार अंगों पर विचार कर लेना चाहिए। द्वार को प्रवेश, निर्गम आदि कई नामों से पुकारा जाता है। इसकी चौखट के ऊपर जो लकड़ी अथवा लिंटर निर्मित होती है उसको "उदुंबर" कहते हैं। इसी उदुंबर अथवा लिंटर के नीचे द्वार की स्थापना होती है। दोनों दीवारों का यह मध्यावकाश 'देहली' के नाम से पुकारा जाता है। संस्कृत में इसे कपाटाश्रय कहते हैं। द्वार के अन्य अंगों के नाम भी अलग-अलग होते हैं। पल्लों को द्वारपक्ष, कपाटपुट, पक्ष, विधान, वरण, द्वारसंवरण तथा दोनों पल्लों को मिलाकर कपाटयुगल कहते हैं। द्वार का तीसरा अंग कलिका अथवा अर्गला है। यह दोनों दरवाजों को बंद करने में सहायक होता है। इसके तीन नाम और हैं—अर्गलासूची (यदि इसका आकार बड़ा है), परिधा (पुर-द्वारों तथा गोपुर-द्वारों की अर्गला) तथा फुलीह जिसे गजावरण भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त प्राचीन कला में फलक, जाल तोरण, सिंह, कर्ण आदि विन्यास भी द्वार के अंग माने जाते हैं।

द्वार चौखट के घटकों में सात प्रमुख अंग विशेष ध्यान देने योग्य हैं—पेद्यापिंड-चतुष्टय, उदुंबर, द्वारशाखा, रूपशाखा, खल्वशाखा, बाह्य मंडला तथा भारशाखा। शाख्यों का अभिप्राय 'साइड फ्रेम्स' से लिया जाता है। इनके कुछ पारिभाषिक नाम भी हैं—देवी, नंदिनी, सुंदरी, प्रियानना, भद्रा।

वैसे तो द्वार के अर्थ अनेक हैं। वह दरवाजा भी है, गेट भी है और फाटक भी। भवन की लम्बाई-चौड़ाई, आकार-प्रकार तथा वातावरण-परिस्थिति के अनुकूल द्वारों की लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई तथा उनकी स्थिति के साथ-साथ उनकी भूषा, साज-सज्जा तथा सामग्री प्रयोग के लिए निर्धारण किया जाता है।

द्वार-प्रमाण :

सामान्य नियम के अनुसार दरवाजे की चौड़ाई से दुगुनी ऊँचाई होनी चाहिए। वास्तव में यह बड़ा ही वैज्ञानिक माप-विधान है, किन्तु यह सावधानी रखनी चाहिए

कि चौड़ाई चार फुट या कम-से-कम साढ़े तीन फुट से कम न हो क्योंकि आजकल के दुपटे चौड़े एक पल्ले वाले दरवाजों का यह माप-दण्ड नहीं हो सकता। प्राचीन आचार्य बड़े दूरदर्शी थे, अत: उन्होंने 'विश्वकर्मप्रकाश' तथा 'बृहत्संहिता' में द्वारों की ऊँचाई चौड़ाई से तिगुनी निश्चित की है। 'समरांगण सूत्रधार' में द्वार की ऊँचाई चौड़ाई से तिगुनी निश्चित की है। 'समरांगण सूत्रधार' में द्वार की ऊँचाई आदि के सम्बंध में जो आदेश है वह और भी वैज्ञानिक है। द्वार का माप-विस्तार गृह के अनुसार कल्पनीय है। मान लीजिए कि गृह अर्थात् कमरे का विस्तार 18 हाथ है तो दरवाजे का विस्तार 18 अंगुल होगा, और इस प्रकार जो ऊँचाई निकले उसके आधे से चौड़ाई करनी चाहिए। चूँकि द्वार ज्येष्ठ, मध्यम तथा कनिष्ठ तीन प्रभेद में विभाजित हो सकते हैं, अत: तीनों की अलग-अलग ऊँचाई और चौड़ाई बनानी चाहिए। 'द्वारपीठभित्तिमानादिक' के अनुसार जितनी भी ऊँची इमारतें होंगी उतने ही ऊँचे उनके दरवाजे होंगे।

द्वार-स्थिति :

किस दिशा का दरवाजा किस ओर प्रतिष्ठित किया जाए, यह द्वार-स्थिति का विचारणीय विषय है। जहाँ कहीं दरवाजा नहीं लगाया जा सकता, उसके लिए यह विधान विशेष कर वर्णानुरूप विदित है। जहाँ तक पदानुरूप विधान है उस सम्बंध में निम्न प्रवचन पर्याप्त है—

पूर्वद्वारं तु माहेंद्रं प्रशस्तं सर्वकामदम्।
गृहक्षतं तु विहितं दक्षिणेन शुभावहम्।
गंधर्वमथवा तत्र कर्तव्यं श्रेयसे सदा।
पश्चिमेन प्रशस्तं स्यात् पुष्पदंतं जयावहम्।
भल्लाटमुत्तरे द्वारं प्रशस्तं स्याद् गृहेशितृ:।

'समरांगण सूत्रधार' में चार विशिष्ट द्वार-कोटियों का भी वर्णन है—उत्संग, हीनबाहु, पूर्णबाहु तथा प्रत्याक्षाय। इनमें उत्संग वास्तु एवं भवन के एकदिक् द्वारों को कहेंगे जो मांगलिक माने गए हैं। हीनबाहु यथानाम निंदित है, इसमें वास्तु-प्रवेश से भवन वाम अर्थात् (बाएं) पड़ता है। अत: यह निवेश त्याज्य है। वास्तु-प्रवेश से भवन जहाँ दक्षिण की ओर है उसे पूर्णबाहु नामक द्वार कहते हैं और वह पूर्ण सिद्धियों का प्रवर्तक माना जाता है। वास्तुद्वार का विनियोग जहाँ भवन-पृष्ठाश्रित है, उसे प्रत्याक्षाय कहा जाता है।

द्वार-स्थिति के सम्बंध में यह निर्देशित है कि द्वार को मध्य में कभी भी नहीं रखना चाहिए।

मध्ये द्वारं न कर्तव्यं मनुजानां कथंचन।
मध्ये द्वारे कृते तत्र कुलनाश: प्रजायते।।

ऊपर के द्वारों की स्थिति नीचे के द्वारों की स्थिति के अनुसार ही रखी जानी चाहिए।

द्वार-गुण :

द्वार के गुण-द्वार की बनावट, उसके उचित उच्छाय आदि तथा उसमें प्रयुक्त दृढ़ एवं स्निग्ध काष्ठ के साथ-साथ उसकी आकृति आदि से सम्बंध रखते हैं। अत: समरांगण सूत्र (39.35-36) में इन सब गुणों का उल्लेख निम्नवत् किया गया है—

'वह सुस्थिति, चतुरस्र, कांत, स्वद्रव्योजित, ऋजु, स्वकीय-दिग्भागशील, लघु, न-अत्युच्च, न-अल्प, न-कुब्ज, अपिंडित, न-बहिर्गत, न-अध्मात, न-कृश, न-मध्यगत, न-अंतरकुक्षिक, न-विद्रत तथा न-संक्षिप्त होना चाहिए।' ये ही उसके गुण हैं।

द्वार-दोष :

द्वार-गुणों के विपरीत द्वार-दोष हैं; जैसे—कुश, विकृत, अत्युच्च, करकल, शिथिल, पृथु, वक्रं, विशाल, उत्तान, स्थूलाग्र, ह्रस्वकुक्षिक, स्वपादचलित, ह्रस्व, हीनवर्ण, मुखानत, पार्श्वग, सूत्रमार्ग भ्रष्ट। 'संमरांगणसूत्र' (48.75-78) में यह भी निर्दिष्ट किया गया है कि दरवाजा बंद करने पर यदि शब्द हो तो द्वार अप्रशस्त है। अपने आप जो दरवाजा बंद हो जाता है वह भी मंगलकारी नहीं होता है।

द्वार की सजावट :

दरवाजों पर पच्चीकारी अथवा विभिन्न आकृतियाँ उकेर कर उनकी सुन्दरता निखारना तथा आकर्षक बनाना एक अत्यन्त प्राचीन परिपाटि है। प्राय: प्राचीन भवनों में विशेषकर मन्दिरों में यह परम्परा आज भी देखी जा सकती है। द्वारों की सजावट के लिए जो विशेष विधान देवालायों के द्वारों हेतु निर्दिष्ट हैं, उसे निवास-भवनों के लिए हमारे पूर्वजों ने आवश्यक नहीं समझा था। 'समरांगणसूत्रधार' के 'अप्रयोज्य-प्रयोज्य' शीर्षक वाले अध्याय में इसका स्पष्ट उल्लेख किया गया है। स्थापत्य कला में सजावट तथा आकर्षक का होना अत्यन्त आवश्यक मांना गया है। केवल दरवाजे ही नहीं, इसीलिए प्राचीनकालीन भित्तियाँ, सभाएँ, गुफाएँ, देवतायतन, शस्याएँ, पंजर, आसन, यान, भांड, अलंकार, छत्र-पताका आदि विभिन्न चित्रकारी, पच्चीकारी, अलंकरण से युक्त पाई जाती हैं।

निम्न विषयक चित्रण द्वारा दरवाजों को अलंकृत करने का विधान उल्लेख विभिन्न ग्रन्थों में मिलता है—

(1) कुलदेवता-आकृति एक हाथ से अधिक नहीं होनी चाहिए।

(2) दो प्रतिहार अर्थात् द्वारपाल—अलंकृत, वेत्रखण्ड हाथों में लिए तथा खड्ग (शस्त्र) आदि धारण किए हुए, रूप से सम्पन्न, विचित्रांबर—भूषणधारी होने चाहिएँ।

(3) धात्री—बौनी और कुब्जा, साथ-साथ सांख्यों से पारिवारित तथा विदूषकों एवं कंचुकियों से अनुगत होनी चाहिए।

(4) शंख तथा पदनिधि—जो अपने मुखों से रत्नों और स्वर्णमुद्राओं को उगल रहे हों।

(5) अष्टमंगला—जो शंख और मत्स्य की माला पहने हुए द्वार-मण्डल के मध्य में विराजमान एवं गजों से स्नान कराई जा रही हो।

(6) लक्ष्मी—पद्मासना,पद्महस्ता, स्वलंकृता हो।

(7) सवत्सा धेनु—जो स्वच्छ मालाओं से विभूषित हो।

द्वार-निर्माण हेतु कुछ सावधानियाँ :

(1) अनेक मंजिल वाले मकान में दरवाजे के ऊपर दरवाजा होना चाहिए।

(2) दरवाजे के ऊपर दीवार और दीवार के ऊपर दरवाजा नहीं बनाना चाहिए।

(3) सीढ़ी और जिस सीढ़ी से ऊपर की मंजिल में प्रवेश मिलता है, इसके द्वार एक के ऊपर एक होने चाहिएँ, अर्थात् सीढ़ी के द्वार हर मंजिल पर एक ही स्थान पर होने चाहिएँ। ऐसा करने में यदि असुविधा हो तो सीढ़ी और उनके दरवाजे प्रदक्षिण क्रम से होने चाहिएँ। मकान के मध्य में और 'पद' के मध्य में दरवाजा कभी न रखा जाना चाहिए।

(4) भवन यदि मंजिल वाला हो तो भी अगला प्रवेश द्वार और पिछवाड़े का प्रवेश द्वार आमने-सामने नहीं होना चाहिए। आगे के दरवाजे से पिछला दरवाजा दिखाई नहीं देना चाहिए। मकान के दोनों पार्श्व भागों में दरवाजा नहीं हो।

(5) जहाँ पहले से ही दरवाजा हो, उसके नजदीक नया दरवाजा दीवार तोड़कर नहीं बनाना चाहिए। दरवाजे की जगह ऐसी है जहाँ मकान की मजबूती सबसे कम होती है। यदि वहाँ नजदीक ही दूसरा दरवाजा बनाया जाएगा तो मकान की मजबूती और कमजोर हो जाएगी।

(6) मजबूत लकड़ी से बना दरवाजा ही लगाना चाहिए लकड़ी घुन लगी या गाँठदार नहीं होनी चाहिए। सागवान की लकड़ी सबसे ज्यादा मजबूत होती है। आम की लकड़ी के जोड़ जल्दी ही टेढ़े-मेढ़े और खुल जाते हैं। दीमक, घुन आदि कीटाणु भी उन्हें शीघ्र ही खाकर खोखला कर देते हैं। सभी दरवाजों में एक ही प्रकार की लकड़ी काम में लाई जानी उपयुक्त रहती है।

(7) शीशम, रोहिणी, शाक, श्रीपर्णा, चंदन, सरल, अशोक, महुआ, सर्ज, नीम, पतंग, अर्जुन, लोध, खैर, शाल, सिंधुक, विजयसार, नागकेसर आदि वृक्षों की लकड़ी गृह-निर्माण कार्य में लाना उत्तम होता है।

(8) बहेड़ा, पीपल, बरगद, पाकड़, गूलर, कंटक, कैथ, रोगी तथा जले हुए वृक्ष की लकड़ी भूलकर भी इस्तेमाल नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इन वृक्षों की लकड़ी से बनी कील, चौखड, धरन किसी कार्य हेतु उपयुक्त नहीं होती है।

(9) दरवाजा दीवार में अच्छी तरह बनाया जाए, वह आयताकार अर्थात् इसके सब कोने काटकोन और सब बाजू समांतर होने चाहिएँ। दरवाजा सीधा हो, कहीं भी बांका, टेढ़ा या ऐंठा नहीं होना चाहिए। दरवाजा दीवार की मोटाई के मध्य भाग में न होकर मध्य भाग से कुछ बाहर की ओर होना चाहिए। इसकी चौड़ाई, ऊँचाई सब जगह एकसमान होनी चाहिए।



राशि-नक्षत्रों का शुभ-अशुभ फल

भूमि पर भवन-निर्माण तथा आवास करने से पूर्व हमें ऐसी विधि का प्रयोग करना चाहिए, ताकि भवन-निर्माणकर्त्ता अपने विषय में शुभाशुभ का विचार स्थान तथा उन्नति के विषय में विचार करके भवन का निर्माण करे। इसके लिए ज्योतिष ग्रन्थों में अनेक तरह के निर्देश हैं—

देशग्रामगृहज्वरव्यहतिषु दाने मनौ।
सेवा काकिणी वर्ग सङ्गरपुनर्भूमेलके नामभम्।।

देश, ग्राम, ज्वर, गृह, धूत, व्यवहार, मन्त्रप्रयोग, दान कार्य, नौकरी में काकिणी, विचार वर्गशुद्धि संग्राम एवं पुनर्भूमेलापक में नामराशि से ही विचार करना चाहिए।

अश्विनी सहित 3 नक्षत्र मेष राशि, मधा सहित 2 नक्षत्र सिंह राशि तथा मूल सहित 3 नक्षत्र धनराशि होती है, शेष राशियाँ दो-दो नक्षत्र की रहती हैं। यह मेलापक विवाह की तरह ही करना चाहिए।

गृह नक्षत्र	कृति रोहिणी मृगशिरा	आर्द्रा पुन० पुष्य	आश्लेषा मधा पू०फा०	उ०फा० हस्त चित्रा	स्वाति विशा० अनु०	ज्येष्ठा मूल पू०धा०	उ०षा० श्रवण धनि०	शत० पू०भा० उ०भा०	रेवती अश्वि भरणी
फल	उद्वेग	पुत्र-प्राप्ति	धन-प्राप्ति	शोक	शत्रु भय	राज भय	मृत्यु	सुख	प्रवास

आखिरी कोष्ठक में निर्दिष्ट वेरयोनियाँ सर्वथा त्याज्य होती हैं।

	अश्वि.	स्वाति	धनि०	भरणी	पुष्य	श्रव०	उ०षा०
नक्षत्र	शत०	हस्त	पू०भा०	रेवती	कृति०	पू०षा०	अभि०
योनि	हय	महिष	सिंह	गज	मेष	वानर	नकुल
वैर	दोनों का परस्पर		वही		वही		वही

नक्षत्र	रोहि० मृग	अनु० ज्येष्ठा	मूल० आर्द्रा	पुन० श्ले०	मधा पू०फा०	चित्रा विशा०	उ०फा० उ०भा०
योनि	सर्प	मृग	श्वान	मार्जार	मूषक	व्याघ्र	गौ
वैर	वही	वही		वही		वही	

ग्रह मित्र	सूर्य चं.मं.बृ.	चन्द्र बु.सू.	भौम सू.चं.बृं.	बुध सू.शु.	बृहस्पति सू.चूं.मं.	शुक्र बु.श.	शनि शु.बु.
सम	बुध	मं.बृ. शु.श.	शु.श.	बृ.श.मं.	शनि	मं.बृ.	बृह.
शत्रु	शु.श.		बुध	चन्द्र	बु.शु.	सू.चं.	सू.चं.मं.

आवृत्तिभिर्मैस्त्रिभिरविश्वमाघं क्रमोत्क्रमात् सङ्गणयेदुडूनि।
यदेक पर्वण्युभयोश्च हर्म्यं हर्म्ये शयोर्भेऽति शुभ तदा स्यात्।।

कहे गए नाड़ी विचार ग्रह, नक्षत्र एवं गृहपति के नक्षत्र के साथ किया जाता है। ग्रह एवं गृहपति की आदि, मध्य, अन्त्य में से कोई एक नाड़ी पड़ जाये, तो उत्तम रहता है। नाड़ी विचार में नक्षत्रों का क्रम सर्पाकार चलता है, जैसाकि चक्र द्वारा सुस्पष्ट है।

नाड़ी चक्रम

आदि	अश्विनी	आर्द्रा	पुनर्वसु	उ.फा.	हस्त	ज्येष्ठा	मूल	शत.	पू.भा.
मध्य	भरणी	मृग.	पुष्य	पू.फा.	चित्रा	अनु.	पू.षा.	धनि.	उ.भा.
अन्त्य	कृत्ति.	रोहिणी	श्लेषा	मधा	स्वाति	विशा.	उ.षा.	श्रवण	रेवती

नराकार शुभाशुभ चक्र

स्थान	मस्तक	मुख	कुक्षि	पाद	पीठ	नाभि	गुदा	दायां हाथ	बायां हाथ
नक्षत्र फल	5	3	5	6	1	4	1	1	1
	लाभ	धन-हानि	धन-धान्य-वृद्धि	स्त्री-नाश	पाद हानि	सम्पत्ति	भय पीड़ा	क्रन्दन	भेद

निवासकर्त्ता को नाम की राशि से भी गाँव अथवा नगर वास के लिए शुभ-अशुभ का विचार कर लेना चाहिए। अपने नाम की राशि से गाँव की नामराशि 2/5/9/10/11 हो तो उस नगर अथवा ग्राम में निवास करना श्रेष्ठ फलदायी रहता है और चौथी, आठवीं. बारहवीं राशि हो तो रोग, पहली तथा सातवीं राशि हो तो दुश्मनी तथा तीसरी या छठी राशि स्थान की हो तो हानि समझनी चाहिए। ऐसे स्थान पर वास नहीं करना चाहिए। वास्तु शास्त्रकारों ने ग्रामवास के लिए कांकिणी का भी विचार किया है—

स्ववर्गं द्वि गुणं कृत्वा पर वर्गेण योजयेत्।
अष्टभिश्च हरेद्भागं योऽधिकः स ऋणी भवेत्।।

अपने नाम के अक्षर की वर्ग संख्या को दोगुना करके दूसरे की वर्ग-संख्या का योग करें। योगफल में आठ की संख्या से भाग देकर जो शेष बचे, वही कांकिणी कहलाती है। दोनों की कांकिणियों में जिसकी संख्या अधिक रहे, वह देनदार

अर्थात् ऋणी तथा दूसरा लाभप्रद या लेनदार रहता है। वर्ग आठ होते हैं, इनकी गणना निम्न वर्ग तथा संख्या के आधार पर की जानी चाहिए।

वर्ग	अ	क	च	ट	ल	प	य	श
	1	2	3	4	5	6	7	8

पंचाङ्गों में वर्ग बैर के मुताबिक इन वर्गों के गरुड़, मार्जार, सिंह, श्वान, मूषक, मृग, सर्प तथा खरगोश (शशक) ये आठ स्वामी होते हैं। अपने वर्ग से 5वाँ वर्ग दुश्मन रहता है। इसलिए स्थान तथा भू-स्वामी को अपने वर्ग से 5वें वर्ग को छोड़कर शुभाशुभ की जानकारी करनी चाहिए।

विवाह मेलापक तथा अन्य साझेदारी कार्यों में वर्ग, बैर, विचार का शास्त्रकारों ने वर्णन किया है। नगर तथा नगर में निवासकर्त्ता की राशियों के स्वामियों में दोस्ती या उनके स्वामी एक हों, तो उस नगर में निवास करना शुभ होता है, समान हों, तो सम तथा दुश्मन हों, तो निवास नहीं करना चाहिए।

नगर-ग्राम में निवास करने के लिए शिवाबलि (गीदड़ी) का विधान भी है, जिसमें शिवा को बलि प्रदान कर, उसके शब्दों का दिशा के अनुसार ही फल का विचार करना चाहिए। यदि शिवाबलि पूर्व की दिशा में मुख करके बोलती है, तो दुश्मनी, आग्नेय में डर (भय), दक्षिण में कल्याण, नैर्ऋत्य में अशुभ व अमंगल, पश्चिम में सुख, उत्तर में शुभ, वायव्य में भय, ईशान

(ब) रक्त गन्ध युक्त भूमि — क्षत्रिया
(स) सस्य (अन्न) गन्ध युक्त भूमि — वैश्या
(द) मद्य गन्ध युक्त भूमि — शूद्रा

रसों के अनुसार जमीन के लक्षण :

(अ) मधुर रस से युक्त भूमि — ब्राह्मणी
(ब) कषाय रस से युक्त भूमि — क्षत्रिया
(स) अम्ल (खट्टे) रस से युक्त भूमि — वैश्य
(द) कटु (कडुआ) रस युक्त भूमि — शूद्रा

ब्राह्मणी भूमि सुख देने वाली, क्षत्रिया भूमि राज्य सुख देने वाली, वैश्या भूमि धन- धान्य प्रदान करने वाली तथा शूद्रा भूमि सर्वथा त्याज्य होती है।

वशिष्ठ तथा नारद आदि ऋषियों के मतानुसार, ब्राह्मणों के लिए श्वेत, क्षत्रियों के लिए रक्त, वैश्यों के लिए हरित तथा अन्य व्यक्तियों के लिए काले रंग की मिट्टी वाली भूमि शुभ मानी जाती है। इन चारों वर्णों में ब्राह्मण घृत गन्ध, क्षत्रिय रक्त गन्ध, वैश्य अन्न गन्ध तथा अन्य लोगों को मद्य गन्ध वाली भूमि सुखदायी मानी जाती है।

इसी प्रकार मिट्टी के रंग, कुशा, घास, सुगन्ध तथा रस के अनुसार भूमि की गुणवत्ता के विषय में भी विचार करें।

आय व्ययौ च भूशुद्धिं तृणगेहे न चिन्तयेत्।
शिलान्यासादि नो कुर्यात् तथागारे पुरातने ।।

पुराने घर के जीर्णोद्धार में तथा तृणगृह के निर्माण में शिलान्यासादि का शास्त्र निषेध करता है।

गृहपिण्ड को 3 से गुणा करके 9 से भाग दें, जो शेष रहे, उसके क्रम से सूर्यादि ग्रह अंशों के स्वामी होंगे; जैसे—1 शेष में सूर्य, 2 में चन्द्रमा, 3 में मंगल, 4 में राहु, 5 में गुरु, 6 में शनि, 7 में बुध, 8 में केतु तथा 9 में शुक्र, ये ग्रह अंशेश होते हैं।

गृहपिण्ड को 8 से गुणा कर गुणनफल में 12 का भाग देकर, जो शेष होगा उसको निम्नांकित क्रम से (द्रव्य) समझें, 1 शेष में वस्त्र, 2 में शत्रु, 3 में द्रव्य, 5 में धान्य, 6 में पृथ्वी, 7 में परिवार, 8 में विद्या, 9 में पशु, 10 में वाटिका, 11 में भाण्ड-भूषण, 12 में धन समझें।

गृहपिण्ड में 3 से गुणा करके 8 से भाग देने पर जो शेष बचे, उसे ऋण समझना चाहिए। इसका स्वामी पहले बतायी गयी विधि से समझना चाहिए।

गृहपिण्ड में 8 की गुणा करके 26 से भाग दें, वह अश्विनी नक्षत्र से गिनकर नक्षत्र समझना चाहिए।

पूचदि तारा से दुश्मनी, विद्युत तारा से विपदाएँ, निधन तारा से सर्वदा निर्धन रहता है। यानी 3, 5, 6 में ताराएँ शुभ नहीं होतीं।

तृतीय तारा दु:खद, पंचम भाग का तारा तथा सप्तम तारा विनाशकारी माना गया है।

गृह-स्वामी का नक्षत्र व गृह नक्षत्र यदि एक ही हो, तो गृहपति का विनाश होता है, ऐसा महर्षि वशिष्ठ का सुविचार है।

गृहपिण्डं गजैर्हत्वा तिथिभिर्भागमाहरेत्।
शेषं चात्र तिथिर्ज्ञेया वास्तु शास्त्रविशारदैः।।
शक्राहतं क्षेत्रफलं त्रिशद्भक्तावशेषकम्।
तिथि: प्रतिपदादिस्याद्दर्शरिक्ता विवर्जयेत्।।

गृहपिण्ड को 8 से गुणा करके 15 का भाग दें, शेष को तिथि समझें अन्य आचार्यों के मतानुसार गृहपिण्ड को 14 से गुणा करके 30 से भाग दें, शेष शुक्ल पक्ष से प्रतिपदा आदि तिथियाँ होंगी। इसमें रिक्ता तिथि अमावस्या को त्याद दें।

गृहपिण्ड को 4 से गुणा करके 27 का भाग देने से जो शेष बचेगा, क्रमशः विषकुम्भादि योग होंगे। इनका फल नाम के अनुरूप ही होता है। इनमें द्युति, अति गण्ड, शूल, व्याघत, गण्ड, वज्र, परिध, वैधृति तथा व्यतिपात ये योग गृहकर्म में वर्जित हैं।

गृहपिण्ड को 8 से गुणा कर 120 से भाग दें, शेष गृह आयु हो गया, जब तक आयु की अवधि शेष है, तब तक गृह शुभ है या पूर्वायु गृह शुभ है।

पृथिव्यावोऽनली वायुराकाश इति पञ्चभि:।
गृहस्थायुषि सम्पूर्णे विकारो जायते ध्रुम्।।

अक्सर पूर्णायु वाले गृहों का विनाश होते देखा जाता है, इस विषय में विचार करते हैं। एक हाथ के क्षेत्रफल को 8 से गुणा करके 60 से भाग करें। जो संख्या प्राप्त हो, 10 से गुणा करके गुणनफल गृह की उम्र होगी। भाग देने पर जो शेष रहे, उसमें 5 का भाग देकर जो शेष रहे, उसके क्रम से पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाशजन्य दोषों से घर का नाश होता है या टूट-फूट आदि हुआ करती है।

गृह-स्वामी के हाथ से दीर्घविस्तार (इन दोनों) का गुणा करके 9 से भाग देकर शेष मण्डल होता है; जैसे—पहले शेष में प्रदाता, दूसरे में भूपति, तीसरे में नपुंसक, चौथे में चोर, पाँचवे में विलक्षण, छठे में भोगी, सातवें में धनाढ्य, आठवें में निर्धन, नवें में धनद (कुबेर) होता है।

गृह-स्वामी के पैर के अंगुठे से कान तक सीधे बाँस का एक डण्डा नाप लीजिए। उस डण्डे से पूर्व से पश्चिम तक व उत्तर से दक्षिण तक, भूमि को नाप लें, दोनों तरफ की नाप लेकर उन्हें परस्पर गुणा करें, गुणनफल में 8 से भाग देकर शेष संख्या के अनुसार उसका शुभ-अशुभ फल कहें। एक शेष रहे, तो रजक का स्थान होता है, इसका फल है कि धन घटता-बढ़ता रहे। दो शेष में चर्मकार का स्थान, इसमें निवास करने से भूख-प्यास से ब्यात रहता है। 3 शेष में ब्राह्मण का स्थान, इसमें उद्वेग। 4 शेष में शूद्र का स्थान, इसमें धन-धान्य से युक्त। 5 शेष में योगी का स्थान, इसमें अत्यन्त उदासीनता। 6 शेष में गोवस्थान, इसमें सर्वसिद्धि। 7 शेष में क्षत्रिय स्थान, इसमें दंगा-फसाद तथा 8 में क्रिया-स्थान, इसमें रोग तथा मरण होता है।

भं नागतष्टं व्ययईरितोऽसौ ध्रुवादि नामा क्षैरयुक् सपिण्डः।
तष्टोगुणैरिन्द्रकृता तभूपा ह्यंशा भबेयुर्न शुभोऽन्तकोऽत्र।।

पिण्डगत नक्षत्र में 8 का भाग देने पर जो संख्या प्राप्त हो, उसका नाम व्यय है, उसमें ध्रुव आदि नामाक्षर जोड़कर, पिण्ड संख्या भी जोड़ दें तथा उसमें 3 से भाग करें। 1 शेष में इन्द्र, 2 में यमराज, 3 में राजा का अंश रहता है। इसमें यमराज का अंश 2 शुभ नहीं होता है।

आमदनी से कम खर्चा हो जाये, तो उस गृह में वास नहीं करना चाहिए, मूलराशि (क्षेत्रफल) में खर्च को जोड़कर गृह के नामाक्षर भी जोड़ दें, इसमें तीन का भाग देने से जो शेष रहे क्रम से 1 में इन्द्र, 2 में यम, 3 में राजा का अंश रहता है, इसमें यम का अंश अग्राह्य रहता है।

नक्षत्रे चाष्टभिर्भक्ते योऽङ्क स स्याद्गृहे व्ययः।
पैशाचस्तु समाये स्याद्राक्षसोप्यधिके व्यये।।

पिण्डगत नक्षत्र को 8 से भाग करने पर खर्च निकल आता है, आमदनी एवं खर्च समान होने से उस गृह का नाम पिशाच तथा अधिक खर्च होने से उसका नाम राक्षस हो जाता है। इस विषय में 'नारायण भट्ट' का मत इस प्रकार है— 'ऋक्षे सर्पहृते व्ययो गृहमसत् स्वल्पाय भूरिव्ययम्।'

पूर्वद्वार में शाला ध्रुवांक 1, दक्षिण में 2, पश्चिम में 4, उत्तर में 8 होता है। जितने भी द्वार मकान में बनाने हों, उतने ध्रुवांक जोडें, फिर उसमें 1 और जोड़ दें।

जोड़कर जो संख्या आए, वह ध्रुवादि शाला का नाम समझें।

ध्रुवा धान्यं जयं नन्दं खरं कान्तं मनोरमम्।
सुमुखं दुर्मुखं क्रूरं रिपुदं धनदं क्षयम्।।
आक्रन्दं विपुलं चैव, विजयं चेति षोडशाः।
गृहनामानि शास्त्रऽस्मिन् समाख्यातानि सूरिभिः।।

सोलह प्रकार के गृहों के नाम—ध्रुव, धान्य, नन्द, जय, कान्त, खर, सुमुख, मनोरम, क्रूर, दुर्मुख, धनक, रिपुद, आक्रन्द, क्षय, विपुल, विजया।

सौम्यं फाल्गुन वैशाख, माघ-श्रावण कार्तिका।
मासाः स्युर्गृह निर्माणे पुत्राऽऽरोग्यफलप्रदाः।।

मार्गशीर्ष, फाल्गुन, माघ, वैशाख, श्रावण तथा कार्तिक में गृह आदि का निर्माण करने से गृहपति को पुत्र एवं स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त होता है।

वैशाख, श्रावण, मार्गशीर्ष, माघ, फाल्गुन में अगर मिथुन, कन्या, धनु एवं मीन से अन्य राशि के सूर्य हों, तो गृह-निर्माण शुभ रहता है।

उपरोक्त मासों में कन्या का सूर्य नहीं होता, इसीलिए वहाँ कन्या राशि के सूर्य से रहित कार्तिक मास का संकेत समझना चाहिए, क्योंकि कार्तिक में तुला, वृश्चिक का सूर्य हो जाता है। सौरमास के अनुसार तुला व वृश्चिक का सूर्य ग्राह्य माना जाता है; जैसे— *'कन्या रोगं तुले सौख्यं वृश्चिके धनवर्धनम्।'*

योगेश्वराचार्य के मतानुसार, 'चैत्र, ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद, माघ, आश्विन व कार्तिक मासों में भवन-निर्माण नहीं करना चाहिए।'

मेष के सूर्य (वैशाख) में गृह-निर्माण शुभ, वृष (ज्येष्ठ) में धन-वृद्धि, मिथुन (आषाढ़) में मृत्यु, कर्क (श्रावण) में शुभ, सिंह (भाद्रपद) में भृत्यवृद्धि, कन्या (आश्विन) में रोग, तुला (कार्तिक) में धन-वृद्धि, धनु (पौष) में महा-हानि, मकर (माघ) में धनागम, कुम्भ (फाल्गुन) में रत्न-लाभ तथा मीन (चैत्र) में भयप्रदायक माना गया है।

उपरोक्त अर्थ को निम्नलिखित चक्र द्वारा समझने का प्रयास करें—

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या
मास	वैशाख	ज्येष्ठ	आषाढ़	श्रावण	भाद्रपद	आश्विन
फल	शुभ	धन-लाभ	मरण	शुभ	भृत्य-वृद्धि	रोग

राशि	तुला	वृश्चिक	धन	मकर	कुम्भ	मीन
मास	कार्तिक	मार्गशीर्ष	पौष	माघ	फाल्गुन	चैत्र
फल	सुख	धन-लाभ	हानि	धन-लाभ	रत्न-लाभ	भय

कुम्भेऽर्के फाल्गुने प्रागपरमुखगृहं श्रावणे सिंह कर्क्योः।
पौषे नक्रे च याम्योत्तर मुखसदनं गोऽजगेऽर्के च राधे।।
मार्गे जूकालिगे सद्ध्रुवमृदुवरुण स्वातिवस्वर्क पुष्यैः।
सूती गेहन्त्वदित्यांहरि भविधिभयोस्तत्र शस्तः प्रवेशः।।

फाल्गुन मास में कुम्भ के सूर्य हों, श्रावण में सिंह, कर्क के एवं पौष में मकर के सूर्य हों, तो पूर्व-पश्चिम द्वार का गृह निर्माण शुभ माना जाता है। वैशाख में मेष,

वृष के तथा मार्गशीर्ष में तुला, वृश्चिक के सूर्य हों, तो दक्षिण-उत्तर द्वार का गृह निर्माण शुभ रहता है। ध्रुव, मृदु, शतभिषा, धनिष्ठा, हस्त, स्वाति, पुष्य नक्षत्रों में गृहारम्भ शुभ रहता है। लेकिन सूतिका-निर्मागि पुनर्वसु नक्षत्र में शुरू करें तथा श्रावण अथवा अभिजित् में उक्त गृह में प्रवेश करें।

मकर, सिंह, कर्क, कुम्भ के सूर्य में पूर्व-पश्चिम द्वार का गृह तथा तुला, मेष, वृष, वृश्चिक के सूर्य में दक्षिण-उत्तर द्वार का गृह निर्माण शुभ रहता है। मीन, धन, मिथुन, कन्या के सूर्य में जो अनभिज्ञ लोग गृह-निर्माण कराते हैं, वे रोग व शोक को भोगते हैं।

किसी आचार्य के मतानुसार, मेष के सूर्य में चैत्र, वृष में ज्येष्ठ, कर्क में आषाढ़, सिंह में भाद्रपद, तुला में आश्विन, वृश्चिक में कार्तिक, मकर में पौष, कुम्भ में माघ मास गृहारम्भ के लिए शुभ रहता है। कार्तिक में कन्या का सूर्य शुभ नहीं रहता तथा माघ में धन का सूर्य शुभ नहीं माना जाता।

खात भूमिशोधन राहु के मुख से नहीं करना चाहिए। मुखस्थ-विदिशा से पाँचवीं (1 ईशान, 2 पूर्व, 3 आग्नेय, 4 दक्षिण, 5 नैर्ऋत्य) विदिशा राहु की पुच्छ संज्ञक है। मुख तथा पुच्छ के मध्य भाग को पीठ कहते हैं। पीठ से खात शुभ माना जाता है; जैसे—देवालय खात में चैत्र, 12 वैशाख, 1 ज्येष्ठ, 2 में राहु का मुख ईशान कोण में पुच्छ नैर्ऋत्य कोण में है, तो पीठ आग्नेय कोण में हुई, इसी कोण से खात को आरम्भ करना चाहिए। 60 चक्र में स्पष्ट है—

राहुमुखचक्रम्

विदिशायें	ईशान में	वायव्य में	नैर्ऋत्य में	आग्नेय में
देवालय में	12।1।1 के सूर्य में राहुमुख	3।4।5 के सूर्य में राहुमुख	6।7।8 के सूर्य में राहुमुख	9।10।11 के सूर्य में राहुमुख
गृहारम्भ में	5।6।7 के सूर्य में राहुमुख	8।9।10 के सूर्य में राहुमुख	11।12।1 के सूर्य में राहुमुख	2।3।4 के सूर्य में राहुमुख
जलाशय में	10।11।12 के सूर्य में राहुमुख	1।2।3 के सूर्य में राहुमुख	4।5।6 के सूर्य में राहुमुख	7।8।9 के सूर्य में राहुमुख

जल या अग्नि के द्वारा गिरे हुए मकान का जीर्णोद्धार, श्रावण, माघ, कार्तिक में करना चाहिए, इसमें गृह-स्वामी को सुख की उपलब्धि होती है।

पूर्वोक्त गृहारम्भ के मासों में या केवल माघ मास में भी तालाब, बगीचा, देवमन्दिर आदि शुभ कृत्य करना मुनियों का मत है।

तृण या लकड़ी से घर बनाने में मास-शुद्धि की आवश्यकता नहीं पड़ती, क्योंकि ये चिरस्थायी नहीं होते, ईंट या पत्थर द्वार स्थायी गृहों का निर्माण उक्त निन्दित मासों में नहीं करना चाहिए। ज्येष्ठ में पशुगृह, आश्विन में धान्यगृह, माघ

में गौशाला तथा चैत्र में धारागृह यानी गंगा के तटवर्ती भवन का निर्माण शुभ माना जाता है।

> शुक्लपक्षे भवेत्सोख्यं, कृष्णे तस्करतो भयम्।
> गृह-निर्माण कार्येषु पक्षशुद्धिं विचितन्तयेत्।।
> गीर्वाणपूर्वगीर्वाण मन्त्रिणोर्दृश्यमानयो:।
> शुक्ल पक्षे दिवाकार्यं न निर्माणञ्च रात्रिषु।।

शुक्लपक्ष में गृहारम्भ करने से सर्वाधिक सुख, कृष्णपक्ष में चोरों का भय रहता है। महर्षि वशिष्ठ के मतानुसार, यदि गुरु-शुक्र उदय हों, तो शुक्ल पक्ष के दिनों में गृहारम्भ करना चाहिए, न कि रात्रि के समय।

प्रतिपदा को गृह-निर्माण का प्रारम्भ करने से निर्धनता, चतुर्थी को धनहानि, अष्टमी को उच्चाटन, नवमी को शस्त्रभय, अमावस्या को राजभय तथा चतुर्दशी को स्त्री हानि होती है। महर्षि भृगु के मतानुसार, चतुर्थी, अष्टमी, अमावस्या तिथियाँ, सूर्य, चन्द्र व मंगलवार सर्वथा त्याज्य हैं।

मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, उत्तराषाढ़ा, रेवती, पुष्य, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, शतभिषा व धनिष्ठा नक्षत्रों में गृहारम्भ शुभ रहता है। महर्षि पराशर के मतानुसार, चित्रा, शतभिषा, स्वाति, पुष्य, हस्त, रोहिणी, मूल, रेवती, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, श्रवण, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, धनिष्ठा, अश्विनी, अनुराधा व मृगशिरा इन नक्षत्रों में वास्तुपूजन करने से लक्ष्मी की उपलब्धि होती है।

पुनर्वसु, हस्त, पुष्य, मृगशिरा, स्वाति, रोहिणी तीनों उत्तरा, अनुराधा, अश्विनी, चित्रा व श्रवण नक्षत्रों को तथा वृश्चिक व कुम्भ लग्नों को रिक्ता (4।9।14) तिथियों को छोड़कर बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनिवार में शुभ चन्द्रमा में गृहारम्भ व सूतिका गृह का निर्माण प्रारम्भ करने से गृह-स्वामी का कल्याण होता है।

वास्तुकर्म में अश्विनी, तीनों उत्तरा, स्वाति, चित्रा, हस्त, पुष्य, ज्येष्ठा, अनुराधा, रोहिणी व मृगशिरा ये नक्षत्र शुभ हैं। रविवार व मंगलवार को छोड़कर शेष दिन पूर्णा (5।10।15) तथा नन्दा (1।6।11) तिथियाँ शुभ हैं। शूल, वैधृति, परिध, गण्ड, व्याघात एवं वज्रयोग अशुभ माने जाते हैं।

योगों में विषकुम्भ तथा व्यतिपात को छोड़कर शेष शुभ रहते हैं। कारकों में नाग, वव, गर एवं तैतिल श्रेष्ठ रहते हैं। तिथियों में समतिथियाँ 2, 4, 6, 8, 10, 12, 14, 30 अशुभ मानी गयी हैं। मुहूर्तों 2, 3, 5, 6, 7, 8, 9, 13 ये शुभ मुहूर्त हैं, लग्नों में 2, 3, 6, 7, 9, 11 लग्न उत्तम कहे गए हैं।

अनुराधा, स्वाति, ज्येष्ठा, रोहिणी, पूर्वाफाल्गुनी, धनिष्ठा इन नक्षत्रों में स्तम्भ की ऊँचाई आदि करना चाहिएँ। इनके अलावा अन्य वर्जित माने गए हैं।

> द्वयङ्गेवा स्थिरमे च सौम्यसहिते लग्नेशुभैर्वीक्षिते।
> सौम्ये वीर्य समन्वितैश्च दशमे निर्माणमाहुर्बुधा:।।
> पञ्चाङ्कैर्विधुर्कन्द्रगै: सुफलदं पापैस्त्रिषष्ठापगै:।
> क्रूरो ह्यष्ठम संस्थितोऽपि मरणं कर्तुर्विधत्ते तराम्।।

शुभ ग्रह से युक्त तथा दृष्ट द्विस्वभाव एवं स्थिर लग्न में वास्तुकर्म शुभ रहता है। शुभग्रह बलवान् होकर दशम् स्थान हो, तो वास्तुकर्म शुभ होता है अथवा शुभ ग्रह पञ्चम, नवम हों तथा चन्द्रमा 1, 4, 7, 10वें स्थान में हो तथा पापग्रह तीसरे, छठे, ग्यारहवें स्थान में हों तो शुभ रहता है। यदि आठवें स्थान में पापग्रह हों, तो गृह-स्वामी की मौत हो जाती है।

रविवार, मंगलवार, रिक्ता (4, 9, 14) अमावस्या, सप्तमी तिथियाँ, बाण पञ्चक, चरलग्न, इन सभी को त्यागकर आठवें, बारहवें के अतिरिक्त शुभग्रह हों तथा तीसरे, छठे, ग्यारहवें में पापग्रह हों, तो गृहारम्भ शुभ रहता है।

शनौ स्वाति सिंहलग्नं शुक्लपक्षश्च सप्तमी।
शुभ योगः श्रावणश्च सकाराः सप्तकीर्तिता॥
सप्तानां योगतो वास्तुः पुत्रावित्तप्रदः सदा।
गजश्च धनधान्यादिनित्यं तिष्ठन्ति सर्वदा॥

शनिवार स्वाति नक्षत्र, सिंह लग्न, सप्तमी तिथि, शुक्ल पक्ष, शुभ योग श्रावण इन सात सकारों के योग में किया गया वास्तु कर्म पुत्र, हाथी, धन-धान्य प्रदाता होता है।

अगर बलयुक्त बृहस्पति गृहेश हो, तो सुख-प्राप्ति, शुक्र से धान्य, चन्द्रमा से लक्ष्मी, सूर्य से सूखोपलब्धि आदि चारों फल देता है। यदि उक्त चारों ग्रह नीच या अस्तंगत हों, तो अपना पूर्ण फल नहीं देते। लग्न में बृहस्पति, सप्तम में बुध, सूर्य, षष्ठ में शुक्र, चतुर्थ में शनि तथा तृतीय में शनि हो, तो वह गृह शतायु होता है।

दूसरी तरह से गृह की आयु का विचार लिखते हैं—अगर शुक्र लग्न में अथवा 11वें में, सूर्य, बुध दसवें तथा केन्द्र में बृहस्पति हो, तो गृह की आयु 100 वर्ष होती है। शुक्र लग्न में, सूर्य तीसरे स्थान में, बृहस्पति पाँचवें में तथा मंगल छठे में हो तो घर की उम्र 200 वर्ष की होती है।

अगर गृह-निर्माण लग्न से सूर्य सातवें में, शनि तीसरे में हो, तो उस घर की उम्र 100 वर्ष की होती है अथवा सूर्य तीसरे में, मंगल छठे में हो तो उस गृह की आयु 200 वर्ष की होती है।

लग्न में शुक्र, दशम में बुध, 11वें में सूर्य, केन्द्र में गुरु हो, तो उस घर की आयु 100 वर्ष की होती है। चौथे में गुरु, दसवें में चन्द्रमा, 11वें में शनि व मंगल हों, तो ऐसे घर की आयु 80 वर्ष होती है। ऐसा विद्वानों का सुविचार है।

प्रारम्भ काले यदि मन्दभौमो लाभाश्रितौ देवगुरुश्चतुर्थे।
चन्द्रोदये चेत्त्हर दाम शीतिः स्थितिर्नियुक्ता भवन्स्थ सद्भिः॥

गृहारम्भ के समय अगर शनि, मंगल 11वें तथा बृहस्पति चौथे, चन्द्रमा दसवें हो, तो उक्त गृह की आयु 80 वर्ष की होती है।

लग्न में सूर्य होने से वज्रपात, चन्द्रमा से कोष-हानि, मंगल से मौत, बुध से कुशल शक्ति व आयु-वृद्धि, बृहस्पति से धर्मादि कार्य, शुक्र से पुत्रोत्पत्ति तथा शनि से दरिद्रता होती है।

यामित्र के शुद्ध होने पर, विवाहोक्त महादोषों, रिक्ता तिथियों (4,9,14) रविवार, मंगलवार, चर लग्न एवं चर नवांश को छोड़कर सूर्य, चन्द्र, गुरु, शुक्र के उच्च तथा बलवान होने पर किया गया गृहारम्भ शुभ होता है।

वर-कन्या की कुण्डली के मिलान के समान ही गृह मेलापक भी रहता है, अगर गृह और गृह-स्वामी की एक ही नाड़ी हो, तो फिर अन्य विषयों का विचार न करें।

जो घर 32 हाथ से अधिक विस्तृत हो या जिसमें 4 द्वार हों अथवा तृण निर्मित गृह में एवं अलिन्द आदि में भी आयादि का विचार नहीं किया जाता।

जिस गृह का विस्तार 32 हाथ से अधिक हो, उसमें विद्वज्जन आयादि गुणों का विचार नहीं करते।

बुधे द्रविणं संपत्तिर्गुरो धर्मसमागमः।
यथा काम विनोदेन भृगौ कालं वज्रदेहि।।

दूसरा सूर्य हानि, चन्द्रमा शत्रु-नाश, मंगल बन्धन, बुध द्रव्य-सम्पत्ति, बृहस्पति धर्म समागम, शुक्र विनोद, शनि विघ्नकारक होता है।

तीसरे स्थान से शुभ ग्रह मंगलकारी होते हैं। तृतीय पापग्रह भी शुभ रहते हैं, शीघ्र इच्छापूर्ण करते हैं। चौथे गुरु राजद्वार से सम्मान दिलाता है। चौथा चन्द्रमा सदा लाभकारी होता है। शुक्र भूमि लाभ, सूर्य मित्र-वियोग, मंगल मित्र-भेद, चन्द्रमा बुद्धि-नाश, शनि लाभकारी होता है।

पञ्चमस्थे सुराचार्ये मित्रवस्त्र धनागमः।
शुक्रे पुत्र धन प्राप्तिर्हेयाभरणमिन्दुजे।।
सुत दुःखं सदा सूर्य शशांके कलहप्रियः।
भौमे कायविरोधः स्याच्छनौ कामविमर्दनम्।।

पञ्चम गुरु मित्र, धन, वस्त्र लाभ करता है, शुक्र पुत्र, धन-लाभ, बुध सुवर्ण भूषण, सूर्य पुत्र सम्बन्धी कष्ट, चन्द्रमा कलह, मंगल विरोध, शनि काम विनाशकारक होता है।

छठे सूर्य हो, तो राजपूज्य चन्द्रमा से तृष्टि, मंगल से लाभ, शनि से शत्रुबल नाश, गुरु से अर्थोदय, शुक्र से विद्यागम तथा बुध से सम्मान, ज्ञान में कुशलता।

सातवें गुरु से हाथी, बुध से घोड़ा, शुक्र से भूमि योग, सूर्य से कीर्ति भंग, मंगल से विद्रोह, चन्द्रमा व शनि से अंग-भंग भय जड़ता होती है।

आठवें सूर्य से दुश्मनी, विपत्ति, चन्द्रमा से हानि, मंगल, शनि से भय, बुध से मान-धन की प्राप्ति, बृहस्पति से महान् विजय तथा शुक्र से आत्मीय जनों से सुख की प्राप्ति होती है।

नवें बृहस्पति बुद्धि व भाग्यवृद्धि, बुध विविध भोग, शुक्र से सामान्य भाग्योदय, चन्द्रमा से धातु क्षीणता, सूर्य से धर्म हानि, मंगल से शक्ति हानि, शनि से काम-दोष उत्पन्न होता है।

दसवें शुक्र से शयन आसन की वृद्धि, गुरु से सुख प्राप्ति, बुध से विजय, सूर्य से धन वृद्धि, चन्द्रमा से खजाने की वृद्धि, मंगल से बल की प्राप्ति, शनि से कीर्तिनाश,

मीन राशि में स्थित शुक्र, अगर लग्न में हो अथवा कर्क का बृहस्पति चौथे स्थान में स्थित हो या तुला का शनि 11वें में रहे, तो वह गृह सदैव धनयुक्त होता है।

त्रिवेदवेदाग्नियुगाग्निवेदत्रिकेशु भानो: राशिभं गृहेषु।
दाहो विनाश: स्थिरता धन श्री: शूलञ्ज दारिद्रयमृती क्रमेण।।

सूर्य के नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र तक गिनें, अगर पहले 3 नक्षत्रों में गृहारम्भ का नक्षत्र हो, तो दाह 4 नक्षत्रों में विनाश, 4 नक्षत्रों में स्थिरता, 3 नक्षत्रों में धन-लाभ, 4 नक्षत्रों में लक्ष्मी-प्राप्ति, 3 नक्षत्रों में शून्यता, 4 नक्षत्रों में दरिद्रता तथा 3 नक्षत्रों में मृत्यु होती है। इसका नाम वृष वास्तुचक्र है, इसलिए उक्त नक्षत्रों का विभाजन वृष के अंगों के रूप में चक्र में प्रदर्शित है।

वृषवास्तु चक्रम्

अंग	शिर	अग्रपाद	पृष्ठपाद	पृष्ठ	व्रामकुक्षि	दक्षकुक्षि	पुच्छ	मुख
नक्षत्र	3	4	4	3	4	3	4	3
फल	गृहदाय	विनाश	स्थिरता	धन-लाभ	लक्ष्मी-लाभ	शून्य	दनिद्रता	मृत्यु

सम्पूर्ण अंगों वाले वृषभ के शरीर में सूर्य नक्षत्र से चक्र के अनुसार नक्षत्र रखें तथा फल समझें। संक्षेप में प्रारम्भ के ७ नक्षत्र अशुभ, बीच के ११ शुभ, शेष त्याज्य होते हैं। इसे विशेष चक्र द्वारा समझने का प्रयास करें।

गृहारम्भेवत्सचक्रम्

सूर्य नक्षत्राद्गणना साभिजित्

स्थानानि	संख्या	फलानि
शीर्षे	3	अग्नि भयं दाह:
अग्रपाद	4	शून्यम सत्
पृष्ठपादे	4	स्थिरता
पृष्ठे	3	लक्ष्मी-प्राप्ति:
दक्षिण कुक्षौ	4	लाभ: सत्
पुच्छ	3	स्वामी नाश:
वाम कुक्षौ	4	निर्धनता
मुखे	3	पीड़ा असत्

वृषभचक्रम्

अंग	शिर	अग्रपाद	पृष्ठपाद	पृष्ठ	दक्षकुक्षि	वामकुक्षि	पुच्छ	मुख
नक्षत्र	3	4	4	3	4	4	3	3
फल	गृहदाह	वज्रपात	स्थिरता	धनागम	जलयाम	दरिद्रता	स्वामी-नाश	पीड़ा

पराशर मुनि के मतानुसार—वर्तमान तिथि में 4 मिलाकर उस अंक को दुगना कीजिए। उसमें गृह-स्वामी के नाम के अक्षरों की संख्या को जोड़कर 3 का

भाग दीजिए। एक शेष में स्वर्ग, दो में पाताल, शून्य शेष में मृत्युलोक में वास्तुपुरुष का वास समझना चाहिए।

वास्तुपुरुष के सिर, पुच्छ, दक्षिण कुक्षि तथा पृष्ठ भाग में दीर्घायु की कामना वाले पुरुष को खात (गड्ढा) नहीं बनाना चाहिए, इसीलिए वामकुक्षि में खात शुभ रहता है।

वास्तुपुरुष को 28 भागों में बाँट लीजिए, 10 भाग सिर की ओर, 17 भाग पुच्छ की ओर छोड़ दीजिए, शेष भाग में शंकुन्यास करें।

तिथि को 5 से गुणा करके वृत्तिका आदि (सप्तशलाका चक्र के अनुसार) नक्षत्र संख्या को जोड़कर उसमें 12 और जोड़ दें, इसमें 9 से भाग करें, अगर 1.4. 7 शेष रहे, तो आकाश में कूर्म का निवास होता है। इनका फल-जल में लाभ, स्थल में हानि, आकाश में मरण होता है।

अष्टास्त्रं च तृतीयांशमजस्त्रमृज्ववर्णकम।
एवं लक्षणं संयुक्त परिकल्पयं शुभे दिने।।

ब्राह्मणादि वर्णों के क्रम से 24, 20, 16, 12 अंगुल का खैर, अर्जुन, नीम, शाल, कुटक, करंज एवं बेल की लकड़ी का शंकु बनाकर उसको स्वर्ण, वस्त्रादि से सुसज्जित करना चाहिए। इसके पश्चात् शंकु को तीन भागों में बाँटकर चार कोण, आठ कोण अथवा गोल या सीधा शंकु निर्माण करना चाहिए।

गृह-स्वामी के हाथ से लम्बाई-चौड़ाई की नाप को गुणा करके उसको दोबारा दो से गुणा करें, इसमें 8 से भाग दीजिए। शेष क्रम से मण्डलेश होंगे; जैसे—1 शेष से इन्द्र, 2 में विष्ण, 3 में यम, 4 में वायु, 5 में कुबेर, 6 में शिव, 7 में ब्रह्मा, 8 में गणेश जी।

इनका फल इस प्रकार है—इन्द्र-सुख प्राप्ति, यम-दु:ख, विष्णु-यश प्राप्ति, वायु-उत्पादन, कुबेर-धन-लाभ, शिव-कलह, ब्रह्मा-सुख वृद्धि तथा गणेश-सब प्रकार की ऋद्धि-सिद्धि के प्रदाता।

मण्डलेशफलचक्रम्

शेष सं०	1	2	3	4	5	6	7	8
मण्डलेष	इन्द्र	विष्णु	यम	वायु	कुबेर	शिव	ब्रह्मा	गणेश
फल	सौख्य	यश	दु:ख	उत्पादन	धन-लाभ	कलह	सुख-लाभ	सर्वसिद्धि

वास्तु क्षेत्रादवाक् प्रत्यग्दिशि नैव गृहं रचेत।
उत्तरस्थान्तु पूर्वस्यां गृहात्सर्व गृहं रचेत्।।
सद्योच्चाद्विगुणाधिकान्तर भुवि प्रत्यक् तथा दक्षिणे।
गेहं चाशुरचेछुभयं भवनं सत्कर्मणा सिद्धये।।
माण्डव्यादि मुनीन्द्र गर्गप्रभवा एवं वदन्तीति च।
संशोध्यैव गृहं स्वेच्छुभ दिने भव्यादि कर्माखिले।।

पहले घर से दक्षिण व पश्चिम दिशा में गृह-निर्माण न करें। इसके लिए उत्तर

व पूर्व दिशा शुभ मानी गयी है। यदि दक्षिण-पश्चिम की ओर घर बनाना हो, तो पहले घर की ऊँचाई से दुगना पश्चिम अथवा दक्षिण हटकर घर बनायें। इसका समर्थन माण्डव्य, गर्ग आदि मुनियों ने भी किया है। इस प्रकार संशोधन करके बनाया गया घर सुख-शान्ति प्रदायक होता है।

गृह-निर्माणकर्त्ता के हाथ से लम्बाई-चौड़ाई की नाप को गुणाकरके 9 का भाग देकर, जो शेष रहे, उसका फल क्रमश: इस प्रकार रहता है; जैसे—1 में दाता, 2 में विलक्षण, 3 में डरपोक, 4 में कलह, 5 में राजा, 6 में दानव, 7 में नपुंसक, 8 में धनी, यानी इन शब्दों के नाम के अनुसार ही इनका फल भी होता है।

ब्राह्मण राशि हेतु पूर्व द्वार, क्षत्रिय राशि के लिए उत्तर द्वार, वैश्य राशि के लिए दक्षिण द्वार एवं शूद्र राशि के लिए पश्चिम द्वार शुभ व श्रेष्ठ है।

सर्वद्वार इहध्वजो वरुणादिग्द्वारं च हित्वा हरि:।
प्राग्द्वारो वृषभेगजोयम् सुरेशाशामुख: स्याच्छुभ:।।

पूर्वोक्त ध्यवज आय को सभी दिशाओं में द्वार शुभ रहता है। सिंह आय को पश्चिम के अलावा अन्य द्वार शुभ रहते हैं। वृष आय को पूर्व द्वार तथा गज आय को दक्षिण एवं पूर्व द्वार शुभ रहते हैं।

ध्वज आय तथा ब्राह्मण वर्ण को पश्चिम मुख द्वार, सिंह आय, क्षत्रिय वर्ण को उत्तर द्वार, वृष आय, वैश्य वर्ण को पूर्व मुख द्वार तथा गज आय, शूद्र जाति को दक्षिण मुख द्वार शुभ माना गया है।

घर के दीर्घविस्तार के योग में 9 का भाग देकर पूर्व द्वार करना हो, तो बायीं ओर दो हिस्से भूमि को छोड़कर, तीसरे—चौथे अंश में, दक्षिणाभिमुखी, द्वार बनाना हो, तो चौथे-पाँचवें भाग में, उत्तराभिमुखी द्वार रखना हो, तो चौथे-पाँचवें में ही द्वार की रचना करनी चाहिए।

मार्ग, कोण, वृक्ष, स्तम्भ, कूप, चक्र से बेधयुक्त द्वारा अशुभ माना जाता है। लेकिन दरवाजे की ऊँचाई से दूरी पर ये सब हों, तो उक्त दोष नहीं रहते।

मार्ग द्वारा बेधयुक्त घर का दरवाजा गृहस्वामी का विनाश करता है। वृक्ष से बेधयुक्त घर का द्वार बच्चों के लिए अनिष्टकारी माना जाता है। पंक विद्ध द्वार शोक देने वाला होता है। जल निकलने वाले रास्ते से विद्ध द्वार धन-व्यय कराता है, कुएँ से विद्ध द्वार अपस्मार (मृगी) रोग उत्पन्न करता है, देवमूर्ति से विद्ध द्वार विनाशकारी होता है। स्तम्भविद्ध दरवाजा पत्नी को दुश्चरित्र बनाता है तथा ब्राह्मण से विद्ध द्वार कुल घातक माना गया है।

उन्माद: स्वयमुद्धाटितेऽथ पिहिते स्व्यं कुल विनाश:।
मानाधिके नृपभयं दस्युभयं व्यसनमेव नीचे च।।
द्वार द्वारस्योपरि यत्तन्न शिवाय शङ्कटं यच्च।
आव्यार्त्त क्षुद्धयदं कुब्जं कुलनाशनं भवति।।
पीड़ाकरमति पीड़ितमन्तविनतं भवेदभावाय।
बाह्यविनते प्रवासो दिग्भ्रान्ते दस्युभि: पीड़ा।।

यदि द्वार स्वयं खुलता हो, तो 'उन्माद रोग' होता है, अपने आप बन्द होता हो, तो कुलनाशक, प्रमाण से अधिक हो, तो राजभय, प्रमाण से कम हो, तो चोर भय एवं शारीरिक कष्ट होता है।

द्वार के ऊपर द्वार अशुभ रहता है। मोटाई में कम द्वार भी उत्तम नहीं होता। जो द्वार अधिक मोटा होता है, वह भूख का भय कराता है। यदि टेढ़ा हो, तो कुल घातक माना जाता है।

यदि गूलर का वृक्ष द्वार पर लगा हो, तो वह गृह-स्वामी को कष्टदायी होता है। घर के भीतर झुकाव हो, तो गृहस्वामी की मौत होती है। यदि बाहर की तरफ झुका हो तो परदेश में निवास कराता है। यदि अन्य दिशा में झुका हो, तो चोर-पीड़ा देने वाला होता है।

अन्य द्वारों की रचना भी उसी प्रकार करनी चाहिए, जैसे कि प्रधान द्वार की रचना की गयी हो। उसको कलश, लता, श्रीफल, सिंह व पत्र आदि के चित्रों से अलंकृत करना चाहिए।

पीछे या पार्श्व में वेध नहीं माना जाता, दो अथवा इससे अधिक वृक्षों की छाया, पहले वाली तथा अन्तिम पहर को छोड़कर दूसरे व तीसरे पहर में दु:खदायी रहती है।

घर के जिस भाग में द्वार बनाना हो, उस भाग की लम्बाई-चौड़ाई को जोड़कर उसमें 9 से भाग दें। उसमें 5 भाग दक्षिण व 3 भाग उत्तर को छोड़कर शेष भाग में द्वार बनाना चाहिए। मकान का दक्षिण वाम भाग घर से बाहर निकलते वक्त का समझना चाहिए।

गृह भित्ति दीवार के 9 विभाग करने से हरेक भित्ति में आठ-आठ दरवाजे होते हैं। इस प्रकार चारों भित्तियों में 32 दरवाजे होते हैं। पूर्व के 8 दरवाजों का फल प्रथम शिखिद्वार से वायु भय, दूसरे पर्जन्य द्वार से कन्या लाभ, तीसरे जयन्त द्वार से धन-लाभ, चौथे इन्द्र द्वार से राजप्रियता, पाँचवें सूर्यद्वार से क्रोध की अधिकता, छठे सत्य द्वार से असत्यता, सातवें भृंशद्वार से दुष्टता तथा आठवें अन्तरिक्ष द्वार से चोरों का भय होता है।

दक्षिण के 8 द्वारों का फल इस प्रकार है—पहले अनिल द्वार से पुत्रों की संख्या में कमी, दूसरे पौष्ण द्वार से दासवृत्ति, तीसरे वितथ द्वार से नीचता, चौथे वृहत्क्षत द्वार से भक्ष्यपान, पुत्रवृद्धि, पाँचवें याम्य द्वार से अशुभ, छठे गन्धर्व द्वार से कृतघ्न, सातवें भृङ्गराज द्वार से धनहीनता तथा आठवें मृगद्वार से बलनाश होता है।

सुतपीड़ारिपुवृद्धिर्नसुतधनाप्तिः सुतार्थफलसम्पत्।
धनसम्पन्नृपतिभयं धनक्षयो रोग इत्यपरे।।

पश्चिम के आठ द्वारों का फल इस प्रकार है—पहले पितृद्वार से पुत्र कष्ट, दूसरे दौवारिक द्वार से शत्रु-वृद्धि, तीसरे सुग्रीव द्वार से धन, पुत्र-हानि, चौथे कुसुभदन्त द्वार से पुत्र-धन फल की प्राप्ति, पाँचवें वरुण द्वार से धनोपलब्धि, छठे असुर द्वार से राज-भय, सातवें शोष द्वार से धन-नाश तथा आठवें पापयक्ष्मा द्वार से रोग-भय होता है।

उत्तर के आठ द्वारों का फल इस प्रकार है—पहले रोग द्वार से बध-बन्धन, दूसरे सार्प द्वार से शत्रु-वृद्धि, तीसरे मुख्य द्वार से पुत्र व धन-लाभ, चौथे भल्लाट द्वार से सद्गुण-सम्पत्ति, पाँचवें सौम्य द्वार से पुत्र धन लाभ, छठे भुजंग द्वार से पुत्र वैर, सातवें आदित्य द्वार से स्त्री जन्म दोष तथा आठवें दिति द्वार से दरिद्रता होती है।

सूर्यर्क्षाद्युगभै: शिरस्यथ फलं लक्ष्मीस्तत: कोणभै-
र्नागैरुद्वसनं ततो गजयितै: शाखासु सौख्यं भवेत।।
देहल्यां गुणभैर्मृतिर्गृहपतेर्मध्यस्थितैर्वेदभै:।
सौख्यं चक्रमिदं विलोक्य सुधि या द्वारं विधेयं शुभम्।।

सूर्य के नक्षत्र से द्वार-चक्र का विचार करके, द्वार-निर्माण करने से लक्ष्मी की उपलब्धि, 8 नक्षत्र कोण में दें, इनसे उद्वास (परदेश-गमन की अभिलाषा) 8 नक्षत्र शाखा में दें, इनसे सुख, फिर 3 नक्षत्र देहली में दें, इसमें गृह-स्वामी की मौत, 4 नक्षत्र बीच में दें, इनमें सुख मिलता है। इस चक्र के अनुसार द्वार निर्माण शुभ होता है।

स्वाति, रोहिणी, अश्विनी एवं तीनों उत्तरा, ये नक्षत्र द्वार स्थापित करने हेतु शुभ माने गये हैं।

अनुराधा, रेवती, ज्येष्ठा, पुष्य, अश्विनी, हस्त, स्वाति, चित्रा एवं पुनर्वसु नक्षत्र रवि, सोम, बुध, बृहस्पति एवं नन्दा, जया पूर्ण तिथियाँ द्वार स्थापना में शुभ मानी गयी हैं।

पञ्चमी तिथि में द्वार स्थापन करने से धन-लाभ, इसके अलावा सप्तमी, अष्टमी व नवमी तिथियाँ भी शुभ मानी गयी हैं। प्रतिपदा तिथि को द्वार स्थापन करने से दु:ख-प्राप्ति होती है, अत: इसका निषेध किया गया है। तृतीया में रोग, चतुर्थी में भंग, षष्ठी में कुलनाश, दशमी में धन-नाश तथा पूर्णिमा, अमावस्या बैर कराने वाली मानी गयी हैं।

शंकु, सूम, शिलान्यास द्वारा स्थापन गृहाच्छादन आदि कार्य स्तम्भ प्रतिष्ठा के प्रकरण में बताए गए तिथिवार नक्षत्रों में शुभ रहते हैं।

गुरु के मतानुसार ध्रुव नक्षत्र शुभ वार स्थित लग्न शुभ तिथि में द्वार स्थापित करना शुभ रहता है। उसमें भी चित्रा तथा मृगशिरा कुल सम्पत्ति की वृद्धिकारक हैं। चर स्थिर नक्षत्र, बुध, शुक्रवार शुभ तिथि तथा द्विस्वभाव लग्न में कपाट (द्वार) स्थापित करना शुभ माना जाता है।





सम्पूर्ण वास्तु शास्त्र एक दृष्टि में.....!

"वास्तु" अर्थात् जो है अथवा जिसकी सत्ता है का ज्ञान कराने वाले शास्त्र को "वास्तु शास्त्र" कहते हैं। हलायुध कोष के अनुसार वास्तु संक्षेप में ईशान्यादि कोण से प्रारम्भ होकर गृह या भवन-निर्माण की वह विधा है जो भवन को प्राकृतिक विघ्नों से बचाती है। सबसे प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद में वास्तु का पहला प्रयोग मिलता है। वेदों में "वास्तोस्पति" देवता और कुशल कारीगर के रूप में "त्वष्ट्रा" का उल्लेख मिलता है।

वास्तु शास्त्र मुख्तया तीन शास्त्रों के योग से पूर्ण होता है। विज्ञान, अध्यात्म तथा वनस्पति विज्ञान। विज्ञान के अन्तर्गत हम वायु, जल, प्रकाश, आकाश, पृथ्वी की शुद्धता का विचार करते हैं। वही अध्यात्म के अन्तर्गत जीवन के उद्देश्य, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चतुष्टय पर भी पूरा-पूरा विचार करते हैं। किन्तु बिना वनस्पति शास्त्र के वास्तु विज्ञान अधूरा होता है। आप स्वयं अनुभव करें आज प्रदूषण की समस्या विकराल रूप धारण कर चुकी है। बिना पर्यावरण के मानव ही नहीं, पूरी सृष्टि विनाश के कगार पर खड़ी है।

अगर प्रकृति प्रसन्न है, पेड़-पौधे तथा जीव-जन्तु स्वस्थ हैं, तो मानव प्रसन्न है। यह खुशी पर्यावरण की खुशी है। जो मानव को सुखमय जीवन प्रदान करती है। विवरण मिलता है कि वास्तु शास्त्र के रचयिता भगवान शंकर हैं। उन्होंने इसका ज्ञान महर्षि पाराशर को और पाराशर जी ने वेद को तथा मुनि वेदजी ने विश्वकर्मा जी को यह ज्ञान दिया। विश्वकर्मा जी ने इस चराचर जगत के कल्याण के लिए वास्तुशास्त्र का ज्ञान हमारे पूर्वजों को प्रदान किया जिससे आज सारा संसार लाभान्वित हो रहा है। माना जाता है कि एक समय विशाल शरीर वाले एक मानव का जन्म हुआ जिसने अपने शरीर के प्रसार से सारे संसार को ढक दिया। इससे सभी देवी-देवता भयभीत होकर त्राहि-त्राहि करते हुए ब्रह्मा की शरण में गए और उनसे उस मानव से मुक्ति दिलाने की प्रार्थना की। ब्रह्मा ने कहा कि इस विशाल देह वाले मानव को पृथ्वी पर गिरा दो, ताकि तुम्हारा देवलोक इससे सुरक्षित रह सके। तब सभी देवताओं ने मिलकर उस मानव देहधारी प्राणी को ब्रह्माण्ड से नीचे धक्का देकर पृथ्वी पर गिरा दिया। यह विशालकाय प्राणी बहुत दु:खी होकर ब्रह्मा के पास पहुँचा और उनसे विनती की कि हे भगवन! आपने मेरी रचना की है, परन्तु बिना किसी अपराध के इन देवताओं द्वारा मुझे

कष्ट पहुँचाया जा रहा है और मुझे पृथ्वी में गाड़ा जा रहा है। आप मेरी रक्षा करें। इस पर ब्रह्मा ने कहा कि हे पुरुष! "मैं तुम्हारे विस्तृत आकार के कारण तुम्हें देवलोक में रखने में एकदम असमर्थ हूँ। इसलिए तुम्हें पृथ्वी पर भेजने का निर्णय लिया गया है। मैं तुम्हें वरदान देता हूँ कि तुम पृथ्वी पर विराजमान हो जाओ। तुम्हारा नाम "वास्तुपुरुष" होगा। पृथ्वी के सभी प्राणी ग्राम, नगर, मकान, कुआँ, जलाशय तथा अपने लिए आवश्यक सामग्री के निर्माण से पहले तुम्हारी पूजा करेंगे। जो भी संसारी तुम्हारी पूजा नहीं करेगा वह दरिद्रता तथा सभी कामों में विघ्न व कष्टों के कारण कष्ट भोगता रहेगा।" ऐसा कहकर ब्रह्मा अंतध र्यान हो गए और देवताओं ने उस पुरुष को पृथ्वी में गाड़ा उस समय उसका सिर ईशान कोण (उत्तर पूर्व) तथा पैर नैर्ऋत्य (दक्षिण-पश्चिम) दिशा में थे। वास्तु शास्त्र के माध्यम से वास्तुपुरुष का आशीर्वाद प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इसी कारण भवन-निर्माण करते समय अनेक प्रकार से दिशाओं का ध यान रखा जाना परम आवश्यक होता है।

भवन-निर्माण के लिए हालांकि आज प्राचीन मान्यताओं के अनुसार भूमि उपलब्ध नहीं है तो भी यथासम्भव वास्तु शास्त्र का पालन हमारे घर को सुखों से भरने की क्षमता रखता है। बड़े शहरों में तो आज बनेबनाए फ्लैट का चलन है। यहाँ पर इच्छानुसार भूमि-चयन सम्भव नहीं है। फिर भी अगर सम्भव हो तो भूमि-चयन अवश्य करें। चौकोर व समतल भूमि श्रेष्ठ होती है। जिस मिट्टी से फूलों जैसी खुशबू आती हो तथा उसका स्वाद भी मधुर हो वह ब्राह्मण तथा उच्च वर्ग के लिए श्रेष्ठ मानी जाती है। जिस भूमि में रक्त जैसी गन्ध हो तथा स्वाद भी कसैला हो वह क्षत्रियों के लिए श्रेष्ठ होती है। जिस भूमि में शहद जैसी गन्ध हो तथा स्वाद भी खट्टा-मीठा हो वह वैश्यों या व्यापारी वर्ग के लिए श्रेष्ठ होती है और जिसका स्वाद तेज या कड़वा हो वह समाज के निम्न वर्ग के लिए अच्छी होती है। इसी प्रकार भवन का मुख्यद्वार ब्राह्मणों के लिए पश्चिम, क्षत्रियों के लिए उत्तर, वैश्यों के लिए पूर्व तथा समाज के निम्न वर्गों के लिए दक्षिण की ओर बनाना शुभ रहता है।

भूमि-परिक्षण का एक नियम यह है, पहले गड्ढा खोदकर उसे सायंकाल के समय जल से भर दें। प्रातःकाल उस गड्ढे को देखें अगर कुण्ड में जल बचे तो उस स्थान पर रहने से भाग्यवृद्धि होगी और अगर कीचड़ ही बचे तो मध्यम फल है और यदि कुण्ड की भूमि में दरार पड़ गई हो तो उस स्थान पर रहने से हानि होगी। ऐसे स्थान पर भवन न बनाये।

इस प्रकार निवास करने योग्य भूमि की भली-भाँति परीक्षा करके भूमि में दिक्साधना (दिशाओं का ज्ञान) करने के लिए समतल भूमि में व्रत बनावें। व्रत के मध्यम भाग में द्वादशांगुल शंक (बारह विभाग या पर्व से युक्त एक सीधी लकड़ी) की स्थापना करें और दिक् साधना विधि से दिशाओं का ज्ञान करें। इसके बाद कर्त्ता के नाम के अनुसार षड्वर्ग शुद्ध क्षेत्रफल वास्तुभूमि की लम्बाई व चौड़ाई का

गुणनफल ठीक करके अभीष्ट लम्बाई व चौड़ाई के बराबर दिशा साधित रेखानुसार चतुर्भुज बनावें। उस चतुर्भुज रेखा मार्ग पर सुन्दर आकार बनावें। लम्बाई और चौड़ाई में पूर्व आदि चारों दिशाओं में आठ-आठ द्वार के भाग होते हैं। प्रदक्षिण क्रम से उनके निम्नांकित फल हैं—

जैसे पूर्व भाग में उत्तर से दक्षिण तक :

हानि	निर्धनता
धनलाभ	राजसम्मान
बहुधन	अतिचोरी
अतिक्रोध	भय

क्रमशः आठ द्वारों के फल है। दक्षिण दिशा में क्रमशः

मरण	बन्धन
भय	धनलाभ
धनवृद्धि	निर्भयता
व्याधि भय	निर्बलता

पूर्व से पश्चिम तक के आठों द्वारों के फल हैं। पश्चिम दिशा में क्रमशः

पुत्रहानि	शत्रुवृद्धि
लक्ष्मीप्राप्ति	धनलाभ
सौभाग्य	दुर्भाग्य
दुःख	शोक

ये दक्षिण से उत्तर तक के आठों द्वारों का फल है। इसी प्रकार उत्तर दिशा में (पश्चिम से पूर्व तक)

स्त्रीहानि	निर्बलता
हानि	धान्यलाभ
धनागम	सम्पत्तिवृद्धि
भय	रोग

ये क्रमशः आठ द्वारों के फल हैं।

इसी प्रकार पूर्व आदि दिशाओं के गृह में भी द्वार और उसके फल समझने चाहिएँ।

वास्तुपूजन का पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिये शल्य-शोधन तथा भू-शुद्धि करना अनिवार्य है, अन्यथा ऐसे भूखण्ड पर निर्मित भवन में रहने वाले आपदाओं, धनहानि तथा मृत्यु-भय से घिरे रहते हैं।

गृह-निर्माण हेतु चयनित भूखण्ड में 9 भागों में विभाजित शल्यज्ञान-चक्र बनाएँ।

वायव्य	उत्तर			ईशान
	प	य	श	
पश्चिम	त	ह	अ	पूर्व
	ट	च	क	
नैर्ऋत्य	दक्षिण			आग्नेय

अब भूस्वामी से कहें कि वह इष्ट देव का स्मरण करके ब्राह्मण किसी फूल का, क्षत्रिय किसी नदी का, वैश्य किसी देवता का और अन्य जाति के लोग किसी फल का नाम उच्चारित करें। अब फूल, नदी, देवता तथा फल का पहला अक्षर चक्र में देखें कि किस भाग पर है, जिस भाग में हो उससे शल्य को समझें। शल्य की दिशा, वस्तु तथा अन्य विवरण आगे सारिणी में दिया गया है।

यदि सारिणी में दिये गये अक्षरों से अलग प्रथम अक्षर हो तो भूमि में शल्य नहीं है, ऐसा समझना चाहिए। शल्य 10 फुट से अधिक गहराई में हो तो उसका दोष नहीं रहता। उपायस्वरूप भूस्वामी के नाप के बराबर गहराई तक भूखण्ड से मिट्टी खोदकर निकालें और पुन: नई मिट्टी उसमें भर दें। इस प्रकार निकाली गई मिट्टी फिंकवा देने पर शल्य दोष नहीं रहता है।

अक्षर	दिशा	शल्य की वस्तु	शल्य कितना नीचे	शल्य का फल
अ	पूर्व	मनुष्य की हड्डी	डेढ़ हाथ नीचे	मुत्युकारक
क	आग्नेय	गधे की हड्डी	दो हाथ नीचे	राजभय
च	दक्षिण	मनुष्य की हड्डी	कमर भर नीचे	रोगकारक
ट	नैर्ऋत्य	कुत्ते की हड्डी	डेढ़ हाथ नीचे	बालकों के लिए हानिकारक
त	पश्चिम	बच्चे की हड्डी	डेढ़ हाथ नीचे	भवन-स्वामी घर पर न रहे
प	वायव्य	भूसा/कोयला	चार हाथ नीचे	मित्रहानि
य	उत्तर	बालक की हड्डी	कमर भर नीचे	धनहानि
श	ईशान	गाय की हड्डी	डेढ़ हाथ नीचे	पशुहानि
ह	मध्य	मानव खोपड़ी रोख/लोहा	तीन हाथ नीचे	अत्यन्त पीड़ा

ताम्र पत्र पर उत्कीर्ण वास्तु यंत्र की पूजा तत्काल फल देती है। गृहप्रवेश के समय पूजन विशिष्ट महत्व रखता है। अत: वास्तुपूजन के लिए ज्योतिषी से उत्तम मुहूर्त निकलवाना चाहिए, जिसमें गृहस्वामी का चन्द्र बल, ताराबल, घात चक्र, अग्निवास आदि पर विचार किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त वास्तु-पुरुष का वास और दिशा की गणना अनिवार्य है।

प्राचीनकाल से ही "वास्तु" को पर्याप्त मान्यता दी जाती रही है। अनेक इमारतें, मंदिर इत्यादि "वास्तु" के अनुरूप बने होने के कारण ही प्रकृति के थपेड़ों को सहने में सक्षम हुए हैं।

वास्तव में वास्तु शास्त्र के तथ्य विज्ञान-सम्मत हैं, क्योंकि इसमें पृथ्वी के चुम्बकत्व, हवाओं की दिशाओं, सौर मण्डल की विकिरणों, गुरुत्व इत्यादि का समायोजन वैज्ञानिक तरीके से किया जाता है। यही कारण है कि एक वास्तुपरक मकान में रहने वाले सुख-शांति, समृद्धि, स्वास्थ्य आदि प्राप्त करते हैं, जबकि वास्तुनियमों के विपरीत बने भवन के निवासी अनेक प्रकार की समस्याओं से घिरे रहते हैं।

प्राचीनकाल से ही हमारे पूर्वजों को ज्योतिष की पूरी जानकारी थी। यही कारण है कि प्राचीनकाल से ही अनेक लोकोपयोगी कार्यों में इन विधाओं का प्रयोग किया गया था। वास्तुशास्त्र में भी यही बात परिलक्षित होती है जहाँ मनुष्य के भवन प्रतिष्ठानादि में खड़ी होने वाली बाधाओं को दूर करने हेतु अनेक ज्योतिष सम्बंधी प्रयोग वर्णित हैं। उन्हीं में से कुछ अति सरल तथ्यों एवं प्रयोगों को जनलाभार्थ यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ। जिस दुकान के मुख्यद्वार पर एक काले वस्त्र में बाँधकर फिटकरी का टुकड़ा लटका दिया जाता है उस दुकान पर कभी नजर नहीं लगती है। जिस घर में टूटा हुआ दर्पण होता है वहां अशांति रहती है। अत: दर्पण को फेंक देना चाहिए।

घर में एक पांक का पटिया (बैठने हेतु बनाया हुआ लकड़ी का आसन) और टूटे हत्थे होने से घर के स्त्री-पुरुष दु:खी रहते हैं। उनके मध्य वृथा की किचकिच होती रहती है।

जिस विवाहित के शयनकक्ष में सारस के जोड़े का चित्र लगा होता है उनमें आपस में प्रेम बना रहता है। सारस के जोड़े की तस्वीर इस प्रकार लगी हो कि शयन स्थिति में वह सामने रहे।

जिस प्रतिष्ठान में नौकरों की समस्या बनी रहती हो, वहाँ अभिमंत्रित वास्तु यंत्र को ताँबे पर बनवाकर प्रतिष्ठान की दक्षिण दिशा में गाड़ दें। यह कार्य केवल मंगलवार के दिन ही करें।

दीपावली के दिन गणेशजी का पूजन पृथक् से कर लें और ये गणेशजी अपनी तिजोरी में अथवा गल्ले में रख लें। ऐसा करने से धनवृद्धि होती है।

दुकान के मुख्यद्वार पर 7 हरी मिर्चियों के साथ एक पीला नींबू एक धागे में पिरोकर प्रति शनिवार को बाँधकर लटका देने से दुकान पर जहाँ एक ओर नजर नहीं लगती है, वहीं दूसरी ओर उस दुकान की बरकत बनी रहती है। नींबू और मिर्ची में नींबू बीच में हो तथा जमीन की दिशा में 4 और आकाश की दिशा में 3 मिर्चियाँ हों।

जिस भवन में दो शिवलिंग, तीन गणेश, दो शंख, दो सूर्य, तीन दुर्गामूर्ति, दो गोमती चक्र और दो शालिग्राम की पूजा एक साथ हो तब यहाँ अशांति रहती है।

घर के पूजास्थान का निरीक्षण कर लें। भवन में अंचल प्राण-प्रतिष्ठित मूर्तियों के होनें से अशांति बनी रहती है।

कार्यालय में आपके बैठने पर आपका मुख अगर पूर्व या उत्तर की ओर है तो उचित है, ऐसी स्थिति में आपका धन-धान्य बढ़ता रहेगा और मानसिक स्थिति भी अशान्त नहीं होगी। अगर आप पश्चिम की ओर मुँह करके बैठते हैं तो फिर या तो कभी लाभ और कभी हानि के लिए तैयार रहें। दक्षिणमुखी बैठने पर आपकी मानसिक स्थिति खराब रहेगी, दुकान या कार्यस्थल आयताकार या वर्गाकार है तो श्रेष्ठ है। सिंहमुखी व्यावसायिक स्थल शुभ माना जाता है। निवास स्थान सिंह-मुखी नहीं होना चाहिए। सिंहमुखी से तात्पर्य आगे की ओर शेर की तरह अधिक चौड़ा और पीछे की ओर कम चौड़ा से है। गौमुखा निवास ठीक होता है, दुकान या व्यावसायिक स्थल नहीं। आड़ी-टेढ़ी दुकान या व्यावसायिक स्थल शुभ नहीं होता। यह जीवन में मानसिक अशान्ति का कारण बनता है। व्यावसायिक स्थल या दुकान का मुख्यद्वार अगर पूर्व की ओर है तो लाभप्रद है। अगर मुख्यद्वार पश्चिम की ओर है तो काम में कभी तेंजी चलेगी और कभी मन्दा। इस स्थिति में व्यक्ति को चाहिये कि किसी विद्वान तांत्रिक से मिलकर शेष निवारण करा लें।

मकान के भीतर, दुकान के बाहर खूब सफाई होनी चाहिए। मनीप्लांट या किसी अन्य प्रकार से अगर दुकान के बाहर हरियाली लगाई जा सके तो उत्तम फल प्राप्त होता है। दुकान के सामने गंदगी या नाली भी कार्य में विघ्नकारक होती है। इससे व्यापार वृद्धि में तीव्रता लाते समय बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता है और उसका फल भी स्थायी नहीं हो पाता।

यह भी अनुभव में आता है कि भवनों को पंखा, कूलर, वातानुकूलित यंत्रों द्वारा आरामदायक बनाया जाता है। इसके स्थान पर अगर हम थोड़े-से वास्तुनियम अपनाकर तथा कुछ प्राकृतिक उपक्रमों से निर्माण स्थल अनुकूल बनाने पर ध्यान दें तो जहाँ एक ओर विद्युत ऊर्जा पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा, वहीं दूसरी ओर कम व्यय में आराम भी उठा सकेंगे। इसके लिए स्थान से चयन से लेकर वायु-दिशा, खिड़की-दरवाजों की माप तथा लगाने की उपयुक्त स्थितियों के साथ-साथ छज्जे, वायु-परावर्तक, पवनग्राही तथा आसपास के अन्य भवनों की उपस्थिति से पड़ने वाले प्रभाव आदि को निर्माण से पूर्व सूक्ष्मता से अध्ययन कर तद्नुसार प्रयास करना होगा।

फर्श के क्षेत्रफल से निर्धारित खिड़की के क्षेत्रफल तथा उसकी ऊँचाई के पारस्परिक सम्बन्धों से चौड़ाई का अनुमान किया जा सकता है। इसका अधिकतम मान दीवार की लम्बाई का 2/3 भाग हो सकता है। जहाँ पर प्रचलित वायु अधिकांशत / स्थिर हो वहाँ पर निकास द्वार का क्षेत्रफल, प्रवेश द्वार के क्षेत्रफल से बड़ा रखना चाहिए। अगर वायु-दिशा परिवर्तित होती रहती हो तो दोनों खिड़कियों का क्षेत्रफल समान रखना चाहिए।

इन सभी बातों के साथ-साथ स्थल का चयन ऐसा होना चाहिए जिस पर बने

भवनों के खिड़की-दरवाजों का सामना प्रचलित वायु-दिशा की ओर किया जा सके जिससे भवनों के आन्तरिक वायु प्रवाह में होने वाली वृद्धि से भवन को आरामदायक बनाया जा सके। मान लें, अगर यह सुगमता से न अपनाया जा सके तो ऐसे में अन्य व्यवस्था को अपनाना चाहिए।

मनुष्य के तन और मन को आधार बनाकर चिकित्सा-विज्ञान के क्षेत्र के नित नये अनुसंधान विश्लेषण के बावजूद आज भारत में विकलांगता एक ऐसी चुनौती बनकर सामने खड़ी है जिसकी रोकथाम के प्रयासों के बाद भी समस्या विकराल रूप से बढ़ती जा रही है। संसार भर के शारीरिक विकलांगों की संख्या विश्व की जनसंख्या की लगभग 10 प्रतिशत हो गई है जिसने शासन एवं स्वयंसेवी संस्थाओं को झकझोर दिया है। परिणामस्वरूप विकलांग की सहायता के लिए अपने कर्तव्य बोध को जगाने, जन-चेतना जागरण करने, विकलांग में आत्मविश्वास एवं आत्म-बल दृढ़ करने की दृष्टि से प्रतिवर्ष विकलांग दिवस मानाया जाता है। इसी चिंतन की भावभूमि पर हमारे मनीषियों ने वास्तु-शास्त्र के सिद्धान्तों को बनाया है जिसके अनुसार प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करने में ही मानव का कल्याण है।

भवन-निर्माण में चुम्बकीय शक्ति, ब्रह्माण्डीय ऊर्जा और इन पंच महाभूत अर्थात् पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश की समरसता और आनुपातिक व्यवस्था रहने से शरीर स्वस्थ और मन प्रसन्न रहता है। यही वास्तु शास्त्र के सिद्धान्तों का सार है। इन सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या यहाँ न करते हुए हमारे मकान में जो वास्तुदोष विकलांगता का कारण बनते हैं, उनका स्पर्श किया जायेगा।

ईशान दिशा (उ०पू०) वास्तु शास्त्र की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ईशान को स्वच्छ एवं पवित्र रखने का विधान है, क्योंकि यह ईश्वर आराधना अर्थात् पूजा का स्थान है। भवन के बाहर प्लांट के ईशान में, जूठे बर्तन, जूते-झाडू अनावश्यक सामान आदि जो उस स्थान की पवित्रता को कम करते है, नहीं रखना चाहिये। मकान के ईशान क्षेत्र में स्थित शयनकक्ष में यदि युवा-दम्पति का शयनकक्ष हो तो होने वाली संतान विकलांग अथवा विकृत शरीर वाली हो सकती है। इतना ही नहीं, ईशान में शौचालय या सीढ़ी अथवा वजन अधिक हो तो बच्चों का शारीरिक एवं मानसिक विकास प्रभावित होता है। इसलिए अगर हमें अपने घर में विकलांग संतति नहीं चाहिए तो ईशान की पवित्रता बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है।

वास्तु की दृष्टि से रसोईघर की सर्वोत्तम स्थिति आग्नेय दिशा (द०पू०) है, पर अगर अन्य दिशा में भी रसोई रहती है तो प्लेटफार्म इस तरह बनवायें कि भोजन बनाते समय गृहिणी का मुख पूर्व की ओर हो। प्लेटफार्म में ग्रेनाइट जैसे पत्थर का प्रयोग उचित नहीं है, इससे गृहिणी को उदरजन्य रोगों की संभावनाओं के साथ ही गर्भस्थ शिशु पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। जब रसोई की बात चल ही रही है तो भोजन पूर्वाभिमुख होकर ग्रहण करना ही श्रेयस्कर है।

यह सुविदित है कि उत्तर ध्रुव में चुम्बकीय शक्ति का पुंज है। हमारा सिर भी वास्तु की दृष्टि से उत्तर दिशा का प्रतीक है। भौतिक शास्त्र का यह सर्वविदित

सिद्धान्त है कि दो समान ध्रुवों में विकर्षण होता है अर्थात् जब हम उत्तर दिशा की ओर सिर करके सोते हैं तो हमारे रक्त में स्थित लौह तत्व के कारण विकर्षण होता है, तो रक्तचाप, अनिद्रा, तनाव आदि बीमारियों का कारण बनता है। अतएव जब गर्भवती माँ उत्तर की ओर सिर करके शयन करेगी तो माँ एवं गर्भस्थ शिशु दोनों के स्वास्थ पर प्रतिकूल-प्रभाव होगा। अतएव शयन करते समय दक्षिण या पूर्व दिशा की ओर ही सिर करके सोना हित में है।

मेरे एक परिचित ने एक फ्लैट खरीदा। फ्लैट प्राप्त कर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए और पण्डित से मुहूर्त पूछा और गृहप्रवेश का निश्चय किया। मेरे परिचित के भाई वास्तु शास्त्र में थोड़ी-बहुत जानकारी रखते थे। उन्होंने कहा, कि घर ले लिया, वो तो ठीक है, लेकिन क्या यह वास्तु शास्त्र के अनुसार बना है। भाई को अपने फ्लैट का नक्शा इत्यादि बताया, उसको देखते ही उन्होंने कहा सत्यानाश! यह घर तो तुम्हारे लिए अशुभ है, द्वार के कारण विपत्तियाँ तुम्हारे घर में निरन्तर आएँगी। तुम्हारा शयनकक्ष अमुक दिशा में है, इस कारण पति-पत्नी में कलह रहेगी। ये घर तो तुम्हें लेना ही नहीं चाहिए।

मेरे विचार में दूसरों को उपदेश देना तो बहुत सरल है और जो उपदेश दिया जाए, उसे अपने घर में भी लागू करना चाहिए, तभी उपदेश की सार्थकता है।

आजकल नगरों में बहुमंजिली इमारतें बनने लगी हैं, फ्लैट सिस्टम प्रारम्भ हो गया है और आदमी को जैसे ही मकान मिल जाता है, तो वह प्रसन्न हो जाता है, लेकिन उसकी यह प्रसन्नता समाप्त हो जाती है जब वह किसी वास्तुशास्त्री की पुस्तक पढ़ता है—

- शयनकक्ष दक्षिण दिशा में होना चाहिए।
- स्नानगृह पूर्व दिशा में ठीक है।
- रसोई को पूर्व और दक्षिण के मध्य में होना चाहिए।

अब वह उन मकानों में अपने घर के मुख्यद्वार की दिशा में परिवर्तन कैसे करें? क्योंकि ऐसे मकानों में एक ही द्वार होता है।

ये माना कि वास्तु शास्त्र के नियम ठीक हैं, लेकिन जहाँ बने बनाए घर मिलते हैं, वहाँ व्यक्ति क्या करें? यह सत्य है, कि घर दीवारों से नहीं बनता, घर तो उसे कहते हैं, जहाँ रहने से उसे सुख और शान्ति प्राप्त हो, देवी-देवताओं का आशीर्वाद प्राप्त हो।

मेरे विचार में घर कैसा भी हो अगर उसमें वास्तु देवता की स्थापना हो जाती है, तो फिर कोई दोष नहीं होता है। हम जिस घर में रह रहे हैं, उसमें वास्तु देवता की स्थापना करें। वास्तु देवता की स्थापना और पूजन घर की रक्षा के साथ-साथ घर की उन्नति के लिए आवश्यक है।

वास्तु मण्डल के विधान अनुसार इसमें मुख्य रूप से 45 देवता स्थित हैं—

1.शिखी	2.पर्जन्य	3.जयन्त	4.कुलिशायुध
5.सूर्य	6.सत्यल	7.भृश	8.आकाश

9.वायु	10.पूषा	11.वितथ	12.गृहक्षत
13.यम	14.गन्धर्व	15.भृंगराज	16.मृग
17.पितृ	18.दौवारिक	19.सुग्रीव	20.पुष्पदन्त
21.वरूण	22.असुर	23.शेष	24.पापहर
25.रोगहर	26.अहि	27.मुख्य	28.भल्लाट
29.सोम	30.सर्प	31..अदिति	32.दिति
33.अप	34.अपवत्स	35.अर्थमा	36.सावित्र
37.सविता	38.विवश्वान्	39.जयन्त	40.विबुधाधिप
41.मित्र	42.राजयक्ष्मा	43.रुद्र	44.पृथ्वीधर

तथा 45.ब्रह्मा

वास्तु देवता की पूजा किसी भी शुभ दिन या सर्वार्थ सिद्धि योग, अमृत सिद्धि योग, पुष्य योग आदि से प्रारम्भ की जा सकती है, फिर भी यदि उस दिन पुष्य योग हो, तो पूजन का महत्व बढ़ जाता है।

पूजन के दिन प्रात: उठकर घर धो देना चाहिए। जिस घर में अशुद्धि होती है— वहां कभी भी लक्ष्मी का वास नहीं हो सकता, अपने घर में बीच आंगन में यह पूजा सम्पन्न कर सकते हैं।

साधक को चाहिए कि वह पूर्व दिशा की ओर मुंह कर बैठें। अपने सामने एक बड़े श्वेत वस्त्र पर वास्तु यंत्र स्थापित करें, इसके साथ एक कलश में शुद्ध जल भर कर ऊपर नारियल रखें।

वास्तु देव का आह्वान करें—

वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान् स्वावेशो अनमीवो भवनान:।
यत् त्येमहे प्रति तन्नो जुषस्व शनो भव द्वि एदे शं चतुष्पदे।।

वास्तु देवता पर सिन्दूर, पुष्पमाला तथा जल अर्पित करें। इसके पश्चात् देवियों का पूजन करें:—

ॐ लक्ष्म्यै नम:।ॐ यशोवत्यै नम:।ॐ कान्तायै नम:।ॐ सप्रियायै नम:। ॐ विमलायै नम:। ॐ सुभमायै नम:। ॐ सुमत्यै नम:। ॐ श्रियै नम:। ॐ इडायै नम:।

इसके बाद उत्तर तथा दक्षिण दिशा में स्थापित रेखा देवियों का पूजन सम्पन्न करें:—

ॐ धान्यायै नम:।ॐ प्राणायै नम:।ॐ विशालायै नम:।ॐ स्थिरायै नम:। ॐ भद्रायै नम:।ॐ स्वाहायै नम:।ॐ नयायै नम:।ॐ निशायै नम:।ॐ विजायै नम:।

प्रत्येक बार बीच में स्थित जलभरे कलश से एक पीपल के पत्ते से जल लेते हुए प्रत्येक देवी पर जल छिड़कें।

इसके पश्चात् पूजन के समय वास्तु देवता के समक्ष गुड़ इत्यादि प्रसाद अवश्य

रखना चाहिए, इसके पश्चात् किसी भी माला से वास्तु देवता का माला मंत्र जप अवश्य सम्पन्न करना चाहिए। वास्तु देवता मंत्र इस प्रकार है—

।। ॐ नमो नारायणाय वास्तु रूपाय भूर्भुवःस्वः पतये भूपतित्व में देहि दापय स्वाहा।।

सम्पूर्ण पूजन के समय मन में श्रद्धा अवश्य होनी चाहिए, श्रद्धा के बिना सफलता प्राप्त नहीं होती है।

हमारे ऋषियों, महर्षियों ने जो कुछ ग्रन्थों, पुराणों, शास्त्र संहिताओं के रूप में अपने गहनचिन्तन, शोध एवम् अनुभव के आधार पर असीमित भण्डार हमें दिया। यदि हम उनके रहस्यों को समझकर सिर्फ उनका कुछ अंशों में भी उपयोग कर सकें तो हमारा जीवन सार्थक हो सकता है। प्राणी मात्र की मूलभूत आवश्यकताओं में एक मुख्य आवश्यकता आवास की है। निर्माण किसी भी प्रकार का हो चाहे आवासीय हो अथवा व्यावसायिक किस स्थान या किस दिशा में किस प्रयोजन हेतु किन-किन कमरों का निर्माण कराया जाए वगैरह से सम्बन्धित, दिशाओं एवम् पंचतत्वों को लेकर चिन्तन एवम् गहनशोध के बाद जिस शास्त्र की रचना की गई उसे "वास्तु शास्त्र" के नाम से जाना गया। इनमें भी अलग-अलग विद्वानों के अलग-अलग विचार हैं। ये सारे शास्त्र ज्ञान के भण्डारों से भरे पड़े हैं। जैसे-जैसे यह प्राच्य ज्ञान निरन्तर शोध एवम् निरीक्षण द्वारा सामने आ रहे हैं वैसे-वैसे उनके परिणाम सामने आ रहे हैं, उन्हें देखकर एक सुखद आश्चर्य होता है। हम शास्त्र के उपयोग से वंचित कैसे रहे? इन शास्त्रों में रचयिताओं ने भूमिचयन, भूमिपूजन, नींव स्थापना एवम् भवन-निर्माण सम्बन्धी निर्देश, निर्माण समाप्त होने के पश्चात् वास्तु पूजन एवम् गृहप्रवेश सम्बन्धी समस्त जानकारी के लिए निर्देश दिये हैं। यहाँ तक कि आवास के आस-पास किन-किन पौधों को कहाँ लगाना चाहिये और किन पौधों को लगाना उचित नहीं है आदि के विषय में भी निर्देश दिए हैं।

प्रिय पाठकों वास्तु अत्यन्त प्राचीन विद्या है। मध्ययुग तक आते-आते वास्तु विज्ञान केवल राजाओं तक सीमित रह गया और आम जनता के बीच लगभग विलुप्त हो गया। राज प्रसादों के निर्माण में वास्तु की महत्वता कितनी थी, इसका अनुमान राजप्रसादों से ज्ञात किया जा सकता है। भौतिक युग में भवनों में डिजाइन का महत्व हो गया और आड़ी-तिरछी रेखाओं से मिलाकर भवनों का निर्माण होने लगा, किन्तु भव्य मकान बनाने के उपरान्त भी मानव सुखमय जीवन व्यतीत नहीं कर पाया। पिछले कुछ वर्षों में पुनः चिन्तन हुआ कि क्या भवन की आकृति तो कहीं हमारे भविष्य से कोई सम्बन्ध नहीं रखती है? हमें पुनः हमारी पुरातन विद्या वास्तु का ध्यान आया। इसकी प्रामाणिकता इसके लोकप्रिय होने का सबसे बड़ा कारण है। वास्तु सन्तुलन से जहां हमें सुख, समृद्धि की प्राप्ति होती है, वहीं असन्तुलन से हमें अनेक प्रकार के दुःखों का सामना करना पड़ता है। असन्तुलन से अनेक प्रकार के रोगों का भय रहता है। मैं ऐसे लोगों को जानता हूँ जिन्होंने अपने जीवन में कभी भी सिगरेट, तम्बाकू को हाथ तक नहीं लगाया, यही नहीं, न तो वे बिगड़े

हुए पर्यावरण वाले शहरों में निवास कर रहे थे और अत्यन्त ही सादगीपूर्ण भोजन ग्रहण कर रहे थे, इसके बावजूद उन लोगों की मृत्यु भयंकर रूप से हुई—किन्तु ज़ब उन भवनों की ओर ध्यान देते हैं जिनमें ऐसे लोग निवास कर रहे थे तो उन भवनों में वास्तुदोष उपलब्ध था। उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि मनुष्य के भाग्य को भवन-निर्माण भी प्रभावित करता है। अत: निवास का चयन सोच-समझकर ही करना चाहिए। अस्तु आपको वास्तु की पूजा करके ही नये भवनों में प्रवेश करना चाहिए। जो व्यक्ति वास्तु की पूजा न करके ही नये भवनों में प्रवेश करता है वह अनेक प्रकार के रोग, कलेश और संकटों से ग्रस्त रहता है। भवन को पुष्प तोरण आदि से अलंकृत करके वेद ध्वनि, शान्ति पाठ, सौभाग्यवती स्त्रियों के मांगलिक गीत तथा वाद्य आदि के शब्दों के साथ सूर्य को वाम भाग में रखकर जल से भरे हुए कलश को आगे करके उसमें प्रवेश करना चाहिए।

भवन-निर्माण करवाते समय विशेष ध्यान रखना होता है या पुराने निर्माणों में भी यथा-सम्भव सुधार किया जा सकता है, किन्तु नये निर्माणों में पहले से ही ध्यान रखा जाये तो उत्तम सिद्ध होता है। किसी भी प्रकार का निर्माण कराने से पहले किसी योग्य वास्तुविज्ञ का परामर्श अवश्य ले लें, ताकि नक्शे में ही सुधार हो सकें।

ॐ पूर्णमद/ पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पुर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

समाप्त

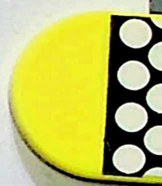


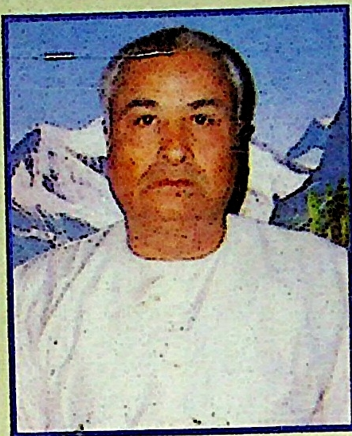
भारतीय वास्तु एवं भवन निर्माण

भारतीय वास्तुशास्त्र के बारे में विस्तृत जानकारी सहित इस पुस्तक में वास्तु से सम्बन्धित व्याप्त अनेक भ्रान्तियों को दूर करने का प्रयास किया गया है। साथ ही वास्तु पर आधारित विभिन्न आकार के भूखण्डों पर आठों दिशाओं में गृह निर्माण हेतु अनेक नक्शे भी दिये गये हैं। आप अपने घर में किस वस्तु को किस दिशा में किस स्थान पर क्यों रखें यह भी स्पष्ट किया गया है।

लेखक : प्रसिद्ध वास्तुविद् पंडित जगदीश शर्मा (एम.ए.)
वास्तुविद् साहित्य यजुर्वेद एवं पुराणाचार्य

प्राचीन भारतीय वास्तु के सिद्धान्तों पर आधारित भवन निर्माण हेतु समग्र जानकारी का समावेश





पं. शशि मोहन बहल

वास्तुशास्त्र दोष कारण निवारण

वास्तुशास्त्र के विषय में प्राय: कहा जाता है कि अनजाने में कभी-कभी वास्तुशास्त्र के अनुसार न बना भवन फैक्ट्री दुकान ऑफिस अशुभ फल भी प्रदान करता है।

इस विषय में हर वास्तुविद की अपनी अलग खोज़ और अपने अलग निष्कर्ष होते हैं। जिसके आधार पर वह वास्तु दोषों का आकंलन करता है।

आज के इस मंहगाई के युग में हम अगर मकान दुकान फैक्ट्री ऑफिस को तोड़कर पुन: बनवायें? तनिक सोचे कि कितने धन श्रम और समय की बर्बादी होगी। बिना तोड़फोड़ के थोड़ा सा हेरफेर करके बहुत बड़ा लाभ हो सकता है।

प्रस्तुत पुस्तक को ध्यानपूर्वक पढ़ें, समझें और जानकारी प्राप्त करके स्वयं ही दोषों का निवारण करें।



रेमेडियल वास्तुशास्त्र पर आधारित एक सम्पूर्ण पुस्तक जिसके आधार पर अपना जीवन सुखी बना सकते हैं।

राधा पॉकेट बुक्स

A.H.W. HARI SERIES